# सृष्टि रचना

## (विस्तृत)

प्रकाशक व मुद्रक :-
राष्ट्रीय समाज सेवा समिति के सर्व सदस्य
(यह समीति पूर्ण रूप से धार्मिक तथा गैर-राजनीतिक संस्था है।)
पुस्तक संबंधी किसी प्रकार की जानकारी के लिए
सम्पर्क सूत्र :- 09992373237, 09416296541, 09416296397, 09813844747

कुल लागत :-20 रूपये
धर्मार्थ मूल्य :-10 रूपये

# विषय सूची


1. सृजनहार की पहचान 1
2. सृष्टि रचना (भाग-1) 45
    - सृष्टि रचना का ''कबीर सागर'' में प्रमाण 45
3. सृष्टि रचना (भाग-2) 63
4. सर्व सद्ग्रन्थों में सृष्टि रचना का प्रमाण 63
5. आत्माऐं काल के जाल में कैसे फंसी? 70
6. श्री देवी (दुर्गा) की उत्पत्ति 73
7. श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति 85
8. तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित 87
9. ब्रह्म (काल) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा 88
10. ब्रह्मा का अपने पिता (काल) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न 113
11. माता दुर्गा द्वारा ब्रह्मा को शाप देना 114
12. विष्णु का अपने पिता ब्रह्म की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना 116
13. श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का विवाह 117
14. परब्रह्म के सात शंख ब्रह्माण्डों की स्थापना 122
15. वेदों में सृष्टि रचना का प्रमाण 125
    - पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण 125
    - पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण 131
16. पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 138
17. पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 145
18. श्री विष्णु पुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 155
19. श्री विष्णु पुराण के उपरोक्त उल्लेखों का सारांश 170
20. पवित्र श्रीमद्भगवत गीता में सृष्टि रचना का प्रमाण 174
21. सर्व प्रभुओं की आयु 178
22. पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण 183

23. पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी
में सृष्टि रचना 185
24. आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी
में सृष्टि रचना 189
25. आदरणीय नानक साहेब जी की अमृतवाणी में
सृष्टि रचना का संकेत 196
26. राधा स्वामी व धन-धन सतगुरू सच्चा सौदा पंथों के
संतों तथा अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दंत कथा 200
27. प्रमाण के लिए कबीर सागर की कुछ फोटोकापियां 203
28. दस मुकामी रेखता में सत्यलोक में स्त्री-पुरूष हैं
का प्रमाण 216

# ''दो शब्द''

अध्यात्म के अंदर आज तक सब से बड़ी पहेली यह बनी थी कि परमात्मा कैसा है? किसने देखा है? जो भी साधक परमात्मा को अपने अनुभवानुसार परिभाषित करता था। उसका प्रमाण या तो वेदों में बताता या किसी सन्त महात्मा की वाणी का हवाला देता था। अन्ततः परिणाम यह निकलता कि परमात्मा निराकार है। यदि परमात्मा को साकार देखना है तो उसकी रचना को (पृथ्वी, सूर्य आदि, नक्षत्र तथा नदी, पहाड़ आदि-२) ही परमात्मा का साकार रूप मानता रहा है। वास्तविकता इसके विपरीत है।

परमात्मा नराकार है, साकार है। प्रमाण वेदों में तथा उन सन्तों की अमरवाणी में है जिन्होंने परमात्मा को साक्षात देखा है। उन आदरणीय सन्तों के शुभ नाम हैं :-

1. आदरणीय धर्मदास साहेब जी।
2. आदरणीय मलूक दास साहेब जी।
3. आदरणीय दादू साहेब जी।
4. आदरणीय नानक देव साहेब जी।
5. आदरणीय गरीब दास साहेब जी।
(गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, हरियाणा)
6. आदरणीय घीसा दास साहेब जी।
(गाँव-खेखड़ा, जिला-बागपत, उत्तर प्रदेश)

सर्व प्रमाणों को आप जी इसी पुस्तक में पढ़ेंगे।

★ अध्यात्म को पूर्णतया समझने के लिए सर्व प्रथम आपजी को सृष्टि की रचना का ज्ञान होना अनिवार्य है।

सृष्टि रचना अध्यात्म की कूँजी (Key) है। जो इस पुस्तक में विस्तार के साथ लिखी गई है। इस पुस्तक ''सृष्टि की रचना'' को लिखने के पीछे एक विशेष उद्देश्य है कि वर्तमान में परमेश्वर कबीर जी के ज्ञान का सूर्य उदय हो रहा है। सर्व भक्त समाज की जिज्ञासा होगी कि सृष्टि रचना का प्रमाण अमर ग्रन्थ कबीर सागर में पढ़ें तथा सत्य को जानें। कबीर सागर तथा कबीर बानी, कबीर बीजक यह एक सूक्ष्म वेद

**(तत्व वेद) है। इसको समझना जन साधारण के वश के बाहर है।**

**परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है :-**

गुरू बिन काहु न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भूष छड़े मूढ़ किसाना।
गुरू बिन बेद पढ़े जो प्राणी, समझे न सार रहे अज्ञानी।

**इसलिए इस पुस्तक की रचना करनी पड़ी है कि कहीं भक्त समाज कबीर परमेश्वर की वाणी को ठीक से ना समझ कर विपरीत अर्थ जान कर पुनः भ्रमित न हो जाऐं क्योंकि इस सूक्ष्म वेद (कबीर जी के ज्ञान) को उनका कृपा पात्र सन्त ही समझ सकता है।**

**परमेश्वर का वह कृपा पात्र सन्त रामपाल दास जी हैं जिन्होंनें परमेश्वर कबीर जी का ज्ञान सही अर्थों में समझा है।**

**हमने सन्त रामपाल महाराज जी के सत्संग सुने और जैसा कि हमने उनके ज्ञान को समझा उस आधार से यह पुस्तक लिख रहे हैं। हमने सर्व प्रमाणित ग्रन्थों से जाँच करके यह पुस्तक लिखी है।**

**(पवित्र सद्ग्रन्थों से पूर्ण संत की पहचान)**

**वेदों, गीता जी आदि पवित्र सद्ग्रंथों में प्रमाण मिलता है कि जब-जब धर्म की हानि होती है व अधर्म की वृद्धि होती है तथा तत्कालीन नकली संत, महंत व गुरुओं द्वारा भक्ति मार्ग के स्वरूप को बिगाड़ दिया गया होता है। फिर परमेश्वर स्वयं आकर या अपने कृपा पात्र संत को भेज कर सच्चे ज्ञान के द्वारा धर्म की पुनः स्थापना करता है। वह भक्ति मार्ग को शास्त्रों के अनुसार बताता है।**

## ✯ पूर्ण गुरू के क्या लक्षण होते हैं?

## ✯ ''गुरु के लक्षण (पहचान)''

**परमेश्वर कबीर जी ने ''कबीर सागर'' के अध्याय ''जीव धर्म बोध'' में पृष्ठ 1960(2024) पर गुरू के लक्षण बताऐ हैं।**

**चौपाई**

गुरू के लक्षण चार बखाना। प्रथम वेद शास्त्र का ज्ञाना(ज्ञाता)।।
दूसरा हरि भक्ति मन कर्म बानी। तीसरा सम दृष्टि कर जानी।।
चौथा बेद विधि सब कर्मा। यह चारि गुरू गुन जानों मर्मा।।

**भावार्थ :- जो गुरू अर्थात् परमात्मा कबीर जी का कृपा पात्र दास गुरू पद को प्राप्त होगा, उसमें चार गुण मुख्य होंगे।**

''प्रथम बेद शास्त्र का ज्ञाना (ज्ञाता)''

**1. वह सन्त वेदों तथा शास्त्रों का ज्ञाता होगा। वह सर्व धर्मों के शास्त्रों को ठीक-ठीक जानेगा।**

''दूसरा हरि भक्ति मन कर्म बानी''

**2. वह केवल ज्ञान-ज्ञान ही नहीं सुनाऐगा, वह स्वयं भी परमात्मा की भक्ति मन कर्म वाचन से करेगा।**

''तीसरे समदृष्टि करि जानी''

**3. सर्व अनुयाइयों के साथ समान ब्यौहार करेगा, वह समदृष्टि वाला होगा। आप देखते हैं कि आश्रम में सर्व श्रद्धालुओं को एक समान खाना-पीना, एक समान बैठने का स्थान। सन्त रामपाल दास जी के माता-पिता, बहन-भाई, बच्चे जब कभी आश्रम में आते हैं साधारण भक्त की तरह आश्रम में रहते हैं।**

''चौथा बेद विधि सब कर्मा। यह चारि गुरू गुन जानों मर्मा''

**4. चौथा लक्षण गुरू का बताया है कि वह सन्त वेदों में वर्णित भक्ति विधि अनुसार साधना अर्थात् प्रार्थना (स्तुति) यज्ञ अनुष्ठान तथा मंत्र बताएगा। इस प्रकार जिस गुरू में यह चार लक्षण हैं। वह पूर्ण गुरू है। इस मर्म अर्थात् गुप्त भेद को समझो।**

**''संत रामपाल दास'' दिन में तीन बार प्रार्थना, स्तुति कराते हैं :-**

**★ प्रार्थना (स्तुति) दिन में तीन बार (प्रातः, दिन के मध्य में तथा शाम को) करने का वेद में प्रमाण :-**

**★ ऋग्वेद मण्डल 8 सूक्त 1 मन्त्र 29 में कहा है कि तीन समय परमात्मा की स्तुति (प्रार्थना) करनी चाहिए। सुबह परमात्मा का गुणगान, दिन के मध्य में सर्व देवों की स्तुति करनी चाहिए तथा शाम को आरती (स्तुति) करनी चाहिए।**

मम त्वा सूर उदिते मम मध्यन्दिने दिवः ।
मम प्रपित्वे अपि शर्वरे वसवा स्तोमासो अवृत्सत ।।२९।।

पदार्थः—( वसो ) हे व्यापक प्रभो ! ( उदिते, सूरे ) सूर्योदय के समय ( मम स्तोमासः ) मेरी स्तुतियां ( दिवः ) दिन के ( मध्यन्दिने ) मध्य में ( मम ) मेरी स्तुतियां ( शर्वरे, प्रपित्वे, अपि ) रात्रि होने पर भी ( मम ) मेरी स्तुतियां ( त्वा ) आप ( अवृत्सत ) आवर्तित=पुनः-पुनः स्मरण करें ।।२९।।

**★ यह फोटो कापी ऋग्वेद मण्डल 8 सुक्त 1 मंत्र 29 की है। जिसका हिन्दी अनुवाद महर्षि दयानन्द तथा उस के भक्तों द्वारा किया गया है। भले ही कुछ गलत किया है फिर भी स्पष्ट है कि परमात्मा की प्रार्थना (स्तुति) दिन में तीन बार करने का प्रावधान वेद में प्रावधान है।**

**विशेष :- आश्चर्य की बात तो यह है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती अपने आप को वेदों का विद्वान बताते थे और परमात्मा की संध्या स्तुति अर्थात् प्रार्थना दो बार (सुबह और शाम) ही करते थे तथा अपने अनुयाईयों को करने की राय देते थे।**

**प्रमाण :- पुस्तक ''जीवन चरित्र महर्षि दयानन्द सरस्वती'' प्रकाशक :- आर्यसमाज नयाबांस दिल्ली-6 (स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष में) पृष्ठ = 294 पर।**

**★ वेद में प्रमाण है कि तीन समय परमात्मा की स्तुति (प्रार्थना) करनी चाहिए। आप जी ने फोटो कापी में पढ़ा भी है।**

**परम सन्त रामपाल दास जी महाराज प्रारम्भ से ही तीन समय की स्तुति (प्रार्थना) करते हैं तथा अनुयाईयों को करने की राय देते हैं।**

## पूर्ण संत की अन्य पहचान

**उस पूर्ण गुरू की यह भी पहचान होती है कि वर्तमान के धर्म गुरु उसके विरोध में खड़े होकर राजा व प्रजा को गुमराह करके उसके ऊपर अत्याचार करवाते हैं। कबीर साहेब जी अपनी वाणी में कहते हैं कि-**

जो मम संत सत उपदेश दृढ़ावै (बतावै), वाके संग सभि राड़ बढ़ावै।
या सब संत महंतन की करणी, धर्मदास मैं तो से वर्णी।।

**कबीर साहेब अपने प्रिय शिष्य धर्मदास को इस वाणी में ये समझा**

**रहे हैं कि जो मेरा संत सत भक्ति मार्ग को बताएगा उसके साथ सभी संत व महंत झगड़ा करेंगे। ये उसकी पहचान होगी।**

**आदरणीय गरीब दास जी ने भी सन्त की पहचान बताई है कि वह संत सभी धर्म ग्रंथों का पूर्ण जानकार होता है। प्रमाण सतगुरु गरीबदास जी की वाणी में -**

"सतगुरु के लक्षण कहूं, मधूरे बैन विनोद।
चार वेद षट शास्त्र, कहै अठारा बोध।।"

**सन्त गरीबदास जी महाराज अपनी वाणी में पूर्ण संत की पहचान बता रहे हैं कि वह चारों वेदों, छः शास्त्रों, अठारह पुराणों आदि सभी ग्रंथों का पूर्ण जानकार होगा अर्थात् उनका सार निकाल कर बताएगा। यजुर्वेद अध्याय 19 मंत्र 25, 26 में लिखा है कि वेदों के अधूरे वाक्यों अर्थात् सांकेतिक शब्दों व एक चौथाई श्लोकों को पुरा करके विस्तार से बताएगा व तीन समय की पूजा बताएगा। सुबह पूर्ण परमात्मा की पूजा, दोपहर को विश्व के देवताओं का सत्कार व संध्या आरती अलग से बताएगा वह जगत का उपकारक संत होता है।**

**यजुर्वेद अध्याय 19 मन्त्र 25**

सन्धिछेदः— अर्द्ध ऋचैः उक्थानाम् रूपम् पदैः आप्नोति निविदः।
प्रणवैः शस्त्राणाम् रूपम् पयसा सोमः आप्यते।(25)

अनुवादः— जो सन्त (अर्द्ध ऋचैः) वेदों के अर्द्ध वाक्यों अर्थात् सांकेतिक शब्दों को पूर्ण करके (निविदः) आपूर्त्ति करता है (पदैः) श्लोक के चौथे भागों को अर्थात् आंशिक वाक्यों को (उक्थानम्) स्तोत्रों के (रूपम्) रूप में (आप्नोति) प्राप्त करता है अर्थात् आंशिक विवरण को पूर्ण रूप से समझता और समझाता है (शस्त्राणाम्) जैसे शस्त्रों को चलाना जानने वाला उन्हें (रूपम्) पूर्ण रूप से प्रयोग करता है ऐसे पूर्ण सन्त (प्रणवैः) औंकारों अर्थात् ओम्—तत्—सत् मन्त्रों को पूर्ण रूप से समझ व समझा कर (पयसा) दूध—पानी छानता है अर्थात् पानी रहित दूध जैसा तत्व ज्ञान प्रदान करता है जिससे (सोमः) अमर पुरूष अर्थात् अविनाशी परमात्मा को (आप्यते) प्राप्त करता है। वह पूर्ण सन्त वेद को जानने वाला कहा जाता है।

**भावार्थः- तत्वदर्शी सन्त वह होता है जो वेदों के सांकेतिक शब्दों को पूर्ण विस्तार से वर्णन करता है जिससे पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति होती है**

**वह वेद के जानने वाला कहा जाता है। सन्त रामपाल दास महाराज जी ने श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 17 शलोक 23 के सांकेतिक शब्दों तत् तथा सत् का भेद बताया जिसको आज तक कोई आचार्य-शंकराचार्य तथा सन्त व ऋषि-महर्षि नहीं बता पाए।**

यजुर्वेद अध्याय 19 मन्त्र 26

सन्धिछेद :– अश्विभ्याम् प्रातः सवनम् इन्द्रेण ऐन्द्रम् माध्यन्दिनम्
वैश्वदैवम् सरस्वत्या तृतीयम् आप्तम् सवनम् (26)

अनुवाद :– वह पूर्ण सन्त तीन समय की प्रार्थना की साधना बताता है। (अश्विभ्याम्) सूर्य के उदय–अस्त से बने एक दिन के आधार से (इन्द्रेण) प्रथम श्रेष्ठता से सर्व देवों के मालिक पूर्ण परमात्मा की (प्रातः सवनम्) पूजा तो प्रातः काल करने को कहता है जो (ऐन्द्रम्) पूर्ण परमात्मा के लिए होती है। दूसरी (माध्यन्दिनम्) दिन के मध्य में करने को कहता है जो (वैश्वदैवम्) सर्व देवताओं के सत्कार के सम्बधित (सरस्वत्या) अमृतवाणी द्वारा साधना करने को कहता है तथा (तृतीयम्) तीसरी (सवनम्) पूजा शाम को (आप्तम्) प्राप्त करता है अर्थात् जो तीनों समय की साधना भिन्न–२ करने को कहता है वह जगत् का उपकारक सन्त है।

**भावार्थः- जिस पूर्ण सन्त के विषय में मन्त्र 25 में कहा है वह दिन में 3 तीन बार (प्रातः दिन के मध्य-तथा शाम को) साधना करने को कहता है। सुबह तो पूर्ण परमात्मा की पूजा मध्याह्न को सर्व देवताओं को सत्कार के लिए तथा शाम को संध्या आरती आदि को अमृत वाणी के द्वारा करने को कहता है वह सर्व संसार का उपकार करने वाला होता है।**

☞ **सन्त रामपाल जी महाराज प्रारम्भ से ही तीन समय की प्रार्थना अर्थात् परमात्मा की वंदना श्रद्धालुओं को बता रहे हैं। इसलिए सन्त रामपाल दास महाराज जी ही वे सन्त हैं जिनके विषय में सर्व धर्म ग्रन्थ जोर देकर कह रहे हैं।**

## ★ ''पूर्ण गुरू केवल दीक्षित भक्तों से ही दक्षिणा प्राप्त करता है''

यजुर्वेद अध्याय 19 मन्त्र 30

सन्धिछेदः– व्रतेन दीक्षाम् आप्नोति दीक्षया आप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धाम् आप्नोति श्रद्धया सत्यम् आप्यते (30)

अनुवादः— (व्रतेन) दुर्व्यसनों का व्रत रखने से अर्थात् भांग, शराब, मांस तथा तम्बाखु आदि के सेवन से संयम रखने वाला साधक (दीक्षाम्) पूर्ण सन्त से दीक्षा को (आप्नोति) प्राप्त होता है अर्थात् वह पूर्ण सन्त का शिष्य बनता है (दीक्षया) पूर्ण सन्त दीक्षित शिष्य से (दक्षिणाम्) दान को (आप्नोति) प्राप्त होता है अर्थात् सन्त उसी से दक्षिणा लेता है जो उस से नाम ले लेता है। इसी प्रकार विधिवत् (दक्षिणा) गुरूदेव द्वारा बताए अनुसार जो दान—दक्षिणा से धर्म करता है उस से (श्रद्धाम्) श्रद्धा को (आप्नोति) प्राप्त होता है (श्रद्धया) श्रद्धा से भक्ति करने से (सत्यम्) सदा रहने वाले सुख तथा परमात्मा अर्थात् अविनाशी परमात्मा को (आप्यते) प्राप्त होता है।

**भावार्थ :- पूर्ण सन्त उसी व्यक्ति को शिष्य बनाता है जो सदाचारी रहे। अभक्ष्य पदार्थों का सेवन व नशीली वस्तुओं का सेवन न करने का आश्वासन देता है। पूर्ण सन्त उसी से दान ग्रहण करता है जो उसका शिष्य बन जाता है फिर गुरू देव से दीक्षा प्राप्त करके फिर दान दक्षिणा करता है उस से श्रद्धा बढ़ती है। श्रद्धा से सत्य भक्ति करने से अविनाशी परमात्मा की प्राप्ति होती है अर्थात् पूर्ण मोक्ष होता है। पूर्ण संत भिक्षा व चंदा मांगता नहीं फिरेगा।**

कबीर, गुरू बिन माला फेरते गुरू बिन देते दान।
गुरू बिन दोनों निष्फल है पूछो वेद पुराण।।

## ★ ''परम सन्त की अन्य पहचान''

**''पूर्ण सन्त तीन बार में दीक्षा क्रम को पूरा करता है।''**

**पूर्ण गुरू तीन प्रकार के मंत्रों (नाम) को तीन बार में उपदेश करेगा जिसका वर्णन कबीर सागर ग्रंथ पृष्ठ नं. 265 बोध सागर में मिलता है व गीता जी के अध्याय नं. 17 श्लोक 23 व सामवेद संख्या नं. 822 में मिलता है।**

**कबीर सागर में अमर मूल बोध सागर पृष्ठ 265 -**

तब कबीर अस कहेवे लीन्हा, ज्ञानभेद सकल कह दीन्हा।।
धर्मदास मैं कहो बिचारी, जिहिते निबहै सब संसारी।।
प्रथमहि शिष्य होय जो आई, ता कहैं पान देहु तुम भाई।।1।।
जब देखहु तुम दृढ़ता ज्ञाना, ता कहैं कहु शब्द प्रवाना।।2।।
शब्द मांहि जब निश्चय आवै, ता कहैं ज्ञान अगाध सुनावै।।3।।

**दोबारा फिर समझाया है -**

बालक सम जाकर है ज्ञाना। तासों कहहू वचन प्रवाना।।1।।
जा को सूक्ष्म ज्ञान है भाई। ता को स्मरन देहु लखाई।।2।।
ज्ञान गम्य जा को पुनि होई। सार शब्द जा को कह सोई।।3।।
जा को होए दिव्य ज्ञान परवेशा, ताको कहे तत्व ज्ञान उपदेशा।।4।।

**उपरोक्त वाणी से स्पष्ट है कि कड़िहार गुरु (पूर्ण संत) तीन स्थिति में दीक्षा क्रम को पूरा करता सार नाम तक प्रदान करता है। कबीर सागर में तो प्रमाण मैंने बाद में देखा था परंतु सन्त रामपाल दास महाराज जी तो शुरु से ही तीन बार में नामदान की दीक्षा करते आ रहे हैं।**

**हमारे गुरुदेव रामपाल जी महाराज प्रथम बार में श्री गणेश जी, श्री ब्रह्मा सावित्री जी, श्री लक्ष्मी विष्णु जी, श्री शंकर पार्वती जी व माता शेरांवाली का नाम जाप देते हैं। जिनका वास हमारे मानव शरीर में बने चक्रों में होता है। मूलाधार चक्र में श्री गणेश जी का वास, स्वाद चक्र में ब्रह्मा सावित्री जी का वास, नाभि चक्र में लक्ष्मी विष्णु जी का वास, हृदय चक्र में शंकर पार्वती जी का वास, कंठ चक्र में शेरांवाली माता का वास है और इन सब देवी-देवताओं के आदि अनादि नाम मंत्र होते हैं जिनका वर्तमान में गुरुओं को ज्ञान नहीं है। इन मंत्रों के जाप से ये पांचों चक्र खुल जाते हैं। इन चक्रों के खुलने के बाद मानव भक्ति करने के लायक बनता है। सतगुरु गरीबदास जी अपनी वाणी में प्रमाण देते हैं कि :--**

पांच नाम गुझ गायत्री आत्म तत्व जगाओ। ॐ किलियं हरियम् श्रीयम् सोहं ध्याओ।।

**भावार्थ : पांच नाम जो गुझ गायत्री है। इनका जाप करके आत्मा को जागृत करो।**

**विशेष :- कुछ नकली कबीर पंथी भ्रम पैदा करते हैं कि ''ये नाम तो देवी-देवताओं के हैं। कबीर परमेश्वर जी ने तो सत्य पुरूष की भक्ति पर जोर दिया है। यह रामपाल तो काल की भक्ति कराता है।**

**भ्रान्ति निवारण :- हम सब ज्योति निरंजन (काल रूपी ब्रह्म) के लोक में रह रहे हैं। यहीं से सर्व सुविधा प्राप्त कर रहे हैं। ये सुविधा यहाँ के पाँच प्रधान देवी-देवता ही हमें प्रदान करते हैं। ये केवल किया कर्म ही जीव को देते हैं। इसलिए परमेश्वर कबीर जी ने प्रथम इन्हीं से सुविधा**

प्राप्त करने के विशेष नाम (मन्त्र) बताए हैं। जिनके पुकारने (जाप करने) से ये देवी-देवता आकर्षित होते हैं, अधिक प्रभावित होते हैं। इन मन्त्रों के वशीभूत होकर साधक को तुरन्त लाभ देते हैं। यह मन्त्र जाप करना इनकी पूजा नहीं है।

जैसे भैंसे (झोटे) को भैंसा-भैंसा करते रहो, वह बिल्कुल ध्यान नहीं देता। जब उसे उसके विशेष नाम (मन्त्र) से हुर्र-हुर्र से पुकारते हैं तो वह तुरन्त आकर्षित होता है तथा उस मूल मन्त्र से प्रभावित होकर दौड़ा चला आता है। भैंस को गर्भ धारण कराने वाला भैंसे को इसी मूल मन्त्र से पुकारता है। जिसके वशीभूत होकर भैंसा (झोटा) उस ओर दौड़ा चला आता है। भैंस को गर्भ धारण करा कर वह व्यक्ति अपनी भैंस को लेकर चला जाता है। वह भैंसे की पूजा नहीं कर रहा था। वह तो ''दूध'' की पूजा कर रहा था। उस की प्राप्ति का यह तरीका है। भैंस को गर्भ धारण कराने के पश्चात् भैंसा (झोटा) कहीं पर जाए। इसी प्रकार उपरोक्त देवी-देवताओं के मूल मन्त्रों को जाप करने का लाभ जानों। यह पूजा नहीं है, लाभ प्राप्त करना उद्देश्य है।

दूसरी बार में दो अक्षर का जाप देते हैं जिनमें एक ओम् और दूसरा तत् (जो कि गुप्त है उपदेशी को बताया जाता है) जिनको स्वांस के साथ जाप किया जाता है।

तीसरी बार में सारनाम देते हैं जो कि पूर्ण रूप से गुप्त है।

**श्रीमद्भगवत गीता में तीन नाम जाप देने का प्रमाण :--**

**अध्याय 17 का श्लोक 23**

ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः,
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च, विहिताः, पुरा।।23।।

अनुवाद : (ॐ) ब्रह्म का (तत्) यह सांकेतिक मंत्र परब्रह्म का (सत्) पूर्णब्रह्म का (इति) ऐसे यह (त्रिविधः) तीन प्रकार के (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा के नाम सुमरण का (निर्देशः) संकेत (स्मृतः) कहा है (च) और (पुरा) सृष्टीके आदिकालमें (ब्राह्मणाः) विद्वानों ने बताया कि (तेन) उसी पूर्ण परमात्मा ने (वेदाः) वेद (च) तथा (यज्ञाः) यज्ञादि (विहिताः) रचे।

संख्या न. 822 सामवेद उतार्चिक अध्याय 3 खण्ड न. 5 श्लोक न. 8(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य):-

मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नृभिर्यतः परि कोशां असिष्यदत्।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरन्निन्द्रस्य वायुं सख्याय वर्धयन्।।8।।

मनीषिभिः—पवते—पूर्व्यः—कविर्—नृभिः—यतः—परि—कोशान्—असिष्यदत्—त्रि—तस्य—नाम—जनयन्—मधु—क्षरनः—न—इन्द्रस्य—वायुम्—सख्याय—वर्धयन्।

शब्दार्थ—(पूर्व्यः) सनातन अर्थात् अविनाशी (कविर नृभिः) कबीर परमेश्वर मानव रूप धारण करके अर्थात् गुरु रूप में प्रकट होकर (मनीषिभिः) हृदय से चाहने वाले श्रद्धा से भक्ति करने वाले ज्ञानी भक्तात्मा को (त्रि) तीन (नाम) मन्त्र अर्थात् नाम उपदेश देकर (पवते) पवित्र करके (जनयन्) जन्म व (क्षरनः) मृत्यु से (न) रहित करता है तथा (तस्य) उसके (वायुम्) प्राण अर्थात् जीवन—स्वांसों को जो संस्कारवश गिनती के डाले हुए होते हैं को (कोशान्) अपने भण्डार से (सख्याय) मित्रता के आधार से (परि) पूर्ण रूप से (वर्धयन्) बढ़ाता है। (यतः) जिस कारण से (इन्द्रस्य) परमेश्वर के (मधु) वास्तविक आनन्द को (असिष्यदत्) अपने आशीर्वाद प्रसाद से प्राप्त करवाता है।

**भावार्थ :- इस मन्त्र में स्पष्ट किया है कि पूर्ण परमात्मा कविर अर्थात् कबीर मानव शरीर में गुरु रूप में प्रकट होकर प्रभु प्रेमीयों को तीन नाम का जाप देकर सत्य भक्ति कराता है तथा उस मित्र भक्त को पवित्रकरके अपने आर्शिवाद से पूर्ण परमात्मा प्राप्ति करके पूर्ण सुख प्राप्त कराता है। साधक की आयु बढाता है। यही प्रमाण गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में है कि ओम्-तत्-सत् इति निर्देशः ब्रह्मणः त्रिविद्य स्मृतः भावार्थ है कि पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने का ॐ (1) तत् (2) सत् (3) यह मन्त्र जाप स्मरण करने का निर्देश है। इस नाम को तत्वदर्शी संत से प्राप्त करो। तत्वदर्शी संत के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है तथा गीता अध्याय नं. 15 श्लोक नं. 1 व 4 में तत्वदर्शी सन्त की पहचान बताई तथा कहा है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान जानकर उसके पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए। जहां जाने के पश्चात् साधक लौट कर संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मुक्त हो जाते हैं। उसी पूर्ण परमात्मा से संसार की रचना हुई है।**

**विशेष :- उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि पवित्र चारों वेद भी साक्षी हैं कि पूर्ण परमात्मा ही पूजा के योग्य है, उसका वास्तविक नाम कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है तथा तीन मंत्र के नाम का जाप करने से ही पूर्ण मोक्ष होता है।**

## ★ वेदों व श्री मदभगवत् गीता में भक्ति मन्त्रों का उल्लेख :-

सामवेद मन्त्र सं. 822 में स्पष्ट है कि परमात्मा प्राप्ति का मन्त्र तीन नाम का है तथा ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 53 मन्त्र 4-5 में कहा है कि सात नाम का मन्त्र भी परमात्मा प्राप्ति के लिए करना होता है।

यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 तथा 17 में कहा है कि ॐ(ओम्) नाम का जाप ब्रह्म का है। उसको स्मरण करना चाहिए। यह भी कहा है कि पूर्ण परमात्मा तो ब्रह्म से अन्य है, वह गुप्त है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में कहा है कि परमात्मा की सही जानकारी (धीराणाम्) तत्वदर्शी सन्त जानते हैं, उनसे सुनो।

श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का सारांश माना जाता है। गीता का ज्ञान ब्रह्म ने श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके बोला है जिसने गीता अध्याय 8 मन्त्र 13 में स्पष्ट किया है।

गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में अपनी साधना का केवल एक ॐ(ओम्) अक्षर कहा है जिसका स्मरण मरते दम (अन्तिम श्वांस) तक करने की राय दी है। जिससे ओम् (ॐ) की साधना से होने वाली गति (मोक्ष) प्राप्ति बताया जिससे ''ब्रह्म लोक'' प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट किया है कि ब्रह्मलोक तक में गए साधक फिर से लौट कर संसार में जन्म-मरण के चक्र में गिरते हैं। गीता ज्ञान दाता भी जन्म-मरण के चक्र में है। प्रमाण गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 4 तथा 9, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में है। इसलिए गीता ज्ञाना दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी गति (ब्रह्मलोक प्राप्ति) को भी अनुत्तम (अश्रेष्ठ = घटिया) बताया है क्योंकि जब तक जन्म मरण है तब तक परम शान्ति नहीं हो सकती।

इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि हे अर्जुन! यदि तूने परम शान्ति और शाश्वत् स्थान (अमर लोक) प्राप्त करना है तो सर्व भाव से उस परमेश्वर अर्थात् पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में सर्व भाव से जा। जहाँ जाने के पश्चात् साधक पुनः लौट कर संसार में जन्म-मरण के चक्र में नहीं आते। जिस परमेश्वर ने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की है। केवल उसी की भक्ति कर उसी की शरण में रह।

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के मन्त्र का संकेत गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में किया है। ओम्(ॐ)-तत्-सत् यह तीन प्रकार का मन्त्र जाप सच्चिदानन्द घन ब्रह्म (पूर्ण परमात्मा) को पाने का है। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 व 34 में स्पष्ट किया है कि सच्चिदानन्द घन ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म = पूर्ण परमात्मा) अपने मुख कमल से वाणी बोल कर जो ज्ञान सुनाता है। वह सूक्ष्म बेद अर्थात् तत्व ज्ञान है। उस तत्व ज्ञान में यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी विस्तार के साथ दी गई है। उस को जान कर प्राणी सर्व पापों से मुक्त हो जाता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है। गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि उस तत्व ज्ञान से मैं परिचित नहीं हूँ। उस तत्व ज्ञान को तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ।

इसलिए गीता ज्ञाना दाता ब्रह्म ने गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में अपना मन्त्र तो स्पष्ट करके लिख दिया ओम्(ॐ) तथा ''तत्'' जो अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का सांकेतिक मन्त्र है तथा ''सत्'' जो परम अक्षर पुरूष अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म का सांकेतिक मन्त्र है; बताया है। जिनका यथार्थ ज्ञान तत्वदर्शी सन्त के पास है, उससे जानने को कहा है।

## ★ ''पूर्ण संत यज्ञ व दान-धर्म वेद अनुसार कराता है''

श्रीमद्भगवत गीता वेदों का सारांश है। गीता अध्याय 3 श्लोक 10 से 15 तक स्पष्ट किया है कि यज्ञ (धर्म यज्ञ, ध्यान यज्ञ, हवन यज्ञ, प्रणाम यज्ञ तथा ज्ञान यज्ञ के पाँच यज्ञ) भी करने चाहिऐं। जो ये यज्ञ नहीं करता, वह परमात्मा का चोर कहा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 117 मन्त्र 1 से 6 में है। जिनमें कहा है कि साधक को दान करना चाहिए, दान करने से धन कम नहीं होता। जो दान, धर्म, यज्ञ आदि नहीं करता, वह तो पाप ही खाता है अर्थात् पाप का भागी बनता है। यही प्रमाण सूक्ष्मवेद (परमेश्वर की वाणी) में भी है।

कबीर, चीड़ी चौंच भर ले गई, नदी न घट्यो नीर।
दान दिए धन नहीं घटै, कह रहे सन्त कबीर।।

परन्तु दान भी गुरु के माध्यम से करना चाहिए तथा कुपात्र को दिया दान लाभ के स्थान पर हानि ही करता है।

उदाहरण :- एक व्यक्ति ने एक भिखारी को 100 रूपये दान कर दिया। वह भिखारी पहले पाव शराब पीता था और अपने परिवार को तंग करता था। उस दिन उसने आधा बोतल शराब पी ली तथा अपनी पत्नि तथा बच्चों को बहुत ज्यादा पीटा। उसकी पत्नि दुःख के कारण सर्व बच्चों सहित कुएं में गिर गई, पूरा परिवार नष्ट हो गया। इस प्रकार कुपात्र को दिए दान ने एक परिवार का नाश कर दिया। जिस में दान करने वाला भी पाप का भागी बनता है। इसलिए परमेश्वर कबीर जी अपनी वाणी अर्थात् सुक्ष्म वेद में कहते हैं :-

कबीर गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन दोनों निष्फल हैं, चाहे पूछो वेद पुराण।।

★ हवन को ज्योति यज्ञ के द्वारा करने की राय पूर्ण सन्त देता है :-

परम सन्त रामपाल दास जी महाराज ज्योति यज्ञ करने को कहते हैं जिसका प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 10 में है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 10

ज्योति यज्ञस्य पवते मधु प्रियम् पिता देवानाम् जनिता विभू वसूः।
दधाति रत्नम् स्वधयोरपीच्यम् मदिन्तमः मत्सरः इन्द्रियः रसः (10)

अनुवाद :- (विभू वसूः) भिन्न-२ स्थानों ''सत्य लोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अकह लोक'' में निवास करने वाला (प्रियम् पिता) प्रिय परम पिता परमेश्वर (देवानाम् जनिता) सर्व आत्माओं व देव रूप आत्माओं का उत्पति करने वाला है। उस से (मधु) सर्व सुख प्राप्ति के लिए (ज्योतिः यज्ञस्य) ज्योति यज्ञ का अनुष्ठान करें। जो (पवते) पवित्र विधी है अर्थात् आत्मा को शुद्ध करता है।

जिस कारण से साधक को परमेश्वर (स्वधयोरपीच्यम्) इस लोक तथा परलोक के (मदिन्तमः मत्सरः) परम शान्ति रूप पूर्णमोक्ष तथा (इन्द्रियः रस) इन्द्रियों के आनन्द रूप (रत्नम्) पूर्ण मोक्ष रूपी अनमोल रत्न (दधाति) प्रदान करता है।

भावार्थ :- परमात्मा अपने मूल स्थान में भिन्न-२ स्थानों पर भिन्न-२ रूप बनाकर विराजमान है। वह सर्व जीवों व देवताओं का उत्पति कर्ता है। उस परमेश्वर से सुख लाभ के लिए धार्मिक अनुष्ठानों को करना चाहिए। उनमें से एक ज्योति यज्ञ भी है। जिस से परमात्मा साधक को

इस लोक का भी सुख देता है तथा परलोक प्राप्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष रूपी अनमोल रत्न भी प्राप्त कराता है।

★ नोट :- गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूष (प्रभु = ब्रह्म) हैं। 1. क्षर पुरूष = क्षर ब्रह्म यह गीता ज्ञान दाता है, जो केवल 21 ब्रह्मण्डों का प्रभु है, यह स्वयं तथा इसके अंतर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं।
2. अक्षर पुरूष = अक्षर ब्रह्म = परब्रह्म यह सात शंख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्मण्डों के प्राणी नाशवान हैं।
3. ''उत्तम पुरूषः तू अन्य'' जो पुरूषोत्तम है अर्थात् जो परम अक्षर पुरूष है, वह तो क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से अन्य है। वही वास्तव में सर्व पालक तथा अविनाशी है। जिसका प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में भी है।

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में अर्जुन को बताया है कि जो मेरे ज्ञान का आश्रय करते हैं अर्थात् जो तत्वदर्शी सन्त से तत्व ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। वे केवल जरा (वृद्ध अवस्था के कष्ट) तथा मरण (मृत्यु के कष्ट) से मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं क्योंकि वे (तत् ब्रह्म) उस पूर्ण परमात्मा से तथा सर्व आध्यात्मिक ज्ञान से तथा सर्व कर्मों से परिचित होते हैं। वे संसार की तथा स्वर्ग आदि की इच्छा भी नहीं करते।

गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में तुरन्त अर्जुन ने प्रश्न पूछा कि हे भगवन् = ''तत्ब्रह्म'' क्या है? गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह ''परम अक्षर ब्रह्म'' है।

प्रिय पाठकों गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जो ''उत्तम पुरूषः तू अन्यः'' कहा है, वह यह परम अक्षर ब्रह्म है। जिसे सन्त भाषा में अमर पुरूष, सत्य पुरूष आदि उपमात्मक नामों से पुकारा गया है।

☞ अब पुनः उसी प्रसंग पर आते हैं कि तत्वदर्शी सन्त के लक्षणों में कहा गया है कि वह वेद विधि अनुसार भक्ति कर्म करता तथा कराता है। आप जी को जो सन्त रामपाल दास जी से दीक्षित हैं। पता ही है कि आपको प्रथम बार सात मन्त्रों का जाप करने को दिया जाता है तथा सर्व (पाँचों) यज्ञ भी कराई जाती है।

आप जी को दूसरी बार में सत्य नाम जो दो अक्षर का है, जिसमें एक मन्त्र ॐ(ओम्) तथा दूसरा मन्त्र तत् (जो सांकेतिक है जो उपदेशी

हैं उनको पता है) मन्त्र हैं। जो परम अक्षर पुरूष का तीसरी बार आप जी को सत् (जो सांकेतिक है।) दिया जाता है। यह सार नाम (आदिनाम = सार शब्द = विदेह शब्द) भी कहा जाता है। जिस श्रद्धालु को यह ''सत्'' मन्त्र (जो वास्तविक है), दिया गया है, उसको पता है।

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में तत्वदर्शी सन्त अर्थात् परमात्मा के कृपा पात्र सन्त के लक्षण कहे हैं तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वदर्शी सन्त से ज्ञान समझने के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौट कर संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं।

अध्याय 15 का श्लोक 1

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्। १।

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित्।।1।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित पीपल का वृक्ष है, (यस्य) जिसके (छन्दांसि) जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वृक्ष के भी विभाग छोटे-छोटे हिस्से टहनियाँ व (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसाररूप वृक्षको (यः) जो (वेद) इसे विस्तार से जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

गीता अध्याय 15 श्लोक 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं-
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी। ४।

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी।।4।।

अनुवाद : {जब गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 में वर्णित तत्वदर्शी संत मिल जाए} (ततः) इसके पश्चात् (तत्) उस परमेश्वर के (पदम्) परम पद अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भलीभाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गये हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसारमें नहीं आते (च) और (यतः) जिस परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृत्तिः) रचना-सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) उस (आद्यम्)सनातन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) पूजा करें और मैं उसी की शरण में हूँ। पूर्ण निश्चय के साथ उसी परमात्मा का भजन करना चाहिए। (4) इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता (क्षर पुरूष) अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर पुरूष) की पूजा करने को कह रहा है।

★ इस संसार रूपी वृक्ष के सर्व भाग इस प्रकार हैं :-

सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परमात्मा कबीर जी की वाणी जो तत्व ज्ञान है उसमें बताया कि :-

अक्षर पुरूष एक पेड़ है, निरंजन (क्षर पुरूष) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, ये पात रूप संसार।।

भावार्थ है कि वृक्ष का जो भाग अदृश (परोक्ष) है वह तो मूल (जड़ें) है। जो जमीन से तुरन्त बाहर मोटा भाग है वह तना अर्थात् अक्षर पुरूष जानों, तने से कई मोटी डार निकलती हैं, उनमें से एक डार को क्षर पुरूष (क्षर ब्रह्म = ज्योति निरंजन) जानों।

उस डार से मानो तीन शाखाऐं निकली हों, उनको तीनों देव (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जानों।

उन तीनों शाखाओं के जो पत्ते हैं, यह संसार जानों अर्थात् ये तीनों लोकों का संसार (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) जानों।

★ नोट :- इस विषय में विस्तृत जानकारी इसी पुस्तक में आगे सृष्टि रचना में ब्रह्मण्डों व संसार रूपी वृक्ष के चित्रों से प्राप्त करें।

प्रिय पाठकों आप जी ने आज तक बहुत से सन्तों, महन्तों, आचार्यों, शंकराचार्यों तथा ऋषि, महऋषियों के प्रवचन भी सुने होंगे, उनके अनुभव की पुस्तकें भी पढ़ी होंगी। लेकिन जो ज्ञान सन्त रामपाल दास महाराज जी ने भक्तों को बताया है, ऐसा निर्णायक तथा शास्त्रोक्त ज्ञान आप जी

ने न कभी पढ़ा और न सुना होगा।

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि जिस गुरू के बिना वेदों को पढ़कर भी अज्ञानी रहे उनको यथार्थ रूप में परम सन्त रामपाल दास महाराज जी ने जाना तथा आप को बताया है। इसलिए वह गुरू जो परमेश्वर कबीर जी का कृपा पात्र है, परम सन्त रामपाल दास महाराज जी ही हैं। इस पुस्तक में जो भी विवेचन सदग्रन्थों के पृष्ठ व अध्याय का हवाल तथा ज्ञान लिखा है, उसे शत प्रतिशत सत्य जानें। यह हमारा दावा है क्योंकि हमने सर्व ग्रन्थों से स्वयं जाँचा है।

# ''सृजनहार की पहचान''

संसार की रचना परमात्मा ने की है। प्रथम लोकों की रचना की, उसके पश्चात् प्राणियों की उत्पत्ति की। जितने भी देव, ऋषि, संत तथा अन्य सामान्य मानव (नर-नारी) हुए हैं। ये सब परमात्मा की ही रचना है। जो कुछ भी विधान परमात्मा ने बनाया उसी के आधार से अन्य प्राणी अपना परिवार बनाते हैं, वह सब परमात्मा द्वारा रची गई प्रथम रचना के पश्चात् की बात है।

श्री मदभगवत् गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी उत्पत्ति को न तो देव जानते हैं, न महर्षिगण क्योंकि इन सब का उत्पत्तिकर्त्ता मैं ही हूँ।

अध्याय 10 का श्लोक 2

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः।२।

न, मे, विदुः, सुरगणाः, प्रभवम्, न, महर्षयः,
अहम्, आदिः, हि, देवानाम्, महर्षीणाम्, च, सर्वशः।।2।।

अनुवाद : (मे) मेरी (प्रभवम्) उत्पतिको (न) न (सुरगणाः) देवतालोग जानते हैं और (न) न (महर्षयः) महर्षिजन ही (विदुः) जानते हैं, (हि) क्योंकि (अहम्) मैं (सर्वशः) सब प्रकारसे (देवानाम्) देवताओंका (च) और (महर्षीणाम्) महर्षियोंका भी (आदिः) आदि कारण हूँ। (2)

गीता ज्ञान दाता क्षर पुरूष है।(इसे ही ब्रह्म तथा ज्योति निरंजन व काल भी कहते हैं।) यह केवल 21 ब्रह्मण्डों का स्वामी(ईश) है। जितने भी प्राणी इसके लोक (इक्कीस ब्रह्मांडों) में उत्पन्न हुए हैं, वे इसकी उत्पत्ति के पश्चात् इसी से उत्पन्न हुए हैं। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी भी इसी क्षर पुरूष की सन्तान हैं। जैसे पिता की उत्पत्ति सन्तान नहीं जान सकती, दादा जी(पिता का पिता) बता सकता है। इसी प्रकार जो सर्व का दादा (परम पिता) अर्थात् परमेश्वर उत्पत्ति कर्ता है। अपने द्वारा उत्पन्न किए संसार की जानकारी वह सर्व सिरजनहार ही बता सकता है। श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में सृष्टि का विवरण है तथा तीन गुणों (रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी) तथा तीन पुरूषों {1. क्षर पुरूष=ब्रह्म (ज्योतिनिरंजन) जो 21 ब्रह्मण्ड का स्वामी है, 2.

अक्षर पुरूष (परब्रह्म) जो 7 संख ब्रह्मण्डों का स्वामी है, 3. परम अक्षर पुरूष (परम अक्षर ब्रह्म, सत्यपुरूष) जो असंख ब्रह्मण्डों का स्वामी है। जो सर्व का स्वामी यानि मालिक है। वह सर्व का सृजनहार भी है।} उस सर्व सृजनहार ने अपने द्वारा रची सृष्टि को स्वयं ही बताया है। जो पवित्र पुस्तक ''कबीर सागर'' में लिखी है। जो आप जी को इसी पुस्तक में आगे पढ़ने को मिलेगी। पूरा विश्व मानता है कि वेदों में परमात्मा का यथार्थ ज्ञान है जो इस प्रकार है।

परमेश्वर की महिमा वेदों में वर्णित है जिसमें लिखा है कि सर्व उत्पादक परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर विराजमान है। वहां से गति करके अर्थात् चलकर आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है। उनको अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान कराता है तथा आध्यात्मिक सम्पूर्ण ज्ञान अपनी अमृत वाणी द्वारा बोलकर सुनाता है। वह सर्व ज्ञान कवित्व से अर्थात् पदों में दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों तथा चौपाईयों द्वारा सुनाता है। कवियों की तरह आचरण करता है। जिस कारण से एक कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है। परमात्मा ही स्वयं यथार्थ मोक्ष मार्ग को बताता है। जिन मोक्ष मन्त्रों (नामों) का ज्ञान किसी को भी नहीं होता। जो तत्कालीन ग्रन्थों में भी नहीं होते। उनका आविष्कार करता है अर्थात् स्वयं ही यथार्थ मन्त्रों को आकर प्रकट करता है।

कृप्या पढ़ें निम्न वेद मन्त्र प्रमाण के लिए प्रस्तुत हैं :-

**(ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में तथा ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 86 मंत्र 27, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 96 मंत्र 17-18-19-20, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 82 मंत्र 1-2, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 20 मंत्र 1, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 94 मंत्र 1, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 95 मंत्र 2)**

कृपया पढ़ें वेद मन्त्रों में परमेश्वर की महिमा :-

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 54 मंत्र 3

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥

**पदार्थः**—( **सूर्यः, न** ) सूर्य के समान जगत्प्रेरक ( **अयम्** ) यह परमात्मा ( **सोमः, देवः** ) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और ( **विश्वानि, पुनानः** ) सब लोकों को पवित्र करता हुआ ( **भुवनोपरि, तिष्ठति** ) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 54 मंत्र 3 की फोटो कापी है। जिसका अनुवाद महर्षि दयानन्द के भक्तों द्वारा किया गया है। यह वेद सार्वदेशिक

आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली से प्रकाशित है। महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज के व्यक्तियों का मानना है कि परमात्मा एक देशीय नहीं है। वह किसी लोक विशेष में नहीं रहता वह तो सर्व व्यापक है तथा निराकार है। वे यह भी मानते हैं कि वेद ज्ञान सत्य है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 54 मंत्र 3 के मूल पाठ में स्पष्ट है कि परमात्मा (भूवनोपरि तिष्ठति) भावार्थ है कि परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों के ऊपर बैठा है। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 27 में भी यही प्रमाण है कि परमात्मा द्यूलोक (सत्यलोक) के तीसरे पृष्ठ (भाग) पर विराजमान है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 26

इन्दुः पुनानो अति गाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीळन्परि वारमर्षति ॥२६॥

पदार्थः—( यज्वे ) यज्ञ करने वाले यजमानों के लिए परमात्मा ( विश्वानि सुपथानि ) सब रास्तों को ( कृण्वन् ) सुगम करता हुआ ( मृधः ) उनके विघ्नों को ( अतिगाहते ) मर्द्दन करता है और ( पुनानः ) उनको पवित्र करता हुआ और ( निर्निजं ) अपने रूप को ( गाः कृण्वानः ) सरल करता हुआ ( हर्यतः ) वह कान्तिमय परमात्मा ( कविः ) सर्वज्ञ ( अत्योन ) विद्युत् के समान ( क्रीळन् ) क्रीड़ा करता हुआ ( वारं ) वरणीय पुरुष को ( पर्य्यर्षति ) प्राप्त होता है ॥२६॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 26 की फोटो कापी है। महर्षि दयानन्द के भक्तों द्वारा अनुवादित है। ''परमात्मा भक्ति करने वाले भक्तों के सर्व विघ्न नाश करता है। अपने रूप को सरल करता हुआ अर्थात् अपना रूप हल्के तेजयुक्त करके वह कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर विद्युत के समान तीव्रगामी होकर श्रेष्ठ पुरूष को मिलता है।

इस मंत्र के अनुवाद में ''कविः'' का अर्थ सर्वज्ञ किया है। इसका अर्थ कविर्देव करना उचित है। विचार करें तो पता चलता है कि कोई भी ''कवि'' सर्वज्ञ नहीं हो सकता। जैसे कहीं पर ''यजुः'' शब्द लिखा है तो उसको ''यजुर्वेद'' अर्थ करना पड़ता है। यदि ''यजुः'' का अन्य अर्थ कर दिया जो उस मन्त्र का भावार्थ बदल जाने से अनर्थ ही होगा। इसी प्रकार जहां परमात्मा की महिमा का प्रकरण है वहां पर ''कविः'' शब्द का अर्थ ''कविर्देव'' करना उचित होगा। जहां पर किसी काव्यकार का प्रकरण है तो वह प्रकरणवश ''कविः'' का अर्थ काव्यकार तो किया जा सकता है

लेकिन सर्वज्ञ नहीं'' इसलिए यह स्पष्ट है कि वेद कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की महिमा का गुणगान कर रहे हैं।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 27

असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः ।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥

**पदार्थः**—( **उदन्युवः** ) प्रेम की ( **ताः** ) वे ( **शतधाराः** ) सैंकड़ों धाराए ( **असश्चतः** ) जो नानारूपों में ( **अभिश्रियः** ) स्थिति को लाभ कर रही हैं। वे ( **हरिं** ) परमात्मा को ( **अवनवन्ते** ) प्राप्त होती हैं। ( **गोभिरावृतं** ) प्रकाशपुञ्ज परमात्मा को ( **क्षिपः** ) बुद्धिवृत्तियां ( **मृजन्ति** ) विषय करती हैं। जो परमात्मा ( **दिवस्तृतीये पृष्ठे** ) द्युलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है और ( **रोचने** ) प्रकाशस्वरूप है उसको बुद्धिवृत्तियाँ प्रकाशित करती हैं ॥२७॥

★ विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 27 की फोटो कापी है। जो दयानन्द के भक्तों द्वारा अनुवादित है। इसमें स्पष्ट लिखा है कि परमात्मा द्यूः लोक अर्थात् प्रकाशमान सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है। भावार्थ है कि परमेश्वर ऊपर तेजोमय लोक (सत्यलोक) के तीसरे भाग में बैठा है। एक देशीय है साकार है वहाँ से चलकर पृथ्वी लोक पर सत्यज्ञान प्रदान करने आते हैं।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 17

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ।१७॥

**पदार्थः**—( **शिशुम्** ) ''श्यति सूक्ष्मं करोति प्रलयकाले जगदिति शिशुः परमात्मा'' उस परमात्मा को ( **जज्ञानम्** ) जो सदा प्रकट है, ( **हर्यतः** ) जो अत्यन्त कमनीय है, उसको उपासक लोग ( **मृजन्ति** ) बुद्धिविषय करते हैं और ( **शुंभन्ति** ) उसकी स्तुति द्वारा उसके गुणों का वर्णन करते हैं और ( **मरुतः** ) विद्वान् लोग ( **वह्निम्** ) उस गतिशील परमात्मा का ( **गणेन** ) गुणों के गणों द्वारा वर्णन करते हैं और ( **कविः** ) कवि लोग ( **गीर्भिः** ) वाणी द्वारा और ( **काव्येन** ) कवित्व से उसकी स्तुति करते हैं। ( **सोमः** ) सोमस्वरूप ( **पवित्रम्** ) पवित्र वह परमात्मा कारणावस्था में अतिसूक्ष्म प्रकृति को ( **रेभन्, सन्** ) गर्जता हुआ ( **अत्येति**) अतिक्रमण करता है ॥१७॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 17 की फाटो कापी है। जो दयानन्द भक्तों द्वारा अनुवादित तथा प्रकाशित है। इसका अनुवाद पूर्ण रूप से गलत किया है। इस मंत्र में दो बार ''कविः'' शब्द मूल पाठ में लिखा। एक बार के

''कविः'' शब्द का अर्थ ही नहीं किया है।

इसका अनुवाद इस प्रकार बनता है :- परमात्मा तीन प्रकार के शरीर धारण करके सर्व का धारण पोषण तथा सम्भाल करता है। जिसका प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 8 में तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 67 मंत्र 26 में भी है। जो आप आगे इसी पुस्तक में पढोगे।

1. प्रथम स्थिति में परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों के ऊपर एक सिंहासन पर राजा के समान बैठा है। इस शरीर के एक रोम (बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा करोड़ चन्द्रमाओं की रोशनी से भी अधिक है। इसी शरीर को धारण करके परमात्मा ने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की है। सर्व ब्रह्मण्डों का संचालन इसी शरीर में करता है।

2. दूसरी स्थिति में प्रत्येक युग में नवजात शिशु का रूप धारण करके सरोवर में विकसित कमल के फूल पर विराजमान होता है। जिस कारण से परमात्मा ''नारायण'' नाम से भी प्रसिद्ध है। नार=जल, आयण=आने वाला अर्थात् नारायण माने जल पर आकर विराजमान होने वाला नारायण अर्थात् परमात्मा। फिर छोटी ही आयु में अपने यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार पदों में कवित्व से दोहों व चौपाईयों द्वारा बोलता है। जिससे कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है।

3. तीसरी स्थिति में ऋषि या सन्त व जिन्दा महात्मा का रूप धारण करके कभी भी, कहीं भी, किसी दृढ़ भक्त अच्छी आत्मा को अपने निजधाम सत्यलोक से चलकर आकर मिलता है। उन्हें यथार्थ ज्ञान का उपदेश करता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 17 में परमात्मा के दूसरी प्रकार के शरीर में प्रकट होने के विषय में ज्ञान है।

भावार्थ है :- जब परमेश्वर अपने गुणों अनुसार शिशु रूप धारकर संसार में प्रकट होता है उस समय सर्व के हित के लिए यथार्थ ज्ञान लेकर आता है। भक्तों का बहुत बड़ा समूह उसका अनुयाई बनता है। उस तत्वज्ञान को (कविः) कविर्देव (कविर्गिभि) कविर वाणी द्वारा (काव्येना) कवित्व से अर्थात् पदों में शब्दों, दोहों, चोपाईयों तथा दोहावली के माध्यम से (पवित्रम् अत्येति रेभन्) पवित्र वाणी को ऊंचे-२ स्वर में गर्ज-२ कर बोलता है। वह (सन्त् सोम्) सन्त, ऋषि रूप में प्रसिद्ध अमर परमात्मा होता है। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 में कहा है कि ----- कृप्या पढ़ें अगले मंत्र के यथार्थ अनुवाद को।

**ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 18**

ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रंणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ।।१८।।

पदार्थः—( सोमः ) सोमस्वरूप परमात्मा ( सिसासन् ) पालन की इच्छा करता हुआ ( महिषः ) जो महान् है वह परमात्मा ( तृतीयं, धाम ) देवयान और पितृयान इन दोनों से पृथक तीसरा जो मुक्तिधाम है। उसमें ( विराजम् ) विराजमान जो ज्ञानयोगी है उसको ( अनुराजति ) प्रकाश करने वाला है और ( स्तुप ) स्तूयमान है। ( कवीनाम्, पदवीः ) जो क्रान्तदर्शियों की पदवी अर्थात् मुख्य स्थान है और ( सहस्रनीथः ) अनन्त प्रकार से स्तवनीय है, ( ऋषिमनाः ) सर्वज्ञान के साधनरूप मनवाला वह परमात्मा ( यः ) जो ( ऋषिकृत ) सब ज्ञानों का प्रदाता ( स्वर्षाः ) सूर्यादिकों को प्रकाशक है। वह जिज्ञासु के लिए उपासनीय है ।।१८।।

**★ विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 की फोटो कापी है। इसका दयानन्द के भक्तों के द्वारा अनुवाद किया गया है। इस में स्पष्ट है कि परमेश्वर तीसरे मुक्ति धाम में विराजमान है। इसमें अनुवाद कर्त्ता ने महर्षि दयानन्द के अज्ञान को आधार मान कर अर्थ को घुमा दिया है लिख दिया ''जो ज्ञान योगी'' विराजमान है। पाठक जन ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मंत्र 27 तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 54 मंत्र 3 में दयानन्द के भक्तों द्वारा किए अनुवाद में पढ़ चुके हैं कि सर्व लोकों के ऊपरी भाग में तथा द्यूलोक के तीसरे भाग में परमात्मा विराजमान है। ज्ञान योगी नहीं यहां पर अनुवाद कर्ताओं को दयानन्द का सत्यार्थ प्रकाश आड़े आ गया। इसलिए अनर्थ करने की कुचेष्टा की है। जब कि मूल पाठ में ज्ञान योगी का सम्बन्ध नहीं है। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 27 स्वयं अनुवाद में लिखा है कि परमेश्वर द्यूलोक के तीसरे पृष्ठ (भाग) पर विराजमान है। यहां भी इस ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 में यही प्रमाण है।**

**इस ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 का यथार्थ अनुवाद (कृप्या पढ़े संत रामपाल दास जी महाराज द्वारा किया गया।)**

**ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रणीथः पदवीः कवीनाम्।**
**तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप्।।18।।**

ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्राणीथः पदवीः कवीनाम्। तृतीयम् धाम महिषः सिषा सन्त् सोमः विराजमानु राजति स्टुप्।।

अनुवाद – वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि (य) जो पूर्ण परमात्मा विलक्षण बच्चे के रूप में आकर (कवीनाम्) प्रसिद्ध कवियों की (पदवीः) उपाधि प्राप्त करके अर्थात् एक संत या ऋषि की भूमिका करता है उस (ऋषिकृत्) संत रूप में प्रकट हुए प्रभु द्वारा रची (सहस्राणीथः) हजारों वाणी (ऋषिमना) संत स्वभाव वाले व्यक्तियों अर्थात् भक्तों के लिए (स्वर्षाः) स्वर्ग तुल्य आनन्द दायक होती हैं। (सोम) वह अमर पुरुष अर्थात् सत्य पुरुष (तृतीया) तीसरे (धाम) मुक्ति लोक अर्थात् सत्यलोक की (महिषः) सुदृढ़ पृथ्वी को (सिषा) स्थापित करके (अनु) पश्चात् (सन्त्) मानव सदृश संत रूप में होता हुआ (स्टुप) गुबंद अर्थात् गुम्बज में उच्चे टिले रूपी सिंहासन पर (विराजमनु राजति) उज्जवल स्थूल आकार में अर्थात् मानव सदृश तेजोमय शरीर में विराजमान है।

**यही प्रमाण ''पवित्र कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 14 (138) तथा 15 (139) में भी है कि परमात्मा ने पहले सर्व लोक रचे फिर उनमें स्वयं सिहांसन पर विराजमान हुआ।**

**ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 19**

**चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत् ।**
**अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१९।**

पदार्थः—( **अपामूर्मिम्** ) प्रकृति की सूक्ष्म मे सू म शक्तियों के साथ ( **सचमानः** ) जो संगत है और ( **समुद्रम्** ) "सम्यक् द्रवन्ति भूतानि यस्मात् स समुद्रः" जिससे सब भूतों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होता है। वह ( **तुरीयम्** ) चौथा ( **धाम** ) परमपद परमात्मा है। उसको ( **महिषः** ) मह्यते इति महिषः महिष इति महन्नामसु पठितम् नि० ३—१३। महापुरुष उक्त तुरीय परमात्मा का ( **विवक्ति** ) वर्णन करता है। वह परमात्मा ( **चमूसत्** ) जो प्रत्येक बल में स्थित है ( **श्येनः** ) सर्वोपरि प्रशंसनीय है और ( **शकुनः** ) सर्वशक्तिमान् है। ( **गोविन्दुः** ) यजमानों को तृप्त करके जो ( **द्रप्सः** ) शीघ्रगति वाला है ( **आयुधानि, बिभ्रत्** ) अनन्त शक्तियों को धारण करता हुआ इस सम्पूर्ण संसार का उत्पादक है ॥१९॥

**★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 19 की फोटोकापी है जिसका अनुवाद महर्षि दयानन्द के भक्तों द्वारा ही किया गया है। अनुवाद का भावार्थ है कि :- समुद्र का अर्थ है कि वह परमात्मा जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति हुई है, प्रलय तथा लय होता है। जैसे समुद्र सर्व जलों का स्त्रोत माना जाता है। उसी प्रकार इस मन्त्र में परमात्मा को समुद्र सदृश सर्व का उत्पत्ति व पालन आदि**

का स्त्रोत मान कर उपमात्मक शब्द से समुद्र कहा है। (तूरीयं) चौथा (धाम) स्थान या लोक में रहता है। जो महापुरूष होगा वह ''उक्त तुरीय अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन करता है।'' इससे यह भी सिद्ध हुआ कि चौथा लोक है और वहाँ सर्व शक्तिमान परमात्मा रहता है। उसके विषय में कोई महापुरूष ही विस्तार से बताता है। सज्जनों! वह महापुरूष सन्त रामपाल दास जी हैं जिन्होंने सर्व ब्रह्मडों का तथा परमात्मा की स्थिति का विस्तार से वर्णन किया है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 20

मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन्कनिक्रदच्चम्वोऽरा विवेश ॥२०॥

**पदार्थः**—वह परमात्मा ( **यूथा, वृषेव** ) जिस प्रकार एक संघ को उसका सेनापति प्राप्त होता है, इसी प्रकार (**कोशम्** ) इस ब्रह्माण्डरूपी कोश को (**अर्षन्**) प्राप्त होकर ( **कनिक्रदत्** ) उच्च स्वर से गर्जता हुआ ( **चम्वोः** ) इस ब्रह्माण्ड रूपी विस्तृत प्रकृति-खण्ड में ( **पर्याविवेश** ) भली-भांति प्रविष्ट होता है और ( **न** ) जैसे कि ( **मर्यः** ) मनुष्य ( **शुभ्रस्तन्वं, मृजानः** ) शुभ्र शरीर को धारण करता हुआ ( **अत्योन** ) अत्यन्त गतिशील पदार्थों के समान ( **सनये** ) प्राप्ति के लिए ( **सृत्वा**) गतिशील होता हुआ (**धनानाम्**) धनों के लिए कटिबद्ध होता है; इसी प्रकार प्रकृति-रूपी ऐश्वर्य को धारण करने के लिए परमात्मा सदैव उद्यत है ॥२०॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 20 की फोटोकापी है जो महर्षि दयानन्द जी के भक्तों द्वारा अनुवादित है। इससे ही स्पष्ट है कि :- परमात्मा जो ऊपर के लोकों में भिन्न-भिन्न रूप में विराजमान है। वहाँ से गतिशील होकर अर्थात् चल कर आता है, यहाँ काल के ब्रह्मंडों में प्रवेश करता है, {(मर्यो न) मनुष्य के समान (शुभ्रः तन्वं) सुन्दर शरीर} जैसे व्यक्ति सुन्दर वस्त्र पहनता है ऐसे परमात्मा अपने वास्तविक शरीर पर अन्य शरीर(वस्त्र) धारण करके प्रकट होता है। वहाँ भक्तों का अर्थात् उस परमात्मा के अनुयाइयों का बहुत बड़ा समूह तैयार होता है। जिसका मुखिया स्वयं परमात्मा ही सतगुरू रूप में होता है। सेनापति की तरह वह अपने भक्तों का संचालक होता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 20 मंत्र 1

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति ।
साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥१॥

पदार्थः—वह परमात्मा ( कविः ) मेधावी है और ( अव्यः ) सबका रक्षक है ( देववीतये ) विद्वानों की तृप्ति के लिये ( अर्षति ) ज्ञान देता है ( साह्वान् ) सहनशील है ( विश्वाः, स्पृधः ) सम्पूर्ण दुष्टों को संग्रामों में ( अभि ) तिरस्कृत करता है ॥१॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 20 मंत्र 1 की फोटोकापी है जिसमें परमात्मा का नाम भी स्पष्ट है।(कविर्देव) कबीर साहेब अपने जिज्ञासु भक्तों को यथार्थ ज्ञान देकर उनको (वीतये) तृप्त करने के लिए आता है। सर्व नकली सन्तों के साथ ज्ञान युद्ध करके यथार्थ ज्ञान से पराजित करके उनका अन्त करता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मंत्र 1

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ॥१॥

पदार्थः—( सूर्ये ) सूर्य के विषय में ( न ) जैसे ( विशः ) रश्मियां प्रकाशित करती हैं। उसी प्रकार ( धियः ) मनुष्यों की बुद्धियां ( स्पर्धन्ते ) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं। (अस्मिन् अधि ) जिस परमात्मा में ( वाजिनीव) सर्वोपरि बलों के समान ( शुभः ) शुभ बल है वह परमात्मा ( अपोवृणानः ) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ ( पवते ) सबको पवित्र करता है। ( कवीयन् ) कवियों की तरह आचरण करता हुआ ( पशुवर्धनाय ) सर्वद्रष्टृत्व पद के लिए ( व्रजं, न ) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि यस्मिन् तद् व्रजम्' ( मन्म ) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का धाम है ॥१॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मंत्र 1 की फोटो कापी है। जो महर्षि दयानन्द जी के चेलों द्वारा अनुवादित है। जिससे स्पष्ट है कि ''परमात्मा सर्वशक्तिमान है। जैसे जल सर्व को पवित्र करता है। ऐसे परमात्मा अपनी अमृतवाणी से सर्व आत्माओं के हृदय पवित्र करता है तथा कवियों की तरह आचरण करता हुआ घूम-फिर कर अर्थात् इधर-ऊधर जा कर अपनी वाणी का प्रचार कवित्व से अर्थात् पदों, लोक्तीयों, दोहों, शब्दावलियों, चौपाइयों द्वारा आध्यात्म ज्ञान को बोलता है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17-18 में भी है। जो आप जी पहले पढ़ चुके हैं। यही प्रमाण ऋग्वेद

**मण्डल 9 सुक्त 95 मन्त्र 2 में भी है।**

**ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मंत्र 2**

हरिः सृजानः पथ्यांमृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे ॥२॥

पदार्थः—( हरिः ) वह पूर्वोक्त परमात्मा ( सृजानः ) साक्षात्कार को प्राप्त हुआ ( ऋतस्य पथ्यां ) वाक् द्वारा मुक्ति मार्ग की ( इयर्ति ) प्रेरणा करता है। ( अरितेव नावम्) जैसा कि नौका के पार लगाने के समय में नाविक प्रेरणा करता है और ( देवानां देवः ) सब देवों का देव ( गुह्यानि ) गुप्त ( नामाविष्कृणोति ) संज्ञाओं को प्रकट करता है ( बर्हिषि प्रवाचे ) वाणीरूप यज्ञ के लिए ॥२॥

**★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2 की फोटोकापी है। इसके अनुवादक महर्षि दयानन्द के चेले ही हैं। इसमें भी स्पष्ट है कि परमात्मा अपनी वाणी द्वारा अर्थात् अपने मुख कमल से बोलकर उच्चारण करके तत्वज्ञान का प्रचार करके भक्ति करने की प्रेरणा देता है। यही प्रमाण श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी है। जिसमें लिखा है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की विस्तृत जानकारी(ब्रह्मणः मुखे) सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् सर्व देवों का देव(पूर्ण परमात्मा) अपने मुख कमल से वाणी बोल कर बताता है। वह तत्व ज्ञान(सूक्ष्म वेद) कहा जाता है। फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उस तत्वज्ञान को तत्वदर्शी संतों के पास जाकर जानो, मैं नहीं जानता। प्रिय पाठको वह तत्वदर्शी सन्त सन्त रामपाल जी महाराज हैं।**

**नोट :- गीता अनुवादकों ने गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में ''ब्रह्मणः'' शब्द का अर्थ ''वेद'' गलत किया है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में भी ''ब्रह्मण'' शब्द है वहाँ पर इन्होंने ही ''ब्रह्मणः'' शब्द का अर्थ ''सच्चिदानन्द घन ब्रह्म'' ठीक किया है। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी ''ब्रह्मणः'' का अर्थ ''सच्चिदानन्द घन ब्रह्म'' ही जानें क्योंकि ''वेद'' परमात्मा का संविधान है जैसे कि राजा का एक संविधान होता है तो संविधान का अर्थ राजा नहीं किया जा सकता।**

**इस ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मंत्र 2 में यह भी स्पष्ट है कि सब देवों का देव अर्थात् जो सर्व प्रभुओं का भी प्रभु अर्थात् परमेश्वर है। वह मोक्ष मार्ग को ठीक से बताता है तथा (गुह्यानि) गुप्त (नाम अविष्कृणोति) नाम अर्थात्**

मन्त्रों का आविष्कार करता है। परमात्मा ने अपनी वाणी (तत्वज्ञान) में कहा है कि सोहं शब्द हम जग में लाए, सारशब्द हम गुप्त छुपाए। ''सोहं'' शब्द किसी भी ग्रन्थ में नहीं है। यह परमात्मा कविर्देव जी ने बताया है।

उपरोक्त वेद मंत्रों से स्पष्ट है कि परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों के ऊपर नराकार में राजा के समान बैठा है। वहाँ से गति करके अर्थात् चल कर यहाँ पर आते हैं, अच्छी आत्माओं, दृढ़ भक्तों को मिलते हैं तथा उनको वाणी द्वारा बोल कर अध्यात्म ज्ञान बताते हैं। कवियों की तरह आचरण करते हुए घुम-फिर कर यथार्थ भक्ति मंत्र तथा अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान कराते हैं। श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी(ब्रह्मण मुखे) सच्चिदानन्द घन परमेश्वर अपने मुख कमल से वाणी बोल कर बताता है जो सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी कहलाती है उसी को तत्व ज्ञान तथा सूक्ष्म वेद कहते हैं। उसमें विस्तार के साथ आध्यात्मिक ज्ञान की जानकारी है।

❑ परमात्मा तीन प्रकार से शरीर धारण करके संसार का धारण पोषण करता है। देखें दयानन्द के भक्तों द्वारा अनुवादित ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 67 मंत्र 26 तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 8 में जो अग्रलिखित हैं :-

(महर्षि दयानन्द के अनुयाई आर्यसमाजियों के अनुवाद की फोटो कापी) ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 67 मंत्र 26

त्रिभिष्ट्वं देव सवितर्वर्षिष्ठैः सोम धामभिः ।
अग्ने दक्षैः पुनीहि नः ।२६।

पदार्थः—( सोम ) परमात्मन् ! ( अग्ने ) हे ज्ञानस्वरूप ! ( सवितः ) हे सर्वोत्पादक ! ( देव ) हे दिव्य गुणसम्पन्न परमात्मन् ! ( त्वं ) आप ( त्रिभिः ) तीन ( धामभिः ) शरीरों से ( वर्षिष्ठैः ) जो श्रेष्ठ हैं तथा ( दक्षैः ) दक्षतायुक्त हैं उनसे ( नः ) हम लोगों को ( पुनीहि ) पवित्र करिये ।।२६।।

(महर्षि दयानन्द के अनुयाई आर्यसमाजियों के अनुवाद की फोटो कापी)
ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 8

तमीं हिन्वन्त्यग्रुवो धमन्ति बाकुरं दृतिम् ।
त्रिधातुवारणं मधु ॥८॥

पदार्थः—( तं ) उस पुरुष को ( अग्रुवः ) उग्रगतियें ( हिन्वन्ति ) प्रेरणा करती हैं और ( बाकुरं ) भासमान ( दृतिं ) शरीर को वह पुरुष प्राप्त होता है जिसमें ( त्रिधातु ) तीन प्रकार से ( वारणं ) दूसरों का वारण करने वाला (मधु) मधुमय शरीर मिलता है ।८॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 8 की फोटो कापी है इस से पहले ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 67 मंत्र 26 की फोटो कापी है जो दयानन्द भक्तों द्वारा अनुवादित है। इन मंत्रों में भी परमेश्वर सशरीर प्रमाणित है कि परमात्मा का तीन स्थिति में शरीर है। एक शरीर में परमेश्वर द्यूलोक अर्थात् शाशवत् स्थान जिसे सत्यलोक भी कहा है उस लोक में अत्यन्त तेजोमय शरीर युक्त हैं। उस शरीर के एक रोमकूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा करोड़ चन्द्रमाओं के मिले जुले प्रकाश से भी अधिक है। परमेश्वर के शरीर की यह प्रथम स्थिति है। दूसरी स्थिति जो शरीर धारण करने की है उसमें परमेश्वर प्रत्येक युग में एक नवजात शिशु का रूप धारण करके किसी शहर से कुछ दूरी पर वन में जलास्य में जल के ऊपर कमल के फूल पर विराजमान होता है। जिस कारण से परमेश्वर को नारायण भी कहा जाता है। नार का अर्थ जल तथा आयण का अर्थ है अवतरित होना अर्थात् आना। इसलिए परमेश्वर को नारायण कहा जाता है। जिस का अर्थ है जल पर विश्राम करने वाला। तीसरी स्थिति में परमेश्वर सन्त या ऋषि का रूप धारण करके श्रेष्ठ पुरूषों को जो दृढ़ भक्त होते हैं, उनको मिलता है। उनको तत्वज्ञान से परिचित करवाता है। इस मन्त्र में दयानन्द के भक्त अपने कर कमलों से लिख रहे हैं कि परमात्मा सुन्दर शरीर धारण करता है। वेद ज्ञान सही है परन्तु महर्षि दयानन्द का ''सत्यार्थ प्रकाश'' झूठा है। जिस में कहा है कि परमात्मा निराकार है। आप जी स्वयं देखें इन वेद मन्त्रों में स्पष्ट है कि परमेश्वर तीन स्थिति में शरीर धारण करता है। पुरूष का आध्यात्मिक अर्थ परमेश्वर है। महर्षि दयानन्द के द्वारा अनुवादित यजुर्वेद अध्याय 40

मंत्र 17 में दयानन्द ने ''पुरूष'' का अर्थ पूर्ण परमात्मा किया है तथा ''ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका'' पृष्ठ 125 पर ''पुरूष'' का अर्थ किया है कि ''पुरूष'' उस को कहते हैं जो सर्वशक्तिमान ईश्वर कहाता है। इसलिए पाठकों से निवेदन है कि ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 8-9 में अनुवाद कर्ताओं ने जो चतुरता की है उसे समझें तथा पुरूष का अर्थ परमेश्वर जानें।

❑परमात्मा किस प्रकार तीन शरीर धारण करता है ? कृप्या पढ़ें निम्न व्याख्या :-

1. अत्यधिक प्रकाशयुक्त मानव सदृश शरीर में परमेश्वर सत्यलोक में विराजमान हैं। जिसके एक रोम कूप का प्रकाश करोड़ों सूर्यों से भी अधिक है।

2. शिशु रूप में पृथ्वी पर प्रकट होता है। लीलामय शरीर से बड़ा होता है, फिर तत्वज्ञान प्रचार करता है।

3. ऋषि या सन्त रूप में कहीं भी प्रकट होकर दृढ़ भक्तों को मिलता है तथा तत्वज्ञान प्रचार करता है।

❑जब परमात्मा दूसरे प्रकार का शरीर धारण करके अर्थात् शिशु रूप धारण करके पृथ्वी पर प्रकट होता है उस समय उनके पालन की लीला कंवारी गौवों द्वारा होती है। कृप्या पढ़ें ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9 में जो निम्न हैं :-

(महर्षि दयानन्द के अनुयाई आर्यसमाजियों के अनुवाद की फोटो कापी)
ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9

अभी॑ईममघ्न्या उत श्रीणन्ति॑ धेनवः शिशु॑म् ।
सोम॒मिन्द्रा॑य पात॑वे ॥९॥

पदार्थः—( इमं ) उस ( सोमं ) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को ( शिशुं ) कुमारावस्था में ही ( अभि ) सब प्रकार से ( अघ्न्याः ) अहिंसनीय ( धेनवः ) गौवें ( श्रीणन्ति ) तृप्त करती हैं ( इन्द्राय ) ऐश्वर्य्यं की ( पातवे ) वृद्धि के लिये। ( उत ) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्य्यं की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं ॥९॥

★ विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9 की फोटो कापी है जो महर्षि दयानन्द के भक्तों द्वारा अनुवादित है। इसमें परमेश्वर

के दूसरे प्रकार के शरीर की स्थिति का वर्णन है। जिस शरीर में परमात्मा शिशु रूप धारण करके वन (जंगल) में जल पर प्रकट होता है। उस समय उस बालक वेशधारी परमात्मा के पोषण की लीला कंवारी गौवों द्वारा होती है। यही प्रमाण पवित्र ''कबीर सागर'' नामक सद्ग्रंथ में है जो आदरणीय धर्मदास जी द्वारा लगभग सन् 1520 के आसपास लिखा गया था। उसमें लिखा है कि परमेश्वर कबीर जी शिशु रूप धारण करके 'लहरतारा' नामक सरोवर में कमल के फूल पर अपने द्यूलोक (सतलोक) से चलकर आकर विराजमान हुए। वहां उन्हें एक निःसन्तान जुलाहा दम्पति घर ले आया। बाल वेशधारी परमेश्वर ने कई दिनों तक कुछ नहीं खाया-पीया। फिर ऋषि रामानन्द जी के बताए अनुसार तथा एक सन्त रूप में प्रकट शिव जी के अनुसार कँवारी गाय लाई गई। परमेश्वर कबीर जी के आशीर्वाद से उस कँवारी गाय (बछिया) ने दूध दिया। वह बालक कविर्देव ने पीया। वह बछिया प्रतिदिन दूध देने लगी। इस प्रकार बालक रूप में लीला कर रहे परमेश्वर की परवरिश की लीला हुई।

प्रमाण के लिए कृपया पढ़ें फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''ज्ञान सागर'' के पृष्ठ 74 की इसी पुस्तक के पृष्ठ 22 पर जिसमें स्पष्ट है कि परमेश्वर कबीर जी ने वही लीला की की थी जिसकी वेद गवाही दे रहे हैं कि परमात्मा ऐसी लीला करता है। इससे स्वसिद्ध है कि ''परमेश्वर कबीर है'' (Kabir is God)

इन उपरोक्त वेद मंत्रों में स्पष्ट है कि परमेश्वर एक देशीय है, अर्थात् एक स्थान पर तीसरे मुक्ति धाम में, अर्थात् द्युलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है। वहाँ से गति करके आता है। जैसे व्यक्ति शुभ्र शरीर धारण करके आता है। परमेश्वर राजा के समान दर्शनीय भासमान शरीर धारण करता है। शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है। उस समय परमात्मा की परवरिश की लीला कंवारी गायों द्वारा होती है। उपदेश करने की इच्छा से अर्थात् तत्व ज्ञान देने के लिए स्वयं आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता हैं। वह नराकार अर्थात् मनुष्य सदृश है।

इन उपरोक्त वेद मन्त्रों की फोटों कापियों में आप को स्पष्ट हुआ कि वेदों में परमेश्वर साकार है। वह राजा के समान दर्शनीय अर्थात् नराकार अर्थात् मनुष्य सदृश है, देखा जाने वाला है। अपने द्युलोक के तीसरे स्थान पर एक जगह विराजमान है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ

प्रकाश में समुल्लास 9 में लिखा है कि परमात्मा किसी एक स्थान पर विराजमान नहीं है। वह विभु है। जबकि वेद बताते हैं कि परमात्मा एक स्थान पर विराजमान है। एक देशीय है। इस से सिद्ध हुआ कि महर्षि दयानन्द का 'सत्यार्थ प्रकाश' वेद ज्ञान विरूद्ध कोरा अज्ञान है। करौंथा काण्ड का यही कारण था कि आर्य समाज के आचार्यों ने महर्षि दयानन्द के अनुयाइयों को भ्रमित किया कि रामपाल दास जी महाराज जनता में भ्रम फैला रहा है। महर्षि दयानन्द की छवि धूमिल कर रहा है। वह परमात्मा को साकार बता रहा जबकि वेदों में परमात्मा निराकार लिखा है। अब इन आचार्यों को चूल्लू भर पानी में डूब कर मर जाना चाहिए या संत रामपाल दास जी महाराज के पास आकर अपना कल्याण करवाना चाहिए। जबकि वेदों में परमात्मा साकार है और इन्हीं के कर कमलों से वेदों का अनुवाद है। इसका परिणाम यह है कि महर्षि दयानन्द की हार हुई व संत रामपाल दास जी महाराज की जीत हुई।

(महर्षि दयानन्द के अनुयाई आर्यसमाजियों के अनुवाद की फोटो कापी)
ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मन्त्र 1

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ॥१॥

पदार्थः—( सूर्य्ये ) सूर्य के विषय में ( न ) जैसे ( विशः ) रश्मियां प्रकाशित करती हैं। उसी प्रकार ( धियः ) मनुष्यों की बुद्धियां ( स्पर्धन्ते ) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं। (अस्मिन् अधि ) जिस परमात्मा में ( वाजिनीव) सर्वोपरि बलों के समान ( शुभः ) शुभ बल है वह परमात्मा ( अपोवृणानः ) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ ( पवते ) सबको पवित्र करता हैं। ( कवीयन् ) कवियों की तरह आचरण करता हुआ ( पशुवर्धनाय ) सर्वद्रष्टृत्व पद के लिए ( व्रजं, न ) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि यस्मिन् तद्व्रजम्' ( मन्म ) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का धाम है ॥१॥

★ विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मन्त्र 1 की फोटो कापी है। जो दयानन्द भक्तों द्वारा अनुवादित हैं। इस मन्त्र के अनुवाद में ढेर सारी त्रुटियाँ हैं। फिर भी इन्हीं के जल में तुम्बा छुपाने के प्रयत्न के पश्चात् भी स्पष्ट है कि परमेश्वर (कवियन् न व्रजम्) कवियों के समान आचरण करता हुआ विचरता है। एक स्थान से दूसरे स्थान को तत्वज्ञान प्रचार हेतु जाता हैं। इस से परमेश्वर साकार, नराकार सिद्ध

हुआ। अब कहाँ गया महर्षि दयानन्द का अज्ञान जो कहता था कि वेदों में परमेश्वर निराकार है। एक देशीय नहीं है। वेदों के प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि महर्षि दयानन्द को वेदों का ज्ञान नहीं था इसलिए वह महर्षि भी नहीं था।

(महर्षि दयानन्द के अनुयाई आर्यसमाजियों के अनुवाद की फोटो कापी)

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 18

ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रंणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषांसन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ॥१८॥

पदार्थः—( सोमः ) सोमस्वरूप परमात्मा ( सिषासन् ) पालन की इच्छा करता हुआ ( महिषः ) जो महान् है वह परमात्मा ( तृतीयं, धाम ) देवयान और पितृयान इन दोनों से पृथक तीसरा जो मुक्तिधाम है। उसमें ( विराजम् ) विराजमान जो ज्ञानयोगी है उसको ( अनुराजति ) प्रकाश करने वाला है और ( स्तुप ) स्तूयमान है। ( कवीनाम्, पदवीः ) जो क्रान्तदर्शियों की पदवी अर्थात् मुख्य स्थान है और ( सहस्रनीथः ) अनन्त प्रकार से स्तवनीय है, ( ऋषिमनाः ) सर्वज्ञान के साधनरूप मनवाला वह परमात्मा ( यः ) जो ( ऋषिकृत ) सब ज्ञानों का प्रदाता ( स्वर्षाः ) सूर्यादिकों को प्रकाशक है। वह जिज्ञासु के लिए उपासनीय है ॥१८॥

★ विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 की फोटो कापी है। इसका दयानन्द के भक्तों के द्वारा अनुवाद किया गया है। इस में स्पष्ट है कि परमेश्वर तीसरे मुक्ति धाम में विराजमान है। इसमें अनुवाद कर्त्ता ने महर्षि दयानन्द के अज्ञान को आधार मान कर अर्थ को घुमा दिया है लिख दिया ''जो ज्ञान योगी'' विराजमान है। पाठक जन ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मंत्र 27 में दयानन्द के भक्तों द्वारा किए अनुवाद में पढ़ चुके हैं कि द्यूलोक के तीसरे भाग में परमात्मा विराजमान है। ज्ञान योगी नहीं यहां पर अनुवाद कर्ताओं को दयानन्द का सत्यार्थ प्रकाश आड़े आ गया। इसलिए अनर्थ करने की कुचेष्टा की है। जब कि मूल पाठ में ज्ञान योगी का सम्बन्ध नहीं है। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 27 स्वयं अनुवाद में लिखा है कि परमेश्वर द्यूलोक के तीसरे पृष्ठ (भाग) पर विराजमान है। यहां भी वेद मंत्र 18 में यही प्रमाण है।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 का यथार्थ अनुवाद कृप्या पढ़े संत रामपाल दास जी महाराज द्वारा किया गया।

**ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रणीथः पदवीः कवीनाम्।**
**तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप्।।18।।**

ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्राणीथः पदवीः कवीनाम्। तृतीयम् धाम महिषः सिषा सन्त् सोमः विराजमानु राजति स्टुप्।।

अनुवाद – वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि (य) जो पूर्ण परमात्मा विलक्षण बच्चे के रूप में आकर (कवीनाम्) प्रसिद्ध कवियों की (पदवीः) उपाधि प्राप्त करके अर्थात् एक संत या ऋषि की भूमिका करता है उस (ऋषिकृत्) संत रूप में प्रकट हुए प्रभु द्वारा रची (सहस्राणीथः) हजारों वाणी (ऋषिमना) संत स्वभाव वाले व्यक्तियों अर्थात् भक्तों के लिए (स्वर्षाः) स्वर्ग तुल्य आनन्द दायक होती हैं। (सोम) वह अमर पुरुष अर्थात् सत्य पुरुष (तृतीया) तीसरे (धाम) मुक्ति लोक अर्थात् सत्यलोक की (महिषः) सुदृढ़ पृथ्वी को (सिषा) स्थापित करके (अनु) पश्चात् (सन्त्) मानव सदृश संत रूप में होता हुआ (स्टुप) गुबंद अर्थात् गुम्बज में उच्चे टिले रूपी सिंहासन पर (विराजमनु राजति) उज्जवल स्थूल आकार में अर्थात् मानव सदृश तेजोमय शरीर में विराजमान है।

**भावार्थ - ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 17 का सम्बंध ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9 से है। जिसमें कहा गया है कि जब परमेश्वर लीला करने के लिए शिशु रूप धारण करके संसार में आते हैं। तब उनकी परवरिश की लीला कंवारी गायों द्वारा होती है। इस मंत्र में कहा है कि कविर्देव शिशु रूप धारण कर लेता है। लीला करता हुआ बड़ा होता है। कविताओं द्वारा तत्वज्ञान वर्णन करने के कारण कवि की पदवी प्राप्त करता है अर्थात् उसे ऋषि, संत व कवि कहने लग जाते हैं, वास्तव में वह पूर्ण परमात्मा कविर् ही है। इसकी पुष्टि ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मंत्र 1 ने भी की है कि परमात्मा कवियों की तरह आचरण करता है। उसके द्वारा रची अमृतवाणी कबीर वाणी (कविर्वाणी) कही जाती है, जो भक्तों के लिए स्वर्ग तुल्य सुखदाई होती है। वही परमात्मा तीसरे मुक्ति धाम अर्थात् सत्यलोक की स्थापना करके एक गुबंद अर्थात् गुम्बज में सिंहासन पर तेजोमय मानव सदृश शरीर में आकार में विराजमान है।**

**इस मंत्र में ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 18 तीसरा धाम सतलोक को कहा है। जैसे एक ब्रह्म का लोक जो इक्कीस ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है, दूसरा परब्रह्म का लोक जो सात संख ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है, तीसरा**

**परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का सतलोक है क्योंकि पूर्ण परमात्मा ने सत्यलोक में सत्यपुरूष रूप में विराजमान होकर नीचे के लोकों की रचना की है। इसलिए नीचे के लोकों की गणना की गई है।**

**यही आँखों देखा प्रमाण सन्त गरीब दास जी ने बताया है** अर्स कुर्स पर सफेद गुम्बज है जहाँ सतगुरु का डेरा। **भावार्थ यह है कि ऊपर आसमान के ऊपरी छोर पर कबीर परमेश्वर जी एक सफेद गुबंद (गुम्बज) में रहते हैं।**

**ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मन्त्र 27 में अनुवादकर्ता की बुद्धि पर पत्थर डाल कर परमेश्वर ने अनुवाद ठीक करा दिया। वहाँ स्पष्ट लिखा है ''परमात्मा द्यूलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है।'' एक देशीय है साकार है देखें फोटो कापी ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मंत्र 27 की इसी पुस्तक के पृष्ठ 4 पर। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 82 मन्त्र 1 में स्पष्ट है कि परमात्मा राजा के समान दर्शनीय है। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 8 में तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 67 मंत्र 26 में स्पष्ट है कि पुरूष अर्थात् परमात्मा भासमान शरीर को प्राप्त होता है। इन ऋग्वेद मण्डलों के मन्त्रों के अनुवाद कर्त्ता भी दयानन्द के भक्त ही हैं। परमेश्वर ने सच्चाई सामने ला दी।**

**वह अमर परमात्मा जो अपनी महिमा की अमृत वाणी को कवियों के समान बोलता है। उस कारण से वह प्रसिद्ध कवियों में से एक प्रसिद्ध कवि भी कहलाता है। परन्तु वह केवल कवि ही नहीं, वह कवि परमात्मा (जिसे वेदों में कविर्देव कहा है) होता है। यही उसका वास्तविक गुप्त श्रेष्ठ नाम है। कविर्देव जिसको सन्त भाषा में कबीर परमेश्वर कहते हैं। उस (ऋषिकृत्) कविर्देव द्वारा ऋषि या संत रूप में प्रकट होकर अपने मुख कमल से उच्चारण करके बनाई गई अमृत वाणी उस परमेश्वर के अनुयाइयों के लिए (स्वर्षाः) आनन्द दायक होती हैं। वह कविर्देव अर्थात् कविर परमेश्वर तीसरे मुक्ति धाम में विराजमान है। वह एक (स्तुप्) गुमंद में तेजोमय रूप में प्रकाशमान है। उस महान् स्थान अर्थात् तेजोमय तीसरे धाम की बहुत बड़ी पृथ्वी को बनाकर उस पर विराजमान है।**

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 20

मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन्कनिक्रदच्चम्वोःरा विवेश ॥२०॥

**पदार्थः**—वह परमात्मा ( **यूथा, वृषेव** ) जिस प्रकार एक संघ को उसका सेनापति प्राप्त होता है, इसी प्रकार (**कोशम्** ) इस ब्रह्माण्डरूपी कोश को (**अर्षन्**) प्राप्त होकर ( **कनिक्रदत्** ) उच्च स्वर से गर्जता हुआ ( **चम्वोः** ) इस ब्रह्माण्ड रूपी विस्तृत प्रकृति-खण्ड में ( **पर्याविवेश** ) भली-भांति प्रविष्ट होता है और ( **न** ) जैसे कि ( **मर्यः** ) मनुष्य ( **शुभ्रस्तन्वं, मृजानः** ) शुभ्र शरीर को धारण करता हुआ ( **अत्योन** ) अत्यन्त गतिशील पदार्थों के समान ( **सनये** ) प्राप्ति के लिए ( **सृत्वा**) गतिशील होता हुआ (**धनानाम्**) धनों के लिए कटिबद्ध होता है; इसी प्रकार प्रकृति-रूपी ऐश्वर्य को धारण करने के लिए परमात्मा सदैव उद्यत है ॥२०॥

★ विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 20 की फोटो कापी है जो दयानन्द भक्तों के द्वारा अनुवादित है। इस में भी अड़ंगा डालने का भरसक प्रयत्न किया है। फिर भी सच्चाई जल में छुपाए तूम्बे के समान ऊपर ही आती है। इस में स्पष्ट है कि (मर्यः न शुभ्रः तन्वम् मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्) इसका अर्थ है कि परमात्मा भक्ति धन के पूर्वजन्म के धनवानों को अर्थात् अच्छी आत्माओं को जो दृढ़भक्त हैं उनको मनुष्य के समान उज्जवल सफेद शरीर धारण करके अत्यन्त तीव्र गति से चलने वाले पदार्थ के समान अर्थात् विद्युत जैसी गति से अपने द्युलोक अर्थात् सत्यलोक से चलकर स्वयं आकर प्राप्त होते हो।

कलयुग में जिन अच्छी आत्माओं को परमात्मा मिले, उनमें से कुछेक के शुभनाम इस प्रकार हैं :- 1. आदरणीय धर्मदास साहेब जी 2. आदरणीय मलूकदास साहेब जी 3. आदरणीय नानकदेव साहेब जी(सिक्ख धर्म के प्रवर्तक) 4. आदरणीय दादू साहेब जी 5. आदरणीय गरीबदास साहेब जी (गाँव-छुड़ानी जिला- झज्जर हरियाणा प्रांत वाले) 6. आदरणीय घीसा साहेब जी(गाँव-खेखड़ा जिला-बागपत उत्तर प्रदेश वाले) 7. स्वामी रामानन्द जी आचार्य काशी वाले।

कलयुग के प्रथम चरण में सन् 1398 विक्रमी संवत 1455 में ज्येष्ठ मास की पूर्णमासी को ब्रह्म मुहूर्त(सूर्य उद्य से 1 $^{1}/_{2}$ घण्टा पहले) में काशी शहर में एक ''लहर तारा'' नामक सरोवर में कमल के फूल पर अपने ऊपर के

लोक(सत्य लोक) से चल कर आकर शिशु रूप धार कर विराजमान हुए। उस समय एक अष्टानन्द नाम के ऋषि उस लहर तारा सरोवर में स्नान करके किनारे पर बैठ कर अपनी साधना कर रहे थे।

आकाश से एक प्रकाश पुंज आता दिखाई दिया। उस प्रकाश को ऋषि अष्टानन्द जी की चर्मदृष्टि सहन नहीं कर सकी। ज्योंहि उसकी आँखें बन्द हुई तो एक नवजात शिशु दिखाई दिया। पुनः आँखें खोली तो वह प्रकाश पूरे लहर तारा तालाब पर फैला था तथा एक कोने में सिमटता दिखाई दिया। फिर कुछ दिखाई नहीं दिया। ऋषि अष्टानन्द जी के गुरू स्वामी रामानन्द जी थे। ऋषि अष्टानन्द जी वहाँ से तुरन्त ऊठ कर अपने गुरू जी के पास जाकर सारा वृत्तांत सुनाया। स्वामी रामानन्द जी ने कहा बेटा ऐसे लक्षण उस समय होते हैं जब ऊपर के लोकों से कोई अवतारी शक्ति पृथ्वी पर जन्म लेती है। कुछ दिनों में अपने आप जनता के सामने आ जाएगा। स्वामी रामानन्द जी वैष्णों साधु थे, श्री विष्णु को ईष्ट रूप में पूज्य मानते थे। इसलिए स्वामी रामानन्द जी जिस भगवान के पुजारी थे वे माता के गर्भ से जन्मते हैं। स्वामी जी को जितना ज्ञान था अपने शिष्य ऋषि अष्टानन्द जी की शंका-समाधान कर दिया।

प्रतिदिन की तरह एक जुलाहा तथा उसकी पत्नी उसी लहर तारा सरोवर पर स्नान करने को आए। उस समय उनकी आयु 60-65 वर्ष के मध्य

थी। वे निःसंतान थे।(ये दोनों आत्मा द्वापर युग में सुदर्शन भक्त के माता-पिता थे, भक्त सुदर्शन की प्रार्थना पर उनके माता-पिता का कल्याण करने के उद्देश्य से उनको प्राप्त होने की लीला की थी।) सरोवर में कमल के फूल पर नवजात शिशु को पाकर दोनों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

जुलाहा नीरू समाज के भय से कुछ दुःखी होकर बच्चे को वहीं छोड़ना चाहता था परन्तु अपनी पत्नी नीमा की जिद के आगे विवश होकर उस शिशु रूप धारी बालक को घर ले गए। 25 दिन तक कुछ भी आहार नहीं किया। दोनों बहुत चिन्तित हुए। ये दोनों उसी जन्म में ब्राह्मण कुल में जन्मे थे। नीरू का नाम गौरीशंकर ब्राह्मण तथा नीमा का नाम सरस्वती ब्राह्मणी था। मुसलमानों ने जबरदस्ती उनको मुसलमान बना दिया था। वे भगवान शिव के पक्के भक्त थे। मुसलमान बनने के बाद भी वे आपत्ति में भगवान शिव को ही याद किया करते थे। उस दिन जब बालक रूप धारी परमेश्वर कबीर जी 25 दिन के लीलामय रूपी शरीर के थे तो नीमा ने मन में ठान लिया था कि यदि यह बालक मर गया तो मैं भी साथ मरूंगी।

परमेश्वर की प्रेरणा पाकर भगवान शिव एक साधु रूप धारण करके वहाँ प्रकट हुएं सर्व स्थिति से परिचित होकर लड़के को गोद में लेकर शिवजी ने कहा कि यह बालक मरने वाला नहीं है। परन्तु नीमा को संतोष नहीं हुआ तब शिशु रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने शिवजी से कहा कि मैं कंवारी गाय का दूध पीता हूँ। आप गाय बछिया मंगाओ और अपने आशीर्वाद से उसका दूध

निकालो। नीरू को बुला कर एक बछिया गाय मंगाई तथा एक छोटा कोरा कलश कुम्हार से मंगाया। उस कंवारी गाय ने दूध दिया। परमेश्वर कबीर जी ने दूध पीना आरम्भ किया। नीरू नीमा की आपत्ति का समाधान हुआ। (कंवारी गाय का दूध पीने का प्रमाण = कबीर सागर के ज्ञान सागर अध्याय के पृष्ठ 74/80 पर है।)

( ७४ ) 80 ज्ञानसागर

भिक्षा दै प्रमुदित चलि आई। इस्तामल को खोज न पाई ॥
वाचा बन्ध तहाँ पुनि आयो। काल कष्ट मैं तोर मिटायो ॥
सुन जुलहा मन भयो आनंदा। जिमि चकोर पायो निशि चंदा॥
ले सुत चलै हर्ष मन कीन्हा। तासों पुनि अस बोलेहि लीन्हा॥
आगिल जन्म जब होइ तुम्हारा। तुम्हें पठायब यम तैं न्यारा ॥

साखी–सुत काशी को लै चले, लोग देखन तहँ आव ॥
अन्न पानी भक्ष नहिं, जुलहा शोक जनाव ॥

चौपाई

तब जुलहा मन कीन्ह तिवाना। रामानन्द सौं कहि उत्पाना ॥
मैं सुत पायो बड़ गुणवंता। कारण कौन भखै नहिं संता ॥
रामानन्द ध्यान तब धारा। जुलहा सो तब वचन उचारा ॥
पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण जाती। हरि सेवा कीन्हेसि भलि भांती॥
कछु तुव सेवा हरिकी चूका। तातैं भायो जुलहा को रूपा ॥
प्रीति प्रभू गहि तोरी लीन्हा। तातैं उद्यानमें सुत तोहि दीन्हा॥

नूरी वचन

हे प्रभु जस कीन्ह्यो तस पायो। आरत हो तुव दर्शन आयो ॥
सो कहिये उपाय गुसाई। बालक क्षुधावंत कछु खाई ॥
रामानंद अस युक्ति विचारा। तुम सुत कोई ज्ञानी अवतारा ॥
बछिया जाही बैल नहिं लागा। सो ले ठाढे करै तेहि आगा ॥

साखी–दूध चलै तेहि थन तें, दूधहि धरौ छिपाइ ॥
क्षुधावंत जब होवै, ता कहँ देउ खवाइ ॥

चौपाई

जुलहा इक बछिया लै आवा। चल्यो दूत कोउ मर्म न पावा ॥
चल्यो दूत जुलहा हरषाना। राख छिपाइ काहू नहिं जाना ॥
सुन भामिनि आगे चल आवा। सो लै जाइ कोई भेद न पावा ॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''ज्ञान सागर'' के पृष्ठ

**74(80) की है। इसमें स्पष्ट प्रमाण है कि स्वामी रामानन्द जी के आदेशानुसार कंवारी गाय (जिस के संग बैल नहीं लागा) लाई गई। उसका दूध बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी ने पीया था। उससे परमेश्वर की परवरीश की लीला हुई। ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9 में भी यही प्रमाण है कि जब परमेश्वर शिशु रूप धारण करके संसार में प्रकट होता है तो उसकी परवरिश की लीला कंवारी गायों द्वारा होती है। इससे सिद्ध हुआ कि परमात्मा कबीर जी हैं। इसके साथ-२ जिन महापुरूषों को परमेश्वर मिले उन्होंने भी यही प्रमाणित किया कि ''जो काशी शहर में धाणक (जुलाहे) की भूमिका करते थे। वही कबीर सत्य पुरूष अर्थात् अविनाशी परमात्मा हैं। श्री नानकदेव साहेब जी ने ''गुरु ग्रंथ साहेब पृष्ठ 24 पर कहा है :-**

फाई सुरत मलुकि वेश, इह ठगवाड़ा ठगी देश।
खरा सियाणा बहुता भार धाणक (जुलाहा) रूप रहा करतार।।

**सन्त दादू साहेब जी ने कहा है कि :-**

जिन मोकुं निज नाम दिया सोई सतगुरु हमार।
दादू दूसरा कोई नहीं, कबीर सिरजनहार।।

**सन्त गरीबदास जी (गांव=छुड़ानी जि. झज्जर वाले) ने कहा है :-**

हम सुलतानी नानक तारे, दादू को उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद नहीं पाया, काशी मांहे कबीर हुआ।
गरीब अनंत कोटि ब्रह्मण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरु पुरूष कबीर हैं, कुल के सिरजन हार।।

**यही प्रमाण वेद करते हैं कि पूर्ण परमात्मा जिस समय प्रत्येक युग में लीला करने के लिए आते हैं तो वे शिशु रूप धारण करते है। उस शिशु रूप में प्रकट परमात्मा की परवरिश की लीला कंवारी गायों के द्वारा होती है।**

प्रमाण :- ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 1 मंत्र 9 कृपया पढ़ें निम्न वेद मंत्र में प्रमाण :-

(महर्षि दयानन्द के अनुयाई आर्यसमाजियों के अनुवाद की फोटो कापी) ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9

अभीईममघ्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् ।
सोममिन्द्राय पातवे ॥९॥

पदार्थः—( इमं ) उस ( सोमं ) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को ( शिशुं ) कुमारावस्था में ही ( अभि ) सब प्रकार से ( अघ्न्याः ) अहिंसनीय ( धेनवः ) गौवें ( श्रीणन्ति ) तृप्त करती हैं ( इन्द्राय ) ऐश्वर्य्यं की ( पातवे ) वृद्धि के लिये । ( उत ) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्य्यं की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं ॥६॥

★ यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

अनुवाद = (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमं) अमर परमात्मा के (इन्द्राय) सुख के लिए (पातवे) वृद्धि के लिए (इमं) इस बालक रूप धारी परमात्मा को (अभिअधन्याः) पूर्ण रूप से बिना धनाई अर्थात् कंवारी (धेनवः) गायें (श्रीणन्ति) तृप्त करती हैं अर्थात् शिशु रूप में प्रकट परमात्मा की परवरिश की लीला कंवारी गायों द्वारा होती है। जिस कारण से परमात्मा लीला करता हुआ वृद्धि को प्राप्त होता है।

विशेष विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 1 मंत्र 9 की फोटो कापी है जो महर्षि दयानन्द के भक्तों द्वारा अनुवादित है। इसमें परमेश्वर के दूसरे प्रकार के शरीर की स्थिति का वर्णन है। जिस शरीर में परमात्मा शिशु रूप धारण करके वन (जंगल) में जल पर प्रकट होता है। उस समय उस बालक वेशधारी परमात्मा के पोषण की लीला कंवारी गौवों द्वारा होती है। यही प्रमाण पवित्र ''कबीर सागर'' नामक सद्ग्रंथ में है। जो आदरणीय धर्मदास जी द्वारा लगभग सन् 1500 के आसपास लिखा गया था। उसमें लिखा है कि परमेश्वर कबीर जी शिशु रूप धारण करके 'लहरतारा' नामक सरोवर में कमल के फूल पर अपने द्यूलोक (सतलोक) से चलकर आकर विराजमान हुए। वहां से परमेश्वर को एक निःसन्तान जुलाहा दम्पति घर ले गया। बाल वेशधारी परमेश्वर ने कई

**दिनों तक कुछ नहीं खाया-पीया। फिर ऋषि रामानन्द जी के बताए अनुसार तथा एक सन्त रूप में प्रकट शिव जी के अनुसार कँवारी गाय लाई गई। परमेश्वर कबीर जी के आशीर्वाद से उस कँवारी गाय (बछिया) ने दूध दिया। वह बालक कविर्देव ने पीया। वह बछिया प्रतिदिन दूध देने लगी। इस प्रकार बालक रूप में लीला कर रहे परमेश्वर की परवरिश की लीला हुई।**

**उपरोक्त मंत्र से स्पष्ट हुआ कि वेद बताते हैं कि परमात्मा ऐसी लीला करता है। इससे यह भी स्पष्ट है कि जो काशी में जुलाहा कबीर जी थे वे पूर्ण परमात्मा हैं। परमेश्वर लीला करते हुए बड़े हुए। जुलाहा कार्य करने लगे जिस कारण से जुलाहा कहलाए।**

**जिन अच्छी आत्माओं को परमात्मा अपने विधान अनुसार कलयुग में मिले थे, जिनके शुभ नाम पूर्व में लिखे हैं उन्होंने भी आँखों देखकर परमेश्वर कबीर जी को परमेश्वर बताया है।**

**आदरणीय धर्मदास जी ने कहा है :-**

आज मोहे दर्शन दियो जी कबीर।।टेक।।
सत्यलोक से चल कर आए, काटन जम की जंजीर।।1।।
थारे दर्शन से म्हारे पाप कटत हैं, निर्मल होवै जी शरीर।।2।।
अमृत भोजन म्हारे सतगुरु जीमैं, शब्द दूध की खीर।।3।।
हिन्दू के तुम देव कहाये, मुस्लमान के पीर।।4।।
दोनों दीन का झगड़ा छिड़ गया, टोहे ना पाये शरीर।।5।।
धर्मदास की अर्ज गोसांई, बेड़ा लंघाईयो परले तीर।।6।।

**आदरणीय मलूकदास जी ने कहा है :-**

जपो रे मन सतगुरु नाम कबीर।।टेक।।
जपो रे मन परमेश्वर नाम कबीर।
एक समय गुरु बंसी बजाई कालंद्री के तीर।
सुर–नर मुनि थक गए, रूक गया दरिया नीर।।
काँशी तज गुरु मगहर आये, दोनों दीन के पीर।
कोई गाढ़े कोई अग्नि जरावै, ढूंडा न पाया शरीर।
चार दाग से सतगुरु न्यारा, अजरो अमर शरीर।
दास मलूक सलूक कहत हैं, खोजो खसम कबीर।।

**आदरणीय नानक देव साहेब जी ने कहा है :-**

फाई सूरत मलूकी वेश, एह ठगवाड़ा ठगी देश।
खरा सियाणा बहुते भार, धाणक(जुलाहा) रूप रहा करतार।
(गुरू ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 24)

एक अर्ज गुफतम पेस तोदर कन करतार,
हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदीगार।
(गुरू ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 721)

अधुंला नीच जात प्रदेशी मेरा खिन आवै तिल जावै,
जाकी संगत नानक रहंदा क्यूकर मौड़ा पावै।
(गुरू ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 731)

**आदरणीय दादू दास साहेब जी ने कहा है :-**

जिन मुझ को निज नाम दिया सोई सतगुरू हमार,
दादू दूसरा कोई नहीं कबीर सिरजनहार।

**आदरणीय गरीबदास जी ने कहा है :-**

अनन्त कोटि ब्रह्मांड का, एक रती नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सिरजनहार।।
हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूं उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी मांहे कबीर हुआ।।
अजब नगर में ले गए, हम कूं सतगुरू आन।
झिलके बिम्ब अगाध गति, सूते चादर तान।।
गैबी ख्याल विशाल सतगुरू अचल दिगंबर थीर हैं।
भक्ति हेत आन काया धरि आए अविगत सत कबीर हैं।
प्रपट्टन वह प्रलोक है जहां अदली सतगुरू सार।
भक्ति हेत से ऊतरे पाया हम दीदार।
अमर लोक से सतगुरू आए रूप धरा कारवांना।
ढूंढत ऊँट महल पर डोलैं, पूछै अब्राहिम सुल्ताना।

**उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ कि जो काशी शहर(भारत) में कबीर नाम के जुलाहा थे जिनको कवि की उपाधि देकर उनका इतिहास बन्द कर दिया था। वे पूर्ण परमात्मा हैं, सर्व सृष्टि के सिरजनहार हैं। आँखों देखा महापुरूषों ने प्रमाण दिया यही प्रमाण वेदों में मिला कि कविर्देव अर्थात् कबीर साहेब जी काशी में जुलाहा व कवि नाम से प्रसिद्ध थे वे सर्व सृष्टि रचनहार हैं।**

**उस सर्व सृष्टि सिरजनहार(Creater) ने अपने मुख कमल से अपने द्वारा रची सृष्टि का विवरण अच्छी आत्मा धर्मदास जी को बताया जो धर्मदास जी ने कबीर सागर नामक ग्रन्थ में लिखा।**

**कबीर सागर के अध्याय अनुराग सागर की कुछ वाणियों की फोटोकापी निम्न लगाई गई हैं। आओ उनसे सृष्टि रचना को जानते हैं।**

**निवेदन :- प्रिय पाठकों से निवेदन है कि कबीर सागर ग्रन्थ की जो फोटोकापी लगाई हैं, उनमें अशुद्धियां भी हैं तथा काल भगवान की प्रेरणा से नकली कबीर पंथियो द्वारा मिलावट तथा कांट छांट की गई है।**

**परमेश्वर कबीर जी को पता था कि मेरे इस पवित्र ग्रन्थ के ज्ञान का नाश काल कराएगा। इसलिए कबीर सागर के अध्याय कबीर बानी पृष्ठ 134(998), 136(1000), 137(1001) पर स्पष्ट किया है कि 12 पंथ काल ने चलाए जो मेरे नाम से ही चले। जो बाहरवां(12वां) पंथ गरीबदास जी द्वारा चलाया जाएगा। उस बाहरवें पंथ में मेरी महिमा की वाणी गरीबदास जी द्वारा बोली जाएगी। परन्तु वे 12 पंथों के अनुयायी मेरी वाणी के गूढ़ रहस्यों को नहीं समझ सकेंगे। वे अपनी-अपनी बुद्धि द्वारा उनका अर्थ लगाकर अनर्थ ही करेंगे तथा असंख्य जन्म तक सतलोक स्थान(अस्थिर घर) को प्राप्त नहीं कर सकेंगे। उस बाहरवें पंथ(गरीबदास वाले पंथ में) मैं स्वंय चल कर आऊंगा। तब इस गरीबदास वाली वाणी तथा मेरे कबीर सागर के गूढ़ रहस्यों को समझाऊंगा। पृष्ठ 134(998) पर यह भी स्पष्ट किया है कि :-**

**मेरे नाम से पंथ चलाने वालों में 12 तो मेरे गूढ़ रहस्य को नहीं जान पाऐंगे। 12वें पंथ के प्रवर्तक गरीबदास द्वारा अपनी वाणी द्वारा मेरी महिमा का अस्पष्ट प्रकाश(उजियारा-सा) होगा। शंका युक्त ज्ञान प्रकाश होगा। 13वें(तेहरवें) अशं से( जो स्वंय मैं ही हूँगा उस द्वारा) मिटे सकल अंधियारा अर्थात् मेरी महिमा सर्व के समक्ष होगी। मूल ज्ञान बताया जाएगा।**

**कबीर सागर के अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 137(1001) पर यह कहा गया है कि** ''धर्मदास मेरी लाख दुहाई, मूल ज्ञान बाहर न जाई। मूल ज्ञान बाहर जो परही, बिचली पीढ़ी हंस नहीं तिरही। तेतीस अरब ज्ञान हम भाखा, मूल ज्ञान हम गुप्त ही राखा। मूल ज्ञान तब तक छुपाई, जब तक द्वादश पंथ ना मिट जाई।।''

कृपया पढ़ें फोटोकापी ''कबीर सागर'' अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 134, 136, 137

( १३४ ) 998 कबीरवानी

साखी-वंश थापे सो सार है, जो गुरु दिढकै देहि।
साांचे दाव बतावही, जीव अपन करि लेहि ॥

धर्मदास उवाच

धर्मदास विनती अनुसारी। साहब विनती सुनो हमारी ॥
पंथ पंगती कैसे नीर बहाई। सो गुरु साँचे दया कराई ॥

सद्‌गुरु उवाच

धर्मदास मैं कहौं समुझाई। हमही तुमहि कैसे बनि आई ॥
ऐसे नाद मिले बिंदको जाई। तबही हंस पहुचे वह ठाई ॥
अंश होइहैं उनके कडिहारा। तिनकी छाप चले संसारा ॥
कोटिन योग युक्ति धरि धावै। विना बिंद नहिं घरको पावै ॥
हम बूंद तुम नाम प्रमाना। नारायण नाम नहिं ठिकाना ॥
वंश विरोध चलिहै पुनि आगे। काल दगा सब पंथहि लागे ॥

वंशप्रकार

प्रथम वंश उत्तम।१। दूसरा वंश अहंकारी।२। तीसरा वंश प्रचंड।३। चौथे वंश बीरहे।४। पाँचवेंवंशनिद्रा।५। छटे वंश उदास।६। सांतवें वंश ज्ञानचतुराई।७। आठे द्वादश पन्थ विरोध।८। नौवें वंश पंथ पूजा।९। दसवें वंश प्रकाश।१०। ग्यारहवें वंश प्रकट पसारा।११। बारहवें वंश प्रगट होय उजियारा।१२। तेरहवें वंश मिटे सकल अँधियारा।१३। एती दगा कालकी समाई है। तत्त्वबिन्दुकी टेक रह जाई है ॥

अगम बानी

अब तुमसुनो अगम्य की बानी। तुम परकोपेकाल अभिमानी ॥
चार सुरति काल की भाई। ताकोकाल पुनिनिकट बुलाई ॥
तुमसों मैं चार बानी भाषा। चारि निर्णयकी बोली भाषा ॥
तेहि पर काल करै चतुराई। चारों सुरति कहें संधि बताई ॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 134(998) की है। इसमें भी स्पष्ट है कि 12 पंथों में प्रथम पंथ श्री चूड़ामणी

**(मुक्तामनी) जी वाला है। यह उत्तम वंश कहा है, 12 वें नम्बर पर सन्त गरीबदास जी के विषय में कहा है कि** ''बारहवें वंश प्रगट हो उजियारा''

**भावार्थ है कि 12 वां वंश गरीबदास जी हैं। यह भी अच्छे हैं तथा उनके द्वारा मेरी (कबीर परमेश्वर जी की) महिमा का कुछ प्रकाश सा बानी द्वारा होगा। यह वाणी बहुत गूढ़ रहस्य युक्त होगी। उससे कुछ-२ मेरा ज्ञान हो सकेगा। उस गूढ़ सत्य वाणी के (जो गरीबदास जी द्वारा बोली जाएगी) ज्ञान को तेरहवां वंश समझाएगा (तेरहवें वंश मिटे सकल अंधियारा) 13 वां वंश आध्यात्मिक मार्ग से सर्व अन्धकार को समाप्त करके मेरी वाणी तथा संत गरीबदास जी द्वारा बोली गई वाणी को यथार्थ समझाऐगा। इसलिए वह तेरहवां वंश में स्वयं ही हूंगा। यही प्रमाण ''कबीर सागर के अध्याय ''कबीर बानी'' के पृष्ठ 137(1001) पर भी लिखा है :–**

''बारहवें पंथ प्रकट हो बानी, शब्द हमारे का निर्णय ठानी''
अस्थिर घर का मर्म न पावें, ये बारह पंथ हम हीं को ध्यावै,
बारहवें पंथ हम ही चलि आवै, सब पंथ मिटा एक पंथ चलावैं''

**वह तेरहवां वंश अब संत रामपाल दास जी महाराज के द्वारा चलाया गया है। इसमें आध्यात्मिक ज्ञान का सर्व तिमिर (अंधेरे) का नाश हो चुका है। कबीर साहेब कहते हैं :–**

''नौ मन सूत उल्झिया ऋषि रहे झख मार।
सतगुरु ऐसा सुल्झादे उल्झै ना दूजी बार।।''

**यह तेरहवां वंश सतगुरु रामपाल जी महाराज ही हैं। सन्त गरीबदास जी ने भी कहा है कि** ''सतगुरु दिल्ली मण्डल आयसी सूती धरणी सूम जगायसी'' **भावार्थ है कि सन्त गरीबदास जी ने कहा था ''सतगुरु (परमात्मा कबीर जी उनको सतगुरु रूप में मिले थे इसलिए कहा था कि सतगुरु) दिल्ली मण्डल में आएगा। मेरे बाद में दान-धर्म न करके सूम (कंजूस) हो गए हैं। उनको दान धर्म के लिए प्रेरित करेगा। सत्य भक्ति कराएगा। वह स्वयं परमात्मा कबीर जी ही होगा। इस पृष्ठ 134(998) में यह भी लिखा कि ''ऐती दगा काल की समाई। तत्व बिन्दू की टेक रह जाई।''**

**भावार्थ है कि ''12 पंथों में काल के दूत झूठा ज्ञान प्रचार करके मेरे भक्तों को धोखें में रखेंगे फिर भी तत्वज्ञान को नष्ट नहीं कर पाऐंगे।''**

(१३६) 1000 कबीरबानी

चारि गुरु निज सीख हमारा। तिन्हकी छाप चले संसारा॥
बंस बयालिस बचन हमारा। तिन्हते मुक्त होय संसारा॥
सहसर भांति होम जो कोइ धावै। कोटिनयोग समाधि लगावै॥
कोटिन ज्ञान छान बिल छाने। अर्थ परीक्षा बहुविधि आने॥
वचन वंश को बीरा नहिं पावै। फिर मरे फिरहि गर्भमें आवै॥
धर्मदास सुनो सत्य की बानी। काल प्रपंच बहुतविधि ठानी॥

द्वादश पंथ चलो सो भेद

द्वादश पंथ काल फुरमाना। भूले जीव न जाय ठिकाना॥
ताते आगम कहि हम राखा। वंश हमार चूरामणि शाखा॥
प्रथम जगमें जागू भ्रमावै। विना भेद ओ ग्रन्थ चुरावै॥
दुसरि सुरति गोपालहि होई। अक्षर जो जोग दृढ़ावे सोई॥
तिसरा मूल निरञ्जन बानी। लोकवेदकी निर्णय ठानी॥
चौथे पंथ टकसार भेद लै आवै। नीर पवन को सन्धि बतावै॥
सो ब्रह्म अभिमानी जानी। सो बहुत जीवनकीकरीहै हानी॥
पांचौ पंथ बीज को लेखा। लोक प्रलोक कहें हममें देखा॥
पांच तत्व का मर्म दृढ़ावै। सो बीजक शुक्ल ले आवै॥
छठवाँ पंथ सत्यनामि प्रकाशा। घटके माहीं मार्ग निवासा॥
सातवां जीव पंथले बोले बानी। भयो प्रतीत मर्म नहिं जानी॥
आठवे राम कबीर कहावै। सतगुरु भ्रमलै जीव दृढावै॥
नौमे ज्ञानकी काल दिखावै। भई प्रतीत जीव सुख पावै॥
दसवें भेद परमधाम की बानी। साख हमारी निर्णय ठानी॥
साखी भाव प्रेम उपजावै। ब्रह्मज्ञानकी राह चलावै॥
तिनमें वंश अंश अधिकारा। तिनमेंसो शब्द होय निरधारा॥
संवत सत्रासै पचहत्तर होई। तादिन प्रेम प्रकटें जग सोई॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर के अध्याय ''कबीर बानी'' के पृष्ठ 136(1000) की है। इसमें प्रथम पंक्ति में चारि (चार=Four) गुरुओं का वर्णन है। इस पृष्ठ पर दूसरी पंक्ति बाद में डाली गई है (यह प्रक्षिप्त है) {वंश बियालिस बचन हमारा तिन्हते मुक्त होय संसारा} ऊपर से छठी वाणी {वचन वंश को बीरा नहीं पावै फिर मरै फिर गर्भ में आवै} इस वाणी में ''वचन वंश'' का अर्थ है जो नाद (बचन) का वंश होगा भावार्थ है कि जो शिष्य शाखा से गुरु पद प्राप्त होगा उससे बीरा (दीक्षा) प्राप्त नहीं करेंगे। उनका मोक्ष नहीं होगा वे जन्म तथा मरण के चक्र में सदा रहेंगे। सन्तमते में दो प्रकार के वंश

माने हैं। एक तो सन्त (गुरु पद पर विराजमान) की सन्तान (जिसको बिन्द कहा गया है) दूसरे सन्त के शिष्य जो नाम प्राप्त करते हैं। उन्हें बचन (नाद) का वंश (अंश) कहते हैं। यहां पर स्पष्ट है कि जो बचन वंश (नाद=शिष्य प्रणाली) से दीक्षा लेने से ही कल्याण सम्भव है। इसके पश्चात् 12 पंथों का प्रकरण प्रारम्भ होता है।

कुछ जानने के लिए :- इस फोटो कापी पृष्ठ 136 में कुछ त्रुटियां है, कुछ ज्ञान की कुछ प्रिटिंग की।

1. सबसे नीचे की पंक्ति में ''संवत् सत्रासै पचहत्तर'' लिखा है यह ''संवत सतरासै चौहतर'' ठीक है क्योंकि यह विवरण बारहवें पंथ के प्रवर्तक सन्त गरीबदास जी के विषय में है। सन्त गरीबदास जी का जन्म वैशाख पूर्णमासी को संवत 1774 को गांव छुड़ानी जिला झज्जर (हरियाणा) में हुआ था।

2. ऊपर जहां से बारह पंथों का प्रकरण प्रारम्भ हुआ है उसकी तीसरी पंक्ति में ''प्रथम जागु'' लिखा है यह गलत है। यहां प्रथम तो चूरामणी जी हैं। वे तो अच्छे भक्त थे। इसी का प्रमाण पृष्ठ 134(998) वाली वाणी से भी होता है। जिसमें लिखा है कि ''प्रथम वंश उत्तम'' फिर दूसरी जग में जागु भ्रमावै, तीसर सुरति गोपाल है चौथा मूल निरंजन पंथ, पांचवां = टकसारी पंथ, छठा=भगवान दास पंथ, सातवां=सत्यनामी पंथ, आठवां=कमाल का पंथ, नौवां=राम कबीर पंथ, दसवां=जीवा पंथ, ग्यारहवां=परमधाम की वाणी पंथ, इसके पश्चात् बारहवें गरीबदास जी से पंथ प्रकरण प्रारम्भ होता है।

इसके विषय में परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को बताया है कि बारहे (बारहवें) पंथ के प्रवर्तक सन्त गरीबदास जी द्वारा मेरी महिमा की बानी प्रकट होगी। उस वाणी को तथा मेरी इस वाणी को जो आप लिख रहे हैं। वे 12 पंथों के अनुयाई पढ़ा करेंगे परन्तु अर्थ ठीक न लगा कर अपने आधार से निर्णय करके जीवों को समझाया करेंगे परन्तु यथार्थ ज्ञान तथा साधना के अभाव से असंख्य जन्म भी स्थाई स्थान (ठौर) नहीं प्राप्त कर सकेंगे। जन्म-मरण तथा चौरासी लाख जीवों के शरीरों में भटकते रहेंगे। अस्थिर=स्थाई स्थान, भावार्थ है कि वे सत्य लोक नहीं जा सकेंगे। ये बारह पंथों के भक्त मेरे को प्रमुख मानकर गलत ज्ञान ग्रहण करके गलत भक्ति कर अपना जीवन नष्ट करते रहेंगे।

धर्मदास जी ने पूछा कि हे प्रभु ''मेरे कुल के व्यक्ति तथा अन्य भक्त कैसे

मोक्ष प्राप्त करेंगे? तब परमेश्वर कबीर जी ने कहा था'' गरीबदास जी वाला 12 वां पंथ जब चल चुका होगा उसमें मैं स्वयं जाऊंगा तथा काल के द्वारा जितने भी नकली पंथ (12 कबीर जी के नाम पर तथा अन्य जो राधास्वामी पंथ तथा उससे बनी शाखाऐं=सच्चा सौदा सिरसा,जगमालवाली, जयगुरुदेव पंथ मथुरा, ठाकुर सिंह का पंथ, दिनोद जिला भिवानी हरियाणा में श्री ताराचन्द जी का पंथ, निरंकारी पंथ आदि-२) सर्व पंथों को ज्ञान से समाप्त करके एक सत्य भक्ति, सत्यज्ञान वाला पंथ चलाऊंगा। जो उस पंथ में दिक्षा लेंगे वे चाहे तेरे कुल के व्यक्ति हों या अन्य सर्व का मोक्ष करूंगा।

बोधसागर /००/ (१३७)

आज्ञा रहै ब्रह्म बोध लावे। कोली चमार सबके घर खावे॥
साखि हमार लै जिव समुझावै। असंख्य जन्ममें ठौर नां पावै॥
बारवै पन्थ प्रगट है बानी। शब्द हमारेकी निर्णय ठानी॥
अस्थिर घरका मरम न पावै। ये बार पंथ हमहीको ध्यावै॥
बारहे पन्थ हमही चलि आवै। सब पथ मिट एकहीपंथ चलावै॥
तब लगि बोधो कुरी चमारा। फेरी तुम बोधो राज दर्बारा॥
प्रथम चरन कलजुग नियराना। तब मगहर माडौ मैदाना॥
धर्मरायसे मांडौ बाजी। तब धरि बोधो पंडित काजी॥
बावन वीर कबीरं कहाऊ। भवसागरसों जीव मुकताऊ॥

कलियुगको अंत पठचते

ग्रहण परै चौंतीससो वारा। कलियुग लेखा भयो निर्धारा॥
३४००ग्रहणपरैसो लेखाकीन्हा। कलियुग अंतहु पियाना दीन्हा॥
पांच हजार पाँचसौ पांचा। तब ये शब्द होगय्या सांचा५५०५
सहस्र वर्ष ग्रहण निर्धारा। आगम सत्य कबीर पोकारा॥
तेरा वंश चलै रजधानी। वंश चूरामणि प्रगटे ज्ञानी॥
तिनकी देह छायाँ नहिं होई। सर्व पृथ्वी प्रमानिक सोई॥

क्रिया सोगंद

धर्मदास मोरी लाख दोहाई। भूल शब्द बर जिन जाई॥
पवित्र ज्ञान तुम जगमों भाखौ। मूलज्ञान गोइ तुम राखौ॥
मूलज्ञान जो बाहेर परही। बिचले पीढीवंशहंस नहिं तरही॥
तेतिस अर्व ज्ञान हम भाखा। मूलज्ञान गोए हम राखा॥
मूलज्ञान तुम तब लगि छपाई। जब लगि द्वादश पंथ मिटाई॥

द्वादशपंथका जाव अस्थान

द्वादश पंथ अंशनके भाई। जीवबांधि अपने लोक लेजाई॥
द्वादश पंथमें पुरुष न पावै। जीव अंशमें जाइ समावै॥

★ यह फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''कबीर बानी'' के पृष्ठ 137(1001) की है। इसमें स्पष्ट किया है कि ''बारहे पंथ (12 वें पंथ जो गरीब दास द्वारा चलाया गया है) के प्रवर्तक अर्थात् गरीब दास जी द्वारा मेरी महिमा की वाणी प्रकट की जाएगी परन्तु उस वाणी के गूढ़ रहस्यों को उन बारह (12) पंथों के अनुयाई समझ नहीं सकेंगे। अपनी-अपनी बुद्धि अनुसार अर्थ किया करेंगे। जिस कारण से वे असंख्य जन्म तक अस्थिर घर को (शाश्वत स्थान अर्थात् सत्य लोक को) प्राप्त नहीं कर सकेंगे। भले ही वे सब मुझे (अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर) को ही मुख्य मान कर मेरा गुणगान किया करेंगे परन्तु यथार्थ भक्ति विधि व ज्ञान बिना मोक्ष नहीं होगा। उस बारहवें (12वें) पंथ (गरीबदास जी वाले पंथ) में हम (कबीर परमेश्वर) ही चल कर आऐंगे जबकि बिचली पीढ़ी का समय प्रारम्भ होगा। (कलयुग की बिचली पीढ़ी का प्रारम्भ 20वीं सदी अर्थात् सन् 1901 से हुआ है। मुझ दास (रामपाल दास) का जन्म 1951 में हुआ है। अब परमेश्वर कबीर जी ने मुझ दास को भेजा है।) उस समय सर्व पंथों को समाप्त करके एक श्रेष्ठ कबीर पंथ चलाऐंगे। ऊपर से 7वीं पंक्ति में यह भी स्पष्ट किया है कि जिस समय में (परमेश्वर कबीर जी) मगहर स्थान से सशरीर सत्यलोक जाने की एक लीला करेंगे। वह समय (संवत 1575 सन् 1518) कलयुग का प्रथम चरण होगा। वह प्रथम चरण 19वीं (सन् 1900) तक चलेगा। 20वीं सदी (सन् 1901) से बिचली पीढ़ी का समय प्रारम्भ होगा। तब तक यह मूल ज्ञान (तत्व ज्ञान) तथा सारनाम (आदिनाम, सार शब्द) छुपा कर रखना है। धर्मदास जी को सतर्क करते हुए परमेश्वर ने कहा था कि मेरी लाख दुहाई यह सारनाम तेरे से अतिरिक्त अन्य किसी से नहीं बताना अन्यथा बिचली पीढ़ी के हंस पार नहीं हो पावेंगे क्योंकि यदि इस सर्व ज्ञान और सतनाम, सारनाम का पता काल के भेजे गऐ सन्तों को लग गया तो वे भी यही ज्ञान प्रचार करेंगे तथा यही नाम दिया करेंगे। वे अधिकारी नहीं होंगे जिस कारण से उनके द्वारा दिये गए भक्ति मंत्रों का साधक को कोई लाभ नहीं होगा।(जैसे अनअधिकारी का बनाया गया चालक प्रमाण पत्र मान्य नहीं होता, उसी प्रकार अनअधिकारी से सर्व सच्चे मंत्र प्राप्त करके भी साधक को कोई अध्यात्मिक लाभ प्राप्त नहीं होता।) जिस समय कलयुग 5505 (सन् 1997) बीत जाएगा, तब इस तत्व ज्ञान (मूल ज्ञान) तथा सत्य भक्ति विधि के सर्व मंत्रों को प्रदान किया जाएगा। मेरा विशेष कृपा पात्र दास भेजूँगा। वह अधिकारी होगा सर्व मंत्र देने का।

उससे दीक्षा प्राप्त करके सर्व प्राणी मोक्ष प्राप्त करेंगे। पूरा विश्व सत्य साधना किया करेगा, सतयुग जैसा वातावरण होगा। असंख्य प्राणियों को मोक्ष प्राप्त होगा। जब कलयुग का अन्तिम चरण होगा, उसमें सर्व प्राणी नास्तिक हो जाएंगे। एक-आध ही मानव परमात्मा से डरने वाला होगा।

( १८७० ) 1934 बोधसागर ८६

चौपाई

सत्य सुकृति सुमिरो मन माही। टूटत बज्र राखलेउ ताही।

साखी-सत्य सुकृतिकी बालक है, जो चितवै कर डीठ।
ताजन तोरौ चौहटे, गुनहगारकी पीठ॥
जदिया कहूँ तो जगतरैं, परकट कहो न जाय।
गुप्त परवाना देत हौं, राखो शिरै चढ़ाय॥
जिन डरपो तुम कालका, कर मेरी परतीत।
सप्तद्वीप नौ खण्डमें, चलिहौ भवजल जीत॥

यहांलों तो चार गुरु और बयालीस वंशका लेखा लग चुका है इनके अतिरिक्त कबीर साहबके बारह पंथ और भी कबीर-पन्थी ही कहलाते हैं।

कबीर साहबके पंथोंका वृत्तान्त

१-नारायणदासजीका पंथ। २-यागौदासजीकापंथ। ३-सूरत गोपाल पंथ। ४-मूलनिरञ्जनका पंथ। ५-टकसारी पंथ। ६-भगवान्दासजी का पंथ। ७-सत्यनामी पंथ। ८-कमालीपंथ। ९-राम कबीर पंथ। १०-प्रेमधामकी वाणी। ११-जीवा पंथ। १२-गरीबदास पंथ।

यह तो कबीर साहबके बारह पंथ हैं। इनमें कोई २ अच्छे हैं। और कोई निर्बल विश्वासके हैं। और रामकबीरके लोग ठाकुरपूजा करते हैं। और सत्यनामियोंके ध्यान भी विचलित प्रायः हैं। इन बारह पंथोंका यही विवरण है और इन बारह पंथोंके अतिरिक्त कबीर साहबके और पंथ भी हैं।

कबीर साहबके भिन्न २ पंथोंका वृत्तान्त

नानकपंथ-दादू पंथ-यानिप पंथ-मूलकदास पंथ-गणेश पंथ इत्यादि।

★ यह फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''बोधसागर'' के पृष्ठ 1870(1934) की है। इसमें 12 वां पंथ = गरीबदास पंथ लिखा है। यह गद्य भाग में है।

प्रिय पाठको जो पृष्ठ 137(1001) की फोटो कापी ''कबीर सागर की हैं इनसे यह भी स्पष्ट है कि परमेश्वर कबीर जी ने जो ज्ञान बोला कबीर सागर में धर्मदास जी ने लिखा यह सम्पूर्ण नहीं है, उसकी कुछ पूर्ति सन्त गरीबदास जी द्वारा कराई गई परन्तु वह अस्पष्ट है, शंका युक्त है।(कुछ उजियारा-सा है, पूर्ण प्रकाश नहीं है।) आप सन्त गरीबदास जी के ग्रन्थ को पढ़ोगे तो यह मान बैठोगे कि गरीबदास जी तो विष्णु के पुजारी थे। परन्तु ऐसा नहीं है। जो आदेश परमेश्वर कबीर जी का था, उतना ही ज्ञान गरीबदास जी ने बोला था। भ्रान्ति निवार्ण :- एक भक्त ने इन्टरनेट से सन्त गरीबदास जी का सत् ग्रन्थ साहेब डाउनलोड करके पढ़ा। उसको शंका हुई कि गरीबदास जी तो पूर्ण रूप से श्री विष्णु जी के भक्त थे।

उस भक्त ने एक शब्द दिखाया पृष्ठ 908(old Granth) पृष्ठ 870-871(New Granth) केशव कृष्ण करीमा मौला राजिक राम रहिमा.....।

मेरे पास (सन्त रामपाल दास के पास) आकर कहा कि सन्त गरीबदास जी ने तो भगवान विष्णु को पूर्ण परमात्मा बताया है, उसने कुछ वाणियां बोली जिनमें विष्णु जी को ही गरीबदास जी ने अपना भगवान बताया है। उस भक्त ने कहा कि यह क्यों लिखी गई हैं यदि कबीर जी ही पूर्ण परमात्मा थे। उसकी शंका का समाधान इस प्रकार किया गया :-

वास्तव में उस शब्द में इस प्रकार लिखा है :-

केशव कबीर करीमा मौला, राजिक राम रहिमा।
नरसिंह रूप धरे नारायण, भक्ति बारू भीमां।

पुराने ग्रंथ में गलती से कृष्ण लिखा है। क्या आप ने (भक्त ने) उसी ग्रन्थ में यह नहीं पढ़ा :-

तीनूं देवा काल है, ब्रह्मा, विष्णु, महेश।
भूले चूके समझियो, सब काहू आदेश।।
तीन लोक का राज है, ब्रह्मा विष्णु महेश।
ऊंच्चा धाम कबीर का, जहां न पहुंचे शेष गणेश।।
अनन्त कोटि ब्रह्मांड का एक रती नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सिरजनहार।।

Old ग्रन्थ गरीबदास जी की वाणी का पृष्ठ = 861 = राग जांगड़ा शब्द नं. 6 = राम कबीर कछु अन्तर नाहीं।

**पृष्ठ = 830 (New Granth) :-**

**(नोट :- Old ग्रन्थ वह जो गरीबदास वाले पंथ के श्रद्धालुओं ने छपा रखा है। New ग्रन्थ वह जो सन्त रामपाल दास जी महाराज ने छपाया है। प्रिन्ट के साईज में अंतर होने से पृष्ठ संख्या में भिन्नता है। )**

राम कबीर कछु अंतर नांही, हांजी मिले स्यौंदेह तन मघर मांही।।टेक।। कामदल बसि किया, क्रोध जिन्हि कसि लिया, लोभ और मोह निगारि मारे। माया का मांन गुमांन भंजन किया, धनी कबीर कूं अत्र त्यारे।।1।। मघर में मरै सो गदहरा होत है, दई तलाक लिखि लोकपालं। परे त्रिसंखु जो ब्रह्मा की कलप सैं, गये जम लोक किये भछन कालं।।2।। मघर में मरै सो जाय जमलोक कूं, लोकपालं किये बचन येही। मुक्ति के धाम कूं छाड़ि मघहर गये, अजब साका किया पद सनेही।।3।। ब्रह्मा और बिष्णु महादेव इन्द्र सहत, बरुण कुबेर धर्मराय ध्यानी। तीनि तलाक त्रिसंखु जिन्हि त्यारिया, मघर के बीच में मुकति आंनी।।4।। अकल अनभूत जमदूत जा सें डरै, चौदहूं कोटि धर्मराय कंपै। दास गरीब कबीर साकेपती, काल महाकाल नहीं सीम चंपै।।5।।6।।

**शब्द 6 (राग जांगड़ा पृष्ठ 865) पर सर्व का रचनहार(ब्रह्मा, विष्णु और शिव का भी रचनहार) अन्य पुरूष परमात्मा है।**

**पृष्ठ 828-829(New Granth) राग = जांगड़ा शब्द 3 में लिखा है कि :-**

अजब रंग नूर भरपूर भारी, हांजी मगन महबूब मौले मुरारी।।टेक।। अलख की पलक में खलक सबही बसै, खलक की पलक सै अलख न्यारा। धरनि आकाश कैलास कूरंभ लग, विसम कै बीचि रवि चंद तारा।।1।। खड़े उजीर तहां संख सैनापति, ब्रह्मा और बिष्णु महेश गावैं। तखत खवास जहां चौंर चंपा करैं, सहंस मुख शेष नहीं पार पावैं।।2।। धनुष धर धीर अमीर गिनती नहीं, संख रिषिमुनी दरबार ठाढे। संख दरबेश जहां पेशि पंखा करैं, संख साधू जहां लाड़ लाड़े।।3।। अजब दरबार गुलजार दीदार है, सेत निशान जहां धजा फरकैं। छाड़ि संसार बेकार की भावनां, सोई जन संत निज तत निरखैं।।4।। संख कानून जहां संख बाजे बजैं, संख ही नाद जहां संख भेरी। संख ही तूर जहां नूर ही नूर है, राग अलमसत मुरली उचेरी।।5।। संख ही गुनी जहां ज्ञान गीता पढैं, संख ही बेद भागौत बांचै। संख ग्याता जहां खोज पद का करैं, संख सुर खड़े दरबारि नाचैं।।6।। संख मौंनी जहां मौंन समाधि हैं, संख बकता जहां कहैं बांनी। संख सुरता जहां सिंध में मिलि रहे, संख

दरबार में खड़े दानी।।7।। संख सावंत जहां संख मंडलीक हैं, संख दरबार में सूर बीरं। करुं प्रनाम कुरबांन सब संत सिरि, मुकुट मणि लाल साहिब कबीरं।।8।। संख झालरि जहां संख ही झांझि हैं, संख ही ताल जहां संख बीनां। अलल का ध्यान गुरु ज्ञान गमि कीजिये। सुनौ उपदेश लखि पंथ मीना।।9।। संख रापति जहां सेत और पीत हैं,संख ताजी सेत और हरे बांनैं। संख म्यांने जहां पालकी अरथ हैं, संख नौबति घुरैं दर दिवांनैं।।10।। संख बिमान अमांन बेगमपुरा, संख चहडोल अमोल हीरा। संख देवगनां रास मंडल करैं, संख भोजन जहां अमर चीरा।।11।। संख ही सिद्धि जहां रिद्धि आगै खड़ी, सुरति मन भावना नाद पूरैं। संख ही मंदर जहां संख ही गिलम हैं, हूर हाजिर खड़ी पैर चूरैं।।12।। संख ही कुंज जहां तेज ही पुंज हैं, संख ही सेज जहां चित्रसाला। दास गरीब सतपुरुष साहिब मिले, धनी कबीर दिया अमर प्याला ।।13।।3।।

**पृष्ठ = 831-832 (New Granth) = राग = जांगड़ा =**

लरै जम संत बे अंत बौरा, हांजी काल महाकाल जम जीत जौंरा ।। टेक ।। चौदहूं तबक जिनि खाय खारज किये, देव ऋषि मुनी और गुनी ज्ञानी। बड़ा हठवांन सैतांन अति महाबली, काल समशेर तिहूं लोक जांनी।।1।। उदै और अस्त बीचि चक्र जिन्ह के चले। मिले सब चक्रवती खाख मांहीं। संख सेनापति धूरि धांमा किये, सूर सावंत की संकि नांही।।2।। महादेव की नारि सिंघार अठोतर भई, कौंन बिधि बचै कहौ जीव संग्या। गये औतार करतार का नाम धरि, चलैंगे शंभु जाकि जटा कुण्डली में बहै गंगा।।3।। संख शिंभू गये ब्रह्मा बिष्णु गिनती कहा, इन्द्र बारु जेते धरनि धांनी। कोटि बैकुण्ठ पैमाल परलो भये, अमर सतपुरुष कबीर अमांनी।।4।। जिमी असमांन कै बीचि पुल पंथ है, पंथ पर पैर कोई संत धरि है। अलल की सुरति ले सैल सैली करै, जम सें जंग नर सोई करि है।।5।। मांनधाता गये काल कंटक दहे, कोटि योद्धा चलैं हुक्म मांही। नौ जोबनि नारि दरबारि देवा तपै, लंकपति गये नही खबरि पाई।।6।। बड़ा झूझार अपार दल तास कै, धर्मराय नालि जिनि राड़ि मांडी। रामस्यौं जंग जो रावना करि गया, दुनी संसार क्या लरै लांडी।।7।। बड़ा रनधीर कबीर दरबार में, चौदहूं तबक रोशनि सारै। काल महाकाल कूं जीति जोध्या गया, पुरुष कै शीश जो चौंर ढारै। मघर मैदान में आंनि जंगी घुरे, हिंदू और तुरक दहूं दीन देखैं। शब्द अतीत गुन तीनि जाकै नहीं, कौंन किताब जुबाब लेखैं।।9।। चित्र और गुप्त

का कलम कागज मिट्या, धर्मराय खड़ा कर शीश जोड़ै। चौदहूं तबक में तेग सारै सरु, बिनां कबीर बंधि कौंन तोड़ै ।।10।। अंस औतार सें जनक नानक भये, गोरख प्रहलाद की पैज राखी। कोटि निनानवैं छत्रपती सुधरे, नारद और ब्यास शुकदेव साखी।।11।। पुंडरपुर नामदेव भक्ति का खंभ है, फेरि देवल दिया गऊ जिवाई। ऐसा साका तिहूंलोक में कहां है, नौ लाख बोड़ी जहां भरी काशी आई।।12।। आब और खाख जहां बाद आतश नहीं, होत प्रकाश नहीं पवन पानी। अग्नि आतश महतत काया जरै, पिण्ड अन प्राण अबिगत अमानी।।13।। कोटि कोटि ब्रह्मण्ड हैं बटक के बीज में, बटक का बीज नहीं नजरि आवै। दास गरीब कबीर सतगुरु मिले, महल का भेद घट में लखावै।।14।।8।।

**पृष्ठ = 885 (Old Granth) पृष्ठ = 851-852(New Granth) राग = प्रभाती**

हमरै सतगुरु आये ही क भल दिन आज घरी।।टेक।। चतुरभुजी चित मांहि लखाया। अष्टभुजी अनरागी। सहंसभुजी संगीत पियारे, देखै सो बड़भागी।।1।। परमानंद कबीर अबिनाशी, संख भुजा सैलांना। खालिक बिन खाली नहीं संतौ, सतगुरु कूं कुरबांना।।2।। सेत छत्र शिर मुकुट बिराजे, पीतंबर पटमांही। कोटिक रिद्धि सिद्धि आगै ठाढी, अबिगत अलख गोसांई।।3।। कोटिक ब्रह्मा पाठ पढत हैं, कोटिक सिंभू ध्यानी। कोटिक बिष्णु विसंभर ठाढे, सतगुरु कै दरबानी।।4।। शेष सहंस मुख निशदिन गावैं, ररंकार रंगभीना। संख लोचनी माया नाचैं, चलि मघ मारग झीनां।।5।। कोटिक अनभै छन्द करत हैं, नाचैं नाच नबेला। कोटि देवंगना गावत आई, अबिगतपुर में मेला।।6।। ब्रह्मा बिष्णु महेसर नाचैं, सनक सनंदन गावैं। कोटि सुरसती लाप करत हैं, नारद नाद बजावैं।।7।। बासिष्ट बिस्वा कपल मुनी हैं, गावैं ध्रू प्रहलादा। सुखदे जनक बिदेही जोगी, नहीं जाने अगम अगाधा।।8।। सुखदे कुँ भागौति कथी है, कुछ गीता भेद बतलाया। ऋग यजु साम अथरबन थाकै, च्यारि बेद कूं गाया।।9।। मारकंड रूंमी रिष नाचैं, नाचै कागभुसंडा। कृष्ण गुरु दुर्बासा नाचैं जम शिर मारै डंडा।।10।। बालमीक की बलि बलि जाऊं, कथा तत रमायण नीका। संख पंचायन आंनि बजाया, भगति दिलाया टीका।।11।। गोरखदत गोपीचंद भरथरी भुले, जाने सुलतांनी बाजीदा। उरध मुखी कूये में लटके, पौंहचे जांनि फरीदा।।12।। नाशकेत कर्दम रिष गावैं, बकतालिक मुनि ज्ञानी। परलौ कोटि पलक में बीतैं, ऐसैं हैं मुनि ध्यानी।।13।। तत ज्ञान पाया नहीं गांवै ऊआ बाई। गनिका बैठि बिमान गई

है, सतगुरु की सरनाई।।14।। धना सुदामा नानक नामा, पीपा परचा पाया। छानि छिवाई गऊ जिवाई, देवल आंनि फिराया।।15।। रैदास रसायन माते रहते, सुनते आदू तांना। जिनकै कहा कमी ब्रह्म मेला, दो कौड़ी बंधि कांना।।16।। कमाली सतनाम सें राती, कर्म मीरा बाई। सेऊ समन राम पिछाना, नेकी नेक कमाई।।17।। रैदास अकाश चढै अनरागी, ततै तत समानां। कनक जनेऊ काढि दिखाया, बिप्र किये हैराना।।18।। संख असंखौं संत बिराजैं, वार पार नहीं अंता। अबिगत पुरुष कबीर भजौ रे, है दूलह महमंता।।19।। सकल सरोमनि है दिलदाना, मगन मुरारी मौला। दास गरीब जहां रंग राते, उजल भौंरा धौला।।20।।13।।

**पृष्ठ = 896 (old Granth) पृष्ठ = 861 (New Granth)**

**राग = बिलावल**

तत कहन कूं राम है, दूजा नहीं देवा। ब्रह्मा बिष्णु महेश से, जाकी करि हैं सेवा।।टेक।। जप तप तीर्थ थोथरे, जाकी क्या आशा। कोटि यज्ञ पुण्य दान से, जम कटै न फांसा।।1।। यहां देन वहां लेन है, योह मिटै न झगरा। वाह बिना पंथ की बाट है, पावै को दगरा।।2।। बिन इच्छा जो देत है, सो दान कहावै। फल बांचै नहीं तास का, अमरापुर जावै।।3।। सकल द्वीप नौ खंड के, क्षत्री जिन जीते। सो तो पद में ना मिले, विद्या गुण चीते।।4। कोटि उनंचा पृथ्वी, जिन दीन्ही दाना। परशुराम अवतार कूं, कीन्ही कुरबाना।।5।। कंचन मेर सुमेर रे, आये सब माही। कामधेनु कल्पबृक्ष रे, सो दान कराहीं।।6।। सुर नर मुनिजन सेवहीं, सनकादिक ध्यावैं। शेष सहंस मुख रटत हैं, जाका पार न पावैं।।7।। ब्रह्मा बिष्णु महेश रे, देवा दरबारी। संख कल्प युग हो गये, जाकी खुल्है न तारी।।8।। सर्ब कला सम्पूर्ण है, सब पीरन का पीर। अनन्त लोक में गाज है, जाका नाम कबीर।।9।। प्रलय संख्य असंख्य रे, पल मांहि बिहानी। गरीब दास निज नाम की, महिमा हम जानी।।10।।17।।

**पृष्ठ = 898 (old Granth) पृष्ठ = 861-862 (New Granth)**

अबिगत राम कबीर हैं, चकवै अबिनाशी। ब्रह्मा बिष्णु वजीर हैं, शिब करत खवासी।।टेक।।इन्द्र कोटि अनंत हैं, जाकै प्रतिहारा। बरन कुमेरं धर्मराय, ठाढे दरबारा।।1।। तेतीस कोटि देवता, ऋषि सहंस अठासी। वैष्णव कोटि अनंत हैं, गुण गावैं राशी।।2।। नौ जोगेश्वर नाद भरि, सुर पूरै संखा। सनकादिक संगीत हैं, अबिचल गढ बंका।।3।। शेष गणेश रु सरस्वती, और लक्ष्मी राजैं। सावित्री गौरा रटैं, गण संख बिराजैं।।4।। अनंत कोटि मुनि साध

हैं, गण गंधर्व ज्ञानी। अरपैं पिंड रु प्राण कूं, जहां संखौं दानी।।5।। सावंत शूर अनंत हैं, कुछ गिणती नाहीं। जती सती और शीलवंत, लीला गुण गाहीं।।6।। चंद्र सूर बिनती करैं, तारा गण गाढे। पांच तत्व हाजिर खड़े, हुकमी दर ठाढे।।7।। तीर्थ कोटि अनंत हैं, और नदी बिहंगा। ठारा भार तो कूं रटै, जल पवन तरंगा।।8।। अष्ट कुली परबत रटैं, धर अंबर ध्याना। महताब अगनि तो कूं जपैं, साहिब रहमाना।।9।। अर्स कुर्स पर सेज है, तन तबक तिराजी। एक पलक में करत हैं, सो राज बिराजी।।10।। अलख बिनानी कबीर कूं, रंग खूब चवाया। एक पानी की बूंद से, संसार बनाया।।11।। अनंत कोटि ब्रह्मण्ड हैं, कछू वार न पारा। लख चौरासी खान का, तूं सिरजनहारा।।12।। सूक्ष्म रूप स्वरूपहै, बौह रंग बिनानी। गरीबदास के मुकट में, हाजिर प्रवानी।।13।।21।।

**पृष्ठ = 903(old Granth) राम कहै मेरे साध को दुःख ना दीजै कोये**

**पृष्ठ = 866(New Granth)**

राम कबीर कह मेरे साध कूं, दुःख मत दीजो कोई। साध दुखाये मैं दुखी, मेरा आपा भी दुख होय।।टेक।। हिरणाकुश उदर बिदार्‌या, मैं ही मार्‌या कंस। जो मेरे साधु कूं आन दुखावै, जा का खोऊं बंस।।1।। पौंहचूंगा क्षण एक में, जन अपने कै हेत। तेतीस कोटि की बंध छुटाई, रावण मार्‌या खेत।।12।। कला बधाऊं संत की, प्रगट करिहै मोहि। गरीबदास जुलहा कहै, मेरा संत न दहियो कोय।।3।।27।।

**पृष्ठ = 907(old Granth) पृष्ठ = 870**

रमता राम जपौ रे प्रानी, अब तूं सुनि ले राम कहांनी।।टेक।। कच्छ मच्छ कूरंभ न होते, धौल धरनि नहीं ध्यानी। चंद सूर दो दीपक नांहीं, नां थे पौंन न पानी।।1।। ब्रह्मा बिष्णु महेश न होते, न हीं लक्ष्मी नहीं गौरज रानी। सावित्री नांही सनकादिक, होते अलख बिनांनी।।2।। शेष सहंस मुख निशदिन गावैं, ररंकार निजबांनी। राम नाम का सिक्का मेटैं, डूबैंगे अभिमांनी।।3।। सुर तेतीसौं सहंस अठासी, और चौरासी सिधा। च्यारि खांनी के जीव उपाये, आदि पुरुष की अद्या।।4।। आदि राम सोई अंत राम है, मधि राम है सोई। पूरन ब्रह्म सकल घट व्यापक, आगा पीछ न कोई।।5।। जनक बदेही राजा होते, जमराय की बंधि तोरी। राम नाम प्रहलाद उधरि गये, फूकि फाकि दई होरी।।6।। रामचन्द्र रघुबंशी होते, जिनि जांन्यां जिनि जांन्यां। दिव रूप सुरगापुर पौंहचे, अजुध्या चढी बिवांना।।7।। राम कहंते रामें हो गये, पूछि देखि प्रहलादं। दास गरीब जरे नहीं जारे, लागी अजर समाधं।।8।।8।।

उपरोक्त वाणियां सत ग्रन्थ साहिब(सन्त गरीबदास जी की वाणी) से हैं।

उस भक्त ने जो शब्द बताया उस से स्पष्ट लगता है कि गरीब दास जी श्री विष्णु के भक्त थे। ऐसे एक-दो शब्द और हैं।

➢ विशेष विवेचनः- आदरणीय सन्त गरीब दास जी का वाणियों को लिखवाने व बोलने के पीछे एक विशेष कारण यह रहा है कि :-

1. यदि इस ग्रन्थ साहिब(सन्त गरीबदास जी की वाणी) में ऐसे शब्द न होते और केवल तत्व ज्ञान ही होता तो इस अमर ग्रन्थ को लोग आग लगा देते या जल प्रवाह कर देते। ऐसे शब्दों व साखियों ने यह कार्य किया है जैसे सफेद मिट्टी के ''कप, प्लेटों को सुरक्षित रखने के लिए घास-फूस चारों ओर लपेट कर डिब्बे में बाँधते हैं। जब डिब्बा घर पर पहुँच जाता है तो उस घास को डिब्बे में छोड़ देते हैं। कप-प्लेट आदि को अपनी रसोई में रख कर प्रयोग करते हैं। फिर उस घास से कोई प्रयोजन नहीं रहता।

2. दूसरा कारण यह रहा है कि सन्त गरीबदास जी परमात्मा के तथा उनके द्वारा दिए ज्ञान के पूर्ण ज्ञाता थे।

इन शब्दों को(जिनमें श्री विष्णु जी की महिमा है) बोलते समय उनका दृष्टिकोण पूर्ण परमात्मा की शक्ति पर ही था। जैसे गीता अध्याय नं. 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में कहा है कि ऊपर को जड़(पूर्ण परमात्मा) नीचे को तीनों गुण(रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) शाखा हैं।

श्लोक 16 में दो पुरूष (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) कहे हैं तथा इन दोनों को तथा इनके लोकों में जितने प्राणी हैं उनको नाशवान कहा।

श्लोक 17 में कहा है कि :- श्रेष्ठ परमेश्वर तो इन उपरोक्त(क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से भिन्न है, जो परमात्मा कहा जाता है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है, वह वास्तव में अविनाशी परमात्मा है। जैसे पेड़ को आहार मूल(जड़) से मिलता है। शाखाओं तक आहार भी मूल से ही प्राप्त होता है। फल शाखाओं को लगते हैं परन्तु निमित कारण जड़ ही होता है।

3. अन्य कारण :- परमात्मा महिमा का भूखा नहीं है। परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कबीर जी चाहते हैं कि इन साधकों की आस्था परमात्मा में बनी रहे। इसलिए जो भी जिस ईष्ट को भज रहा था, उससे उस भक्त को कोई लाभ नहीं होना था। परन्तु कलयुग से पहले सर्व मानव पूर्व जन्मों के पुण्यों से युक्त थे। जो भक्ति वे करते थे वह शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण होने के कारण

व्यर्थ थी। प्रमाण गीता अध्याय नं. 16 श्लोक 23-24 में।

फिर भी कभी उन पर कोई आपत्ति आती थी तो वे परमात्मा को हृदय से पुकारते थे। उनके पूर्व जन्म संस्कार वश पूर्ण परमात्मा उनके कार्य को सिद्ध कर देते हैं। भक्त मान लेता है कि मैं श्री विष्णु जी का भक्त हूँ, उसी ने आज मेरे संकट का निवार्ण किया है। परमात्मा उसी के ईष्ट का रूप धारण करके उस भक्त की आस्था भक्ति और भगवान में दृढ़ कर देता है अन्यथा श्री राम पर संकट आया, समुद्र पर पुल बनाना था, नहीं बन पाया था, वहाँ परमात्मा ऋषि मुनिन्द्र के रूप में गए, आस-पास के पहाड़ को हल्का कर दिया, वे पत्थर तैरने लगे आज तक तत्वज्ञान के बिना हम सुनते थे कि श्री राम ने समुद्र पर पत्थर तैरा दिए।

फिर सुनते थे कि नल तथा नील के हाथों में चमत्कारी शक्ति थी। उनके हाथ लगने से पत्थर तैरने लगे। कभी कहते थे कि हनुमान जी ने पत्थरों पर राम नाम लिख दिया तब पत्थर तैरने लगे और समुद्र पर पुल बनाया गया। वास्तविकता यह है कि पूर्ण परमात्मा ही सर्व कार्य करता है परन्तु वह अपने सिर नहीं लेता। अन्य देव या ऋषि के नाम कर देता है, क्योंकि सर्व जीव उसी पूर्ण परमात्मा की आत्मा हैं इसलिए वही सर्व का सहायक है।

करै करावै साइयाँ, मन में लहर उठाय।
दादू सिर कर जीव के, आप बगल हो जाय।।

➢ **विशेष विवेचनः-** एक तीन वर्ष का बच्चा मूसल (जो काष्ट का मोटा डण्डा होता है जिसकी ऊँचाई लगभग 6 फुट परिधि एक फुट तथा उसका भार लगभग 7 कि.ग्राम होता है) को ऊठाने का प्रयत्न करता है, मूसल दीवार के साथ खड़ा था। उसके पिता जी उसको मना करते हैं परन्तु वह रोने लगता है, पिताजी बच्चे के पीछे खड़ा होकर उस मूसल को ऊपर से पकड़ के स्वयं उठा लेता है। वह बच्चा अपने दोनों हाथों से उस मूसल को पकड़ कर चल पड़ता है। वह सोच रहा है कि मैनें मूसल उठा लिया है पिताजी उसे प्रसन्न करने के लिए कहता है कि देखो-देखो मेरे बेटे ने कितना बड़ा मूसल उठा रखा है। बच्चा भी प्रसन्न मुद्रा में होकर मान रहा है कि सच में मैं ही मूसल को उठा कर चला हूँ। परन्तु वास्तविकता इसके विपरित है। वह 3 वर्ष का बच्चा उस भारी मूसल को कभी नहीं उठा सकता। वह तो पिताजी स्वयं उठा कर उसको खुश करने के लिए कह रहे थे। प्रिय भक्तजन प्रतिदिन ''असुर निकन्दन रमैणी'' का पाठ करते हैं, उसमें यही समझना है कि मूसल

उठाने वाला कोई अन्य है। इनको तो बच्चे की तरह मात्र खुश किया है। इसी प्रकार सन्त गरीब दास की वाणी को समझें। फिर आप जी को शंका नहीं रहेगी।

➢ श्री कृष्ण जी पर जन्म से ही आपत्ति आने लगी थी। जेल में जन्म हुआ, मामा कंस दुःश्मन हो गया, कभी केशी राक्षस मारने आया, कभी जरासंध, कभी पूतना राक्षसी विष दूधी के लगाकर मारने आई।

श्री कृष्ण जी तो बालक थे। उनकी रक्षा भगवान पूर्ण परमात्मा कविर्देव(कबीर साहेब) ही कर रहे थे। महिमा श्री कृष्ण जी की हो गई।

विचार करें :- श्री कृष्ण जी की आँखों के सामने 56 करोड़ यादव अर्थात् श्री कृष्ण जी को पूरा कुल तथा परिवार दुर्वासा ऋषि के शाप से आपस में लड़ कर मर गया।

श्री कृष्ण जी के पैर में एक शिकारी ने विषाक्त तीर मारा जिस से कृष्ण जी की मृत्यु हुई। वे अपनी रक्षा नहीं कर सके, न अपने कुल को दुर्वासा ऋषि के शाप से बचा पाए।

पूर्ण परमात्मा ने भक्त समाज में भक्ति की आस्था बनाए रखने के लिए श्री कृष्ण जी की संस्कार वश पहले रक्षा की, पश्चात् श्री कृष्ण भक्तिहीन तथा पुण्यहीन हो गया तब परमात्मा ने भी उनकी मदद नहीं की।

❋ महाभारत में एक कथा लिखी है :-

एक टटीरी पक्षी थी। उसने कुरूक्षेत्र के मैदान में अण्डे उत्पन्न कर दिए। उसी समय कौरव-पाण्डवों का युद्ध महाभारत शुरू हो गया।

टटीरी पक्षी ने परमात्मा को पुकारा तथा अपने अण्डों की रक्षा की अर्जी लगाई। वह पक्षी न तो श्री विष्णु जी की पुजारन थी न कृष्ण जी की। उसके संस्कार वंश पूर्ण परमात्मा ने ही उस के अण्डों की रक्षा की।

ठीक इसी प्रकार परमात्मा ने ही नरसिंह रूप बना कर भक्त प्रहलाद की रक्षा की तथा हिरण्यकशिपु का पेट फाड़कर मारा, अन्त में विष्णु रूप धारण करके प्रहलाद को दर्शन दिये क्योंकि वह श्री विष्णु जी का पुजारी था।

इसी कारण से आज तक परमात्मा चाह तथा महिमा कायम रही। अब यह भक्ति काल प्रारम्भ हो गया है। सन् 1997 से बिचली पीढ़ी का समय है। अब तक परमात्मा की चाह हमारे अन्दर बनाए रखने के लिए उस पूर्ण परमात्मा ने ही सर्व लीला करके श्री राम तथा श्री कृष्ण(विष्णु) जी के निमित किया है।

**पीछे लिखी सत ग्रन्थ की वाणियों में एक शब्द है :-**

राम कह मेर साध को, दुःख ना दिजो कोय।
साध दुखाऐ मैं दुःखी, मेरा आपा भी दुःखी होय।
हिरणाकुश उदर(पेट) विदारिया(फाड़ा) हम ही मारा कंश।
जो मेरे भक्त को आन दुःखावै, उसका खोदूं वंश।

**फिर एक वाणी है :-**

राम–कृष्ण सतगुरू सहजादे, भक्ति है यों हुए प्यादे।

**इस वाणी का भावार्थ है कि श्री राम-श्री कृष्ण(श्री विष्णु) जी भी परमात्मा के बच्चे हैं। अच्छे बच्चों में से हैं। उनकी रक्षा करना भी उसी परमात्मा के लिए अनिवार्य है।**

**इस प्रकार सन्त गरीबदास जी को अमर वाणी में(सत ग्रन्थ में) जहां कहीं भी श्री राम कृष्ण, विष्णु जी की महिमा कही है। वह केवल साधकों की आस्था भगवान में बनाए रखने के लिए है। ध्यान रहे कि तीनों देवता(श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) अपने साधक को केवल किया कर्म ही दे सकते हैं। ये प्रारब्ध कर्म में कोई फेर-बदल नहीं कर सकते। पूर्ण परमात्मा अपने साधक के सर्व पाप कर्मां का नाश करके अपने भक्त को सुखी कर देते हैं, वह पूर्ण परमात्मा कविर्देव अर्थात् कबीर साहेब जी हैं।**

**गरीब दास जी ने पूर्ण परमात्मा की महिमा में लिखा है :-**

गरीब, मासा–घटे ना तिल बधै, विधना लिखे जो लेख।
साच्चा सतगुरू मेटि कर, ऊपर मारै मेख।।
गरीब, जम–जौरा जासै डरैं, मिटे कर्म के लेख।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सतगुरू एक।।

# सृष्टि रचना (भाग-1)

## (सृष्टि रचना का ''कबीर सागर'' में प्रमाण)

अब आपको सृष्टि रचना सुनाते हैं जो परमेश्वर जी ने अपने मुख कमल से बोली है तथा जो मूल ज्ञान अभी तक छुपा रखा था वह संत रामपाल दास जी महाराज को दिया है जो कबीर सागर तथा सत ग्रन्थ(गरीबदास जी की वाणी) से भी भिन्न विस्तृत है। जो इन ग्रन्थों में नहीं लिखा गया है। इन ग्रन्थों में बहुत सारा ज्ञान है जो सांकेतिक है। इन ग्रन्थों के ज्ञान तथा गुप्त मूल ज्ञान के आधार से सृष्टि की रचना तथा अध्यात्मिक ज्ञान आप जी को सुनाया जा रहा है। इस के अतिरिक्त सर्व ज्ञान अधूरा है। सृष्टि की उत्पत्ति जो परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को बताई वह धर्मदास जी के द्वारा लिखी गई फिर भी अधूरी थी, उसको पूर्ण रूप से सुनाने का राज अर्थात् जो मूल ज्ञान संत रामपाल दास जी महाराज को दिया इन सब का मिश्रण करके अब यथार्थ सृष्टि रचना विस्तार से बताई गई है। :-

कृपया देखें अगले पृष्ठों पर कबीर सागर से अध्याय ''अनुराग सागर'' की वाणी :- जिसके आधार से सृष्टि रचना को लिखा है। इसके साथ-२ मूल ज्ञान से सर्व गुप्त रहस्य लिखे गए हैं। कबीर सागर में कुछ त्रुटियां छपने में हुई हैं। कुछ काल के दूतों नकली कबीर पंथियों ने की है। उनको ठीक करके समझाया गया है। शुद्धि के लिए एक 450 वर्ष पुराना हस्तलिखित जीर्ण-शीर्ण कबीर सागर को आधार माना है। कृप्या पढ़ें विस्तृत सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 63 पर भाग-2 में।

(१२) 136 अनुरागसागर

कबीर वचन

धर्मदास तुम अंस अंकूरी। मोहि मिलेउ कीन्हे दुख दूरी॥
जस तुम कीन्हे मोमन नेहा। तजि धन धाम रु सुत पितु गेहा॥
आगे शिष्य जो अस विधि कहिहैं। गुरुचरण मन निश्चल धरिहैं॥
गुरु के चरण प्रीत चित धारै। तन मन धन सतगुरु पर वारै॥
सो जिव मोहिं अधिक प्रिय होई। ताकहँ रोकि सकै नहिं कोई॥
शिष्य होय सरबस नहिं वारे। हृदय कपट मुख प्रीति उचारे॥
सो जिव कैसे लोग सिधाई। बिन गुरु मिलै मोहिं नहिं पाई॥

अवीसी कर्म धनदाता

यह सब तो प्रभु आपहि कीन्हा। नहिं तो हतो मैं परम मलीना॥
करके दया प्रभु आपहिं आये। पकड़ि बांह प्रभु काल छुड़ाये॥

सृष्टि उत्पत्ति विषय प्रश्न

अब साहब मोहिं देउ बताई। अमर लोग सो कहां रहाई॥
लोक दीप मोहिं बरनि सुनावहु। तृषनावन्त को अमी पियावहु॥
कौन द्वीप हंस को वासा। कौने द्वीप पुरुष रह वासा॥
भोजन कौन हंस तहँ करई। और बानी कहँ पुनि उच्चरई॥
कैसे पुरुष लोग रचि राखा। द्वीपहिं करकैसे अभिलाखा॥
तीन लोक उत्पत्ती भाखो। वर्णहु सकल गोय जनि राखो॥
कालनिरंजन केहि विधि भयऊ। कैसे षोडश सुत निर्मयऊ॥
कैसे चार खानि बिस्तारी। कैसे जीव कालवश डारी॥
कैसे कूर्म शेष उपराजा। कैसे मीन बराहहिं साजा॥
त्रय देवा कौने विधि भयऊ। कैसे महि अकाश निरमयऊ॥
चन्द्र सूर्य कहु कैसे भयऊ। कैसे तारागण सब ठयऊ॥
किहि विधि भइ शरीर की रचना। भाषो साहब उत्पत्ति बचना॥
जाते संशय हो उच्छेदा। पाय भेद मन होय अखेदा॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 12(136) की है। इसमें आदरणीय धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से पूछा कि हे ! सर्व के सिरजनहार ! कृपया मुझे बताईये कि आप ने सर्व ब्रह्मंडों की रचना कैसे की। 1. सर्व लोक कैसे बने? 2. त्रयदेव (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई? 3. कैसे 16

पुत्रों की उत्पत्ति हुई? 4. काल निरंजन कैसे बना? 5. चार खानि कैसे बनी? आदि-आदि हे परमात्मा ! आप सत्यवक्ता हैं, कृपया मेरी शंका का समाधान कीजिए।

परमात्मा कबीर जी ने अपने द्वारा रची सृष्टि का वर्णन पृष्ठ 13(137) से बताना प्रारम्भ किया। कृप्या पढ़ें फोटो कापी :-

अनुरागसागर 137 (१३)

छन्द

आदि उत्पतिकहोसतगुरु, कृपाकरी निजदासको ॥
बचन सुधा सु प्रकाश कीजै,नाश हो यमत्रासको॥
एक एक विलोयबर्णहु, दास मोहि निज जानिकै॥
सत्य वक्ता सदगुरू तुम,लेब निश्चयमानिकै॥१०॥
सो०·निश्चयबचनतुम्हार,मोहिंअधिकप्रियताहिते॥
लीला अगम अपार,धन्यभाग दर्शन दिये॥१०॥

कबीर वचन

धर्मदास अधिकारी पाया। ताते मैं कहि भेद सुनाया ॥
अब तुम सुनहु आदिकी बीनी। भाषों उत्पति प्रलय निशानी॥

सृष्टिके आदिमें क्या था ?

तबकी बात सुनहु धर्मदासा। जबनहिंमहिपाताल अकाशा॥
जब नहिं कूर्म बराह और शेषा। जब नहिं शारदगौरिगणेशा ॥
जब नहिं हते निरंजन राया। जिनजीवनकहबांधिझुलाया॥
तेतिस कोटि देवता नाहीं। और अनेक बताऊ काहीं ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश न तहिया। शास्त्र वेद पुराण न कहिया॥
तब सब रहे पुरुषके माहीं। ज्यों बट वृक्ष मध्य रह छाहीं॥

छन्द

आदि उत्पति सुनहु धर्मनि,कोइ न जानत ताहिहो॥
सबहि भो बिस्तार पाछे, स्वास देउँ मैं काहि हो॥
वेदचारो नाहिं जानत, सत्य पुरुष कहानियाँ ॥
वेदको तब मूल नाहीं,अकथकथा बखानियाँ॥११॥
सोरठा–निराकारतै वेद, आदिभेद जाने नहीं ॥
पण्डित करत उछेद,मते वेदके जग चले॥११॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ

13(137) की है :- परमेश्वर कबीर जी ने अपने द्वारा रची सृष्टि को बताया है, अपने आपको छुपा कर अपनी महिमा तथा सृष्टि रचना सुनाई है, कहा कि ''हे धर्मदास! आप मुझे इस तत्वज्ञान को बताने के अधिकारी पाए, इसलिए मैं आपको सुनाता हूँ, सुनो ''उस समय की बात जिस समय परमात्मा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। परमपुरूष एक विशाल कमल के फूल पर विराजमान थे तब वेद आदि ग्रन्थ भी नहीं थे। जिस कारण से इन वेदों में सृष्टि रचना की जानकारी नहीं है। वेदों के आधार से पण्डित जन ऊआ-बाई का ज्ञान बता रहे हैं। इन्हें आध्यात्मिक ज्ञान नहीं है। (यही प्रमाण श्री देवी पुराण, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित ''सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी'' के पृष्ठ 414 पर लिखा है कि सत्ययुग के ब्राह्मण वेद के पूर्ण विद्वान थे तथा श्री देवी (दुर्गा) की उपासना करते थे।

विचार करें :- वेदों में कहीं पर भी श्री देवी की उपासना का वर्णन नहीं है। इससे सिद्ध है कि ब्राह्मण वर्ग ऊआ-बाई अर्थात् कोरी बकवास ज्ञान बताया करते हैं।

देखें फोटो कापी श्री देवी महापुराण के पृष्ठ 414 इसमें यह भी स्पष्ट है कि कलयुग के ब्राह्मण इससे पहले के युगों के राक्षसों के तुल्य हैं।

जनमेजयने पूछा—महाभाग ! किस युगमें कैसा धर्मका स्वरूप है—इस सम्पूर्ण विषयको विशेषरूपसे बतानेकी कृपा कीजिये।

व्यासजी बोले—नृपशार्दूल !

राजन् ! यह निश्चय है कि सत्ययुगमें ब्राह्मण वेदके पूर्ण विद्वान् थे। उनके द्वारा निरन्तर भगवती जगदम्बाकी आराधना होती थी। भगवतीका दर्शन करनेके लिये उनका मन सदा लालायित रहता था। गायत्रीके ध्यान, प्राणायाम और जपमें वे अपना सारा समय व्यतीत करते थे। मायाबीजका जप करना उनका प्रधान कार्य था। प्रत्येक गाँवमें शक्ति-मन्दिरका उद्घाटन हो—इस विषयकी उनके मनमें बड़ी उत्सुकता थी। प्रायः सब लोग सत्य, दया और शौचसे युक्त होकर अपना कार्य सम्पन्न करते थे। तत्त्वज्ञानके पारगामी उन ब्राह्मणोंद्वारा जो भी कर्म होता था, उसमें सत्य, शौच और दया—ये तीनों गुण निहित रहते थे। राजन् ! उन प्राचीन युगोंमें जो राक्षस समझे जाते थे, वे कलिमें ब्राह्मण माने जाते हैं, क्योंकि अबके ब्राह्मण प्रायः पाखण्ड करनेमें तत्पर रहते हैं। दूसरोंको ठगना, झूठ बोलना और वैदिक धर्म-कर्मोंसे अलग रहना—कलियुगी ब्राह्मणोंका स्वाभाविक गुण बन गया है।

( १४ ) 138 अनुरागसागर

सृष्टिकी उत्पत्ति सतपुरुषकी रचना

सत्य पुरुष जब गुपत रहाये । कारण करण नहीं निरमाये॥
समपुट कमल रह गुत सनेहा । पुहुपमाहिं रह पुरुष विदेहा॥
इच्छा कीन्ह अंश उपजाये । हंसन देखि हरष बहुपाये ॥
प्रथमहिं पुरुषशब्द परकाशा । दीपलोकरचि कीन्ह निवासा॥
चारि कर सिंहासन कीन्हा । तापर पुहुप दीपकर चीन्हा ॥
पुरुष कला धरि बैठे जहिया । प्रगटी अगर वासना तहिया॥
सहस अठासी दीपरचि राखा । पुरुष इच्छातैं सबअभिलाखा॥
सबै द्वीप रह अगर समायी । अगर वासना बहुत सुहायी॥

सोलह सुतका प्रगट होना

दूजे शब्द भयेजुपुरुषप्रकाशा । निकसे कूर्मचरण गहि आशा॥
तीजे शब्दभयेजुपुरुष उच्चारा । ज्ञान नाम सुत उपजे सारा॥
टेकी चरण सम्मुख ह्वै रहेऊ । आज्ञा पुरुषद्वीपतिन्ह दएऊ॥
चौथे शब्द भये पुनि जबहीं । विवेकनाम सुत उपजे तबहीं॥
आप पुरुष किये द्वीपनिवासा। पंचम शब्दसो तेज परकासा॥
पांचवे शब्द जब पुरुष उच्चारा। काल निरंजन भो औतारा॥
तेज अंगते काल ह्वै आवा । ताते जीवन कह संतावा ॥
जीवरा अंश पुरुषका आहीं । आदिअन्त कोउ जानत नाहीं॥
छठे शब्द पुरुष मुख भाषा । प्रगटे सहजनाम अभिलाषा॥
सतयें शब्द भयो संतोषा । दीन्हो द्वीप पुरुष परितोषा॥
अठयें शब्द पुरुष उचारा । सुरति सुभाष द्वीप बैठारा ॥
नवमें शब्द आनन्द अपारा । दशयें शब्द क्षमा अनुसारा॥
ग्यारहें शब्द नाम निष्कामा । बारहें शब्द जलरंगी नामा॥
तेरहें शब्द अचिंत सुत जाने । चौदहें शब्द सुत प्रेम बखाने॥
पन्द्रहें शब्द सुत दीन दयाला। सोलहें शब्दभे धीर्यरसाला ॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 14(138) की है। परमेश्वर कबीर जी ने बताया :- सत्यपुरूष (जो स्वयं कबीर जी हैं) पहले कमल के फूल पर विलक्षण देह (विदेह) में विराजमान थे। फिर परमपुरूष ने स्वइच्छा से अपने वचन से अंश उत्पन्न किए, जिनको हंस कहा गया। उनको देखकर सत्यपुरूष अति प्रसन्न हुए। इससे पहले अर्थात् प्रथम बार परमात्मा ने एक वचन उच्चारण किया। जिससे सर्व द्वीप तथा लोकों की रचना की। सर्व प्रथम ऊपर के चार लोकों (1. अकह लोक जिसे अनामी

लोक भी कहते हैं। 2. अगम लोक। 3. अलख लोक। 4. सत्यलोक) की रचना की। प्रत्येक लोक में सिंहासन की भी रचना की तथा प्रत्येक लोक में स्वयं परमपुरूष भिन्न रूप बनाकर नराकार (पुरूष रूप में) में राजा की तरह विराजमान हुआ। सत्यलोक में बैठ कर परमात्मा ने सत्यलोक के अन्दर अन्य द्वीप तथा आत्माओं की रचना वचन से की। विस्तृत जानकारी के लिए कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 63 से 70 तक।

नोट :- इस ''अनुराग सागर'' अध्याय के पृष्ठ 14(138) में कुछ मिलावट है जो इस प्रकार है। ऊपर से पंक्ति सं. 14-15-16 में मिलावट है। प्रमाण :- ''सोलह सुत का प्रकट होना'' इसमें प्रथम पंक्ति में दूजे शब्द से कर्म की उत्पत्ति। फिर दूसरी पंक्ति में तीसरे शब्द से ''ज्ञान'' पुत्र की उत्पत्ति हुई। चौथी पंक्ति में चौथे शब्द से ''विवेक'' नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई। पाँचवीं पंक्ति में कहा है कि परमपुरूष ने अपने द्वीप में बैठे-२ पांचवें शब्द से ''तेज'' नामक पुत्र की उत्पति की। इससे आगे छटी (ऊपर से 14वीं) पंक्ति में मिलावट है कि इसमें पुनः लिया है कि पाँचवें शब्द से निरंजन उत्पन्न हुआ यह गलत है फिर सातवीं (ऊपर से 15 वीं) तथा आठवीं (ऊपर से 16 वीं) पंक्तियों में भी मिलावट है। इसके पश्चात् नौंवीं (ऊपर से 17वीं) पंक्ति से ठीक विवरण है। छटे शब्द से पुरूष ने ''सहज'' नामक पुत्र की उत्पत्ति की।

''कबीर सागर के अध्याय = कबीर बानी'' के पृष्ठ 98(962) तथा अध्याय ''सर्वज्ञ सागर'' पृष्ठ 137(429) तथा अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' पृष्ठ 91(1453) तथा 92(1454) पर प्रमाण है। (कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 51 से 53 पर।) परमेश्वर ने अचिन्त को सृष्टि रचने को कहा। अचिन्त ने अक्षर की उत्पत्ति की, ''अक्षर'' फिर सरोवर में गहरी नींद में सो गया। उसको जगाने के लिए सत्य पुरूष जी ने एक अण्डा वचन से बनाया। उसमें एक आत्मा प्रवेश की, उस अण्डे को सरोवर में छोड़ा। उसकी गड़गड़ाहट से ''अक्षर पुरूष'' नींद से जागा। उसकी दृष्टि अण्डे पर पड़ी। उससे अण्डा फट गया। अण्डे से ज्योति निरंजन उत्पन्न हुआ। यह भी सत्य पुरूष का 17 वां पुत्र कहलाया। इससे स्पष्ट हुआ की तीन पंक्तियाँ (14-15-16) पृष्ठ 14(138) में प्रक्षिप्त (मिलावट) हैं। श्री मधु परमहंस (रांजड़ी=जम्मू वाला) अट-बट करके इसी अज्ञान आधार से सृष्टि रचना सुनाता है, वह अज्ञानी है।

सृष्टि रचना का विस्तारपूर्वक ज्ञान कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 63 से 88 तक।

सर्वज्ञसागर 429 (१३७)

सुरति बुन्द तब तासों लीन्हा । सोई बुन्द अधर महँ दीन्हा ॥
ताहि बुन्दके अक्षर भयऊ । स्वर स्वासा हो बाहर गयऊ ॥
पुरुष अचिन्त आज्ञा सब दीन्हा । तेज अण्ड जो बैठक लीन्हा ॥
बारह पालंग अण्ड है सोई । तेहि मों सृष्टि तुम्हारी होई ॥
अच्छर आनन्द ताहि समाया । तामें परकृति सुरति उपजाया ॥
प्रकृति तें चारि अंश निर्मायी । देखि अंश आनन्द समायी ॥
तेहि अनन्द सो निद्रा आयी । सत्तर निमिष जब गयो सिरायी ॥
चारों जने समाधि लगायी । ताको मरम कहौं समझायी ॥
तब सतगुरु एक अवगति कीन्हा । जल तत्त्व ते अण्ड तब दीन्हा ॥
जब अण्डा जलमें उतराना । तब अन्तर निद्रा विलगाना ॥
अक्षर मनमें कीन्ह विचारा । विकल भये तबहीं पगु धारा ॥
चले चले अण्डा लगि आवा । देखत अण्ड क्रोध उपजावा ॥
सोई क्रोध अण्डमें आवा । तेज शक्ति ताकर प्रभावा ॥
तेहि कारण सो फूटयो भाई । तेहिते निरंजन उपजाई ॥
कालरूप सो प्रकट प्रचण्डा । महा भयानक रूप अखण्डा ॥
अक्षर मनमें शंका आई । तब चारों सुतन कहँ लीन्ह बुलाई ॥
उनको बहुत भांति समुझाई । पृथ्वी बीज धरौ तुम जाई ॥
जग उत्पति तापै होय भाई । कूर्म शेष पृथ्वी थाह्यो जाई ॥
जाते पृथ्वी डगै नहिं भाई । साइ उपाय करौ तुम जाई ॥
धर्मराय तुम लेखा लेहू । सकल सृष्टि को लेखा देहू ॥
चारों अंश को सिखाप दीन्हा । आप वास मुक्तिदीपमें लीन्हा ॥

साखी–यह रचना अचिन्तक, अक्षर को विस्तार ॥
निरंजन बैठे शुभ शिखर, मान सरोवर द्वार ॥

चौपाई

पुरुष अचिंत अस चित्त विचारा । सन्धि सुरति घट में उचारा ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''सर्वज्ञ सागर'' के पृष्ठ 137(429) की है। इसमें ऊपर से 9 से 15 पंक्तियों में प्रमाण है कि ''सतगुरू (परमात्मा) ने जल तत्व से अण्डा बनाया। उसको उस जल में छोड़ा जहाँ पर अक्षर पुरूष सोया था। अक्षर पुरूष ने अण्डे पर दृष्टि डाली जिससे अण्डा फट गया। उस अण्डे से ज्योति निरंजन काल की उत्पत्ति हुई। इससे सिद्ध हुआ कि ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 14(138) पर पंक्ति 14-15-16 (ऊपर से) में लिखा विवरण मिलावट है, गलत

है। जिसमें लिखा है कि परमात्मा ने पाँचवे शब्द से तेज उत्पन्न करके उसी से ज्योति निरंजन उत्पन्न किया। वास्तविकता आपजी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे जो पृष्ठ 63 से 73 तक लिखी है।

स्वसमवेदबोध 1453 (९१)

जाते ओहं पुरुष भे अंशा। ओहं सोहं भे द्वै अंशा ॥
ताको आज्ञा उत्पति कीना। शब्द संधि उनहूको दीना ॥
मूल सुरति अरु पुरुष पुराना। रचना बाहर कीनो थाना ॥
ओहं सोहं अंडन रहेऊ। सकल सृष्टि के करता भयऊ ॥
प्रथम अँकु दुज इच्छा संगा। तीसर मूल चौथ सोहंगा ॥
ओहं सोहं कीन प्रमानी। आठ अंश भे तिनते उतपानी ॥
आठ अंश भे एक निधाना। करता सृष्टि भये परमाना ॥
सात अंशके नाम बखानो। जिनते सकल सृष्टि बंधानो ॥
प्रथम मूल अंकूर गनीजै। इच्छा सहज साहंग भनीजै ॥
पुनि अचिंत फिर अक्षर भेऊ। बृद्धि हेत करता निरमैऊ ॥
सातो अंश जीव हितकारी। जिव कल्यान काज तन धारी॥
यहिविधि रचना करि करतारा। पुनि अपने मनमाहिं विचारा ॥
बिना काल नहिं जीव डेराई। कोइ न भक्ति भजन मन लाई ॥
तिहि औसर प्रभु काल उपाया। जाकी डर सब जीव डेराया ॥
जप तपादि संयम जो करनी। काले के डरतें सो सब बरनी ॥
सात अंश जिव दाया करता। अष्टम काल भयो संहरता ॥
सोरठा-वृद्धि हेत भे सात, अष्टम नास्तिकि हेत है।
स्वसमवेद विख्यात, तिनते सब रचना भई ॥

चौपाई

द्वीपन द्वीप अंश बैठारा। सातो जहँ तहँ कीन पसारा ॥
अक्षर कीन जहाँ निज थाना। तहँ समूहजल तत्त्व बखाना ॥
अक्षर सुरति पुरुषकी बानी। त्रिगुण तत्त्व घटमाहिं समानी॥
तब अक्षर को निद्रा आई। सोरह चौकरी सोय सिराई ॥
अक्षर सुरति मोहमें आई। ताते दूसरे अंश उपाई ॥
अंडस्वरूपी जलमहँ दीना। यह अविगति समरथने कीना ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 91(1453) की है। इसमें स्पष्ट है कि ''जब अक्षर पुरूष सोया हुआ था, उसको जगाने के लिए परमात्मा ने एक अण्डा उत्पन्न करके जल में छोड़ा। अगले पृष्ठ 92(1454) पर लिखा है तब अक्षर पुरूष जागा। इस फोटोकापी (पृष्ठ 91=1453) में आपजी ने दो शब्द पढ़े 1. ओहं=ओम्

2. सोहं। ये दो मूल मन्त्र हैं। ओहं (ओम्) मंत्र है क्षर पुरूष अर्थात् काल ब्रह्म का व सोहं मन्त्र अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का है। हम सर्व प्राणी काल के जाल में क्षर पुरूष के लोक में रह रहे हैं। यहाँ से मोक्ष प्राप्ति के लिए इन मन्त्रों का प्रयोग करना होता है। इस मन्त्रों के जाप की कमाई करके इन दोनों पुरूषों (प्रभुओं) का ऋण उतारना होता है, जाप की विधि केवल उपदेशी को ही बताई जाएगी।

(९२) 1454 बोधसागर

अक्षर जागा निद्रा जाई। देखि अंड व्याकुलता आई ॥
चकृत भा यह किन निरमाई। अंडदृष्टिने देखो भाई ॥
चहुँदिशि तहाँ रहे जल छाये। अंडा तापर तरे भाये ॥
अक्षर ढिग अंडा लगि आवा। तामें लिखी हकीकत पावा ॥
ऐसी तामें लिखी निशानी। परमपुरुषकी सो सहिदानी ॥
तुम लगि हम यक अंश पठाई। रचना करो सृष्टिकी भाई ॥
तुमते सो करिहै बरिआई। आवन देहु जहाँ लगि आई ॥
सत्रहसौ युग ऊपर तीसा। तासु महातम कर जगदीशा ॥
बहुरि महातम होय तुमारा। कालजालते जीव उबारा ॥
काल पुरुष तब पुरुष समाई। तासु महातम तब उठि जाई ॥
तब सब जीव मुक्ति पद पैहैं। फेरि न चौरासीमें ऐहैं ॥
ऐसो अंडप लिखा निहारी। अक्षर पढि मनमाहिं विचारी ॥
अक्षर दृष्टि अंड बिहराना। ताते काल बली प्रकटाना ॥
सोइ ज्योति निरंजन भयऊ। जाको सब जग करता कहेऊ ॥
अक्षर सुरति पुरुषकी बानी। ताते काल भयौ अभिमानी ॥
निरंजननाम अक्षरने भाषा। समरथ शब्द हृदयमें राखा ॥
प्रभु निज तेजते काल उपाया। ताते सकल सृष्टि दुख पाया ॥
यकपग काल रह्यो पुनि ठाढो। युग सत्तर कीनो तप गाढो ॥
तपमें येते काह बिताई। मांगु मांगु वर कह तब साँई ॥
कहै काल प्रभु यह वर दीजे। तिहूँ लोकको राज करीजे ॥
भवसागरमें राज हमारा। सुनि समर्थ अस वचन उचारा॥
पुत्र जाहु पृथ्वीके मूला। जहाँ कूर्म बैठे अस्थूला ॥
सृष्टि भंडार कूर्मको भाई। सोलह माथ चौंसठहाथ पाई ॥
ताते लेहु सृष्टिकी रचना। शीश नाय बोलेहु मृदुवचना ॥
तीन लोकको पायो राजू। धर्मराय तब निज डर गाजू ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 92(1454) की है। इसमें भी स्पष्ट है कि परमात्मा ने जो अण्डा जल

तत्व से बनाकर उस सरोवर के जल में डाला जहाँ अक्षर पुरूष सोया था। उससे अक्षर पुरूष जागा। अण्डे को देखा, उस अण्डे से ज्योति निरंजन (काल) की उत्पत्ति हुई। फिर उस काल ब्रह्म ने तप करके अपनी भिन्न सृष्टि की सामग्री माँगी।

इससे भी सिद्ध हुआ कि ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 14(138) की 14-15-16 (ऊपर से) पंक्तियाँ मिलावट हैं। जिनमें लिखा है कि पाँचवें शब्द से निरंजन काल को उत्पन्न किया। उसमें 13वीं पंक्ति में स्पष्ट है कि परमेश्वर ने पाँचवे शब्द से ''तेज'' नामक पुत्र को उत्पन्न किया। फिर 17वीं पंक्ति में लिखा है कि छटे शब्द से परमात्मा ने ''सहज'' नामक पुत्र उत्पन्न किया, यह ठीक है। इससे आगे का विवरण 14(138) वाला अनुराग सागर का ठीक है।

अनुरागसागर 139 (१५)

सत्रहवें शब्दसुतयोगसंतायन ।एक नाल षोडषसुत पायन॥
शब्दहिते भयो सुतन अकारा । शब्दते लोक द्वीप विस्तारा॥
अग्र अभी दिव्य अंश अहारा। द्वीप द्वीप अंशन बैठारा ॥
अंशन शोभा कला अनन्ता । होततहांसुख सदा बसन्ता॥
अंशन शोभा अगम अपारा ।कला अनन्त को वरणै पारा॥
सब सुत करें पुरुषको ध्याना । अमीअहार सदासुख माना॥
याही बिधि सोलह सुत भेऊ । धर्मदास तुम चितधरि लेऊ॥
द्वीप करी को अनत शोभा, नहि बरणतसो बने ॥
अमितकल अपार अद्भुत, सुनत शोभाको गने ॥
पुरके उजियारसे सुन, सबै द्वीप अजो रहो ॥
सत पुरुषरोम प्रकाश एकहि,चन्द्र सूर्य करो रहो ॥
सो०–सतगुरुआनँधाम, शोकमोहदुःख तहँ नहीं ॥
हंसनको विश्राम, पुरुष दरश अँचवन सुध ॥१२॥

निरंजनकी तपस्या और मानसरोवर तथा शून्यकी प्राप्ति

यहिविधिबहुतदिवसगयेबीती। ता पीछे ऐसी भइ रीती ॥
धरमराय अस कीन्हतमासा । सो चरित्र बूझहु धर्मदासा ॥
युग सत्तर सेवा तिन कीन्ही।इकपद ठाढ पुरुष हर्षित दीन्ही॥
सेवा कठिन भांति तिनकीन्हा।आदिपुरुष हर्षित होय चीन्हा॥

पुरुष वचन निरंजन प्राप्ति

पुरुष अवाज उठी तब बानी । कहा जानि तुम सेवा ठानी॥

निरंजनवचन

कहै धरम तब सीस नवायी । देहु ठौर जहां बैठों जायी ॥
आज्ञा किये जाहु सुत तहवाँ । मानसरोवर द्वीप है जहवाँ ॥
चल्यो धरम तब मानसरोवर । बहुत हरषचितकरतकलोहर ॥

★ यह फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 15(139) की है। इसमें प्रमाण है कि परमात्मा कबीर जी ने 16 पुत्रों की उत्पत्ति की। उसके पश्चात् सर्व पुत्रों को भिन्न-भिन्न द्वीप दिए व उनमें परमात्मा का ध्यान करने लगे।

विशेष :- अनुराग सागर में काल प्रेरित कबीर पंथियों ने फेर-बदल कर दिया है। इससे वह प्रकरण काट दिया है जिसमें ''ज्योति निरंजन (काल) की उत्पत्ति अण्डे से हुई थी तथा अक्षर पुरूष निंद्रा में था। वह

भी अण्डे की आवाज से सूता जागा था। उसी के कोप के तेज से अण्डा फूटा था तथा क्षर पुरूष (काल निरंजन) की उत्पत्ति हुई थी।'' जो पृष्ठ 98(962) पर।

इस पृष्ठ 15(139) में 16 वीं पंक्ति (ऊपर से) में प्रमाण है कि ज्योति निरंजन (काल पुरूष) ने प्रथम बार सत्तर (70) युग तप करके स्थान माँगा।

( १६ ) 140 अनुरागसागर

मान सरोवर आये जहिया । भये आनन्द धरमपुनि तहिया॥
बहुरि ध्यान पुरुषको कीन्हा । सत्तर जुग सेवा चित दीन्हा॥
यक पग ठाढे सेवा लायी । पुरुष दयालु दया उर आयी॥

पुरुषवचन सहजप्रति

विकस्यो पुरुषउठ्योजब बानी। बोलत बचन उठ्यो अधरानी॥
जाहु सहज तुम धरमके पासा। अबकस ध्यानकीन्ह परकासा॥
सेवा बहु कीन्हा धर्मराऊ । दियो ठौर वहि जहाँ रहाऊ ॥
तीन लोग तब पलमें दीन्हा। लखिसेवकाइ दया अस कीन्हा॥
तीन लोक कर पायो राजू । भयो अनन्द धरम मन गाजू॥
अबका चाहैं पूछो जाई । जो कुछ कह सो देउ सुनाई॥

सहजका निरंजनके पास जाना

चले सहज तब सील नवाई । धरमराय पहँ पहुँचे जाई ॥
कहे सहज सुनु भ्राता मोरा । सेवा पुरुष मान लइ तोरा ॥
अबका मांगहु सो कह मोही । पुरुष अवाज दीन्हा यह तोही॥

निरञनवचन सहजप्रति

अहो सहज तुम जेठे भाई । करो पुरुष सो बिन्ती जाई ॥
इतना ठाव न मोहि सुहाई । अब मोहि बकसि देहहु ठकुराई॥
मोरे चित असभौ अनुरागा । देउ देश मोहि करहु सभागा॥
कै मोहि देवलोक अधिकारा । कै मोहि देहु देश यक न्यारा॥

सहजवचन सत्पुरुषप्रति

चले सहज सुन धर्मकी बाता । जाय पुरुषसो कहे विख्याता॥
जो कछु धर्मराय अभिलाषी । तैसे सहज सुनाये भाषी ॥

पुरुषवचन सहजप्रति । छन्द

सुन्यो सहजके वचन, जबही पुरुष बैन उच्चारेऊ॥
धरमसे सन्तुष्ट हैं हम, वचन मम उर धारेऊ ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 16(140) की है। इसमें तीसरी पंक्ति (ऊपर से) में प्रमाण है कि ''क्षर पुरूष (काल) ने एक पैर पर खड़ा होकर दूसरी बार सत्तर (70) युग तक

तपस्या की, उसके प्रतिफल में इक्कीश ब्रह्मंड (तीन लोक =21 ब्रह्माण्डों) को तीन भागों में बाँटा है। एक लोक (7 ब्रह्मण्डों) में जब प्रलय का समय रहता है तब दूसरे लोक (7 ब्रह्मण्डों के क्षेत्र) में ''सर्व प्राणी जो काल के लोक में हैं तथा काल ब्रह्म व दुर्गा देवी भी'' चले जाते हैं। इस प्रकार तीन लोक कहा जाता है। फिर एक ब्रह्मण्ड में भी तीन लोक हैं = पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक, पाताल लोक। यह ज्योति निरंजन की अपनी रचना है।

अनुरागसागर 141 (१७)

लोक तीनों ताहि दीन्हो, शून्य देश वसावहू ॥
करहु रचना जाय तहँवा,सहज वचन सुनावहू॥१३॥
सो०–जाहु सहज तुम वेग,अस कहि आवो धर्मसो॥
दियो शून्यकर थेग, रचना रचहु बनाइके ॥ १३ ॥

निरंजनको सृष्टि रचनाका साज मिलानेका वृत्तांत

सहज वचन निरंजन प्रति

आये सहज वचन सुनावा । सत्यपुरुषजसकहिसमुझावा॥

कबीर वचन धर्मराज प्रति

सुनतहि वचन धर्म हरषाना । कछुकहर्षकछुविस्मय आना॥

निरंजनवचन सहज प्रति

कहे धर्म सुनु सहज पियारा । कैसे रचौं करौं विस्तारा ॥
पुरुष दयाल दीन्ह मोहिं राजू। जानु न भेद करों किमि काजू॥
गम्य अगम मोहे नहिं आयी । करों दया सो युक्ति बतायी॥
विन्ती करौ पुरुषसों मोरी । अहो भ्रात बलिहारी तेरी ॥
किहिविधिरचूँनवखण्ड बनाई । हे भ्रात सो आज्ञा पाई ॥
मो कहँ देहु साज प्रभु सोई । जातें रचना जगत्की होई ॥

सहजका लोकको जाना

तबही सहज लोक पग धारा । कीन्ह दंडवत बारम्बारा ॥

पुरुषवचन सहज प्रति

अहो सहज कस इहँवा आई । सो हमसो तुम शब्द सुनाई॥

कबीर वचन धर्म दास प्रति

कहो सहज तब धर्मकी बाता ।जो कछु धर्म कही विख्याता॥
धर्मराज जस विन्ती लायी । तैसे सहज सुनायउ जायी ॥

पुरुषकी आज्ञा सहजसे

आज्ञा पुरुष दीन्ह तेहि वारा ।सुनौ सहज तुम वचनहमारा॥

★ यह फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 17(141) की है, इसमें वर्णन है कि ''तीन लोक (इक्कीश ब्रह्माण्डों) को प्राप्त करके काल निरंजन ने इनमें रचना करने की सोची। उसके लिए

रचना सामग्री प्राप्त करने के लिए याचना की है।'' इस विवरण में कुछ त्रुटि हैं। वास्तव में मूल ज्ञान के आधार से आपजी आगे लिखी सृष्टि रचना वर्णन में पढ़ेंगे वह सही है। लिखा है कि ''ज्योति निरंजन ने दूसरी बार तप किया तब रचना सामग्री प्राप्त की थी।''

(१८) 142 अनुरागसागर

कूर्मके उदर आदि सब साजा। सो ले धर्म करे निजकाजा॥
विनती करे कूर्म सौ जाई। मांगि लेति तेहि माथ नवाई॥

सहज धर्मरायके निकट जाकर पुरुषकी आज्ञा सुनाना

गये सहज पुनि धर्मके पासा। आज्ञापुरुष दीन्ह परकासा॥
विनती करो कूर्मसो जाई। मांगि लेहु सीस नवाई॥
जाय कूर्म ढिग सीस नवावहु। करिहैं कृपा बहुत तव पावहु॥

निरंजनको कूर्मके पास साज लेनेको जाना

कबीरवचन धर्मदास प्रति

जलिभो धरम हरष तब बाढो। मनहिकीन गुमान अतिगाढो॥
जाय कूर्मके सम्मुख भयऊ। दंडपरनाम एक नहिं कियऊ॥
अमी स्वरूप कर्म सुखदाई। तपननतनिकोअतिशितलाई॥
करि गुमान देख्यो जब काला। कूर्म धीर अति है बलवाना॥
बारह पलँग कूर्म शरीरा। छै पलँग धरम बलबीरा॥
धावै चहुँ दिशि रहै रिसाई। किहिविधिलीजैउत्पति भाई॥
कीन्हो कालसीस नख घाता। उदरते निकसे पवन अघाता॥
तीन सीसके तीनहु अंशा। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंशा॥
पांच तत्व धरती आकाशा। चन्द्र सूर्य उडगन रहिवासा॥
निसरचो नीर अग्नि शशिसूरा। निसरचो नभढाकनमहिथूरा॥
मीन शेष बराह महिथम्भन। पुनि पृथ्वीको भयो अरम्भन॥
छीना सीस कुर्मको जबही। चले प्रसेव ठांव पुनि तबही॥
जबही प्रसेव बुंद जल दीन्हा। उंचासकोट पृथ्वीको चीन्हा॥
क्षीर तोय जस परत मलाई। अस जलपर पृथ्वी ठहराई॥
बारह दंत राहु महिकरमूला। पवन प्रचण्ड महीस्थूला॥
अंडस्वरूप आकाशको जानों। ताके बीच पृथ्वी अनुमानों॥

★ यह फोटोकापी पवित्र ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 18(142) की है। इसमें ''कूर्म'' से बलपूर्वक रचना सामग्री प्राप्त करने का विवरण है कि काल निरंजन ने परमात्मा की आज्ञा की

अवहेलना करके कूर्म से विनय करके रचना सामग्री नहीं माँगी अपितु जाते ही छीना-झपटी करने लगा तथा कूर्म के शरीर में जख्म करके सामग्री ले गया। शेष वर्णन काल निरंजन के लोकों की रचना है।

अनुरागसागर 143 (१९)

कूर्म उदर सुत कूर्म उत्पानो । तापर शेष वराहको थानो ।
शेष सीस या पृथ्वी जानो । ताके हेठ कूर्म बिरयानो ॥
किरतम कूर्म अण्डके मांही । कूर्म अंश सो भिन्न रहाही ॥
आदि कूर्म रह लोक मँझारा । तिनपुनिपुरुषध्यानअनुसारा॥

कूर्मवचन सत्पुरुषप्रति

निरंकार कीन्हो बरियाया । कालकलाधरि मो पहँ आया॥
उदर विदार कीन्ह उन मोरा । आज्ञा जानि कीन्ह नहिं थोरा॥

पुरुष वचनकूर्मप्रति

पुरुष अवाज कीन्ह तेहिबारा । छोटे बंधु वह आहि तुम्हारा॥
आही यही बडनकी रीती । औगुन ठावँ करहिं वह प्रीती॥

कबीरवचन धर्मप्रति

पुरुषवचन सुनि कूर्म आनंदा । अमीसरूप सो आनंदकंदा ॥
पुरुष ध्यानपुनि कीन्हनिरंजन । जुग अनेक किय सेवा संजन ॥
स्वार्थ जानि सेवा तिन लाई । करि रचना बैठे पछताई ॥
धर्मराय तब कीन्ह विचारा । कहवालो त्रयपुर विस्तारा ॥
स्वर्ग मृत्यु कीन्हो पाताला । विनाबीजकिमिकीजै ख्याला॥
कोन भांति कस करव उपाई । किहि विधि रचों शरीर बनाई॥
कर सेवा मांगों पुनि सांई । तिहुँ पुर जीवित मेरो होई ॥
करि विचार अस हठ तिनधारा । लाग्यो करने पुरुष विचारा ॥
एक पांव तब सेवा कियेऊ । चौंसठ युगलों ठाढे रहेऊ ॥

बहुरि पुरुषका सहजको निरंजनके निकट भेजना । छन्द

दयानिधि सतपुरुष साहिब, बस सुसेवाके भये ॥
बहुरि भाष्यो सहज सेती, कहा अब याचत नये॥
जाहु सहज निरंजनापहँ, देउ जो कुछ मांगई ॥
करहि रचना पुरुष वचना, छल मता सब त्यागई ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 19(143) की है। इसमें 17 वीं पंक्ति (ऊपर से) में तीसरी बार 64(चौंसठ) युग तक तप करके जीवों को प्राप्त करने की याचना का वर्णन है।

(२०) 144 अनुरागसागर

सहजका निरंजनके निकट पहुँचना

सो॰-सहज चलेसिरनाय, जबहिं पुरुष आज्ञा कियो॥
तहँवा पहुचे जाय, जहां निरंजन ठाढरह ॥१४॥
देखत सहज धर्म हरषाना । सेवा वस पुरुष तब जाना ॥

सहजवचन

कहै सहज सुनु धर्मराया । केहि कारण अब सेवा लाया॥

निरंजनवचन

धर्म कहै तब सीस नवायी । देहु ठौर जहँ बैठौं जायी ॥

सहजबचन

तब सहज अब भाषै लीन्हा । सुनहु धर्म तेही पुरुषसब दीन्हा॥
कूर्म उदर सो जो कछु आवा । सो तोहि देन पुरुष फरमावा॥
तीनों लोक राजा तोहि दीन्हा । रचना रचहु होहु जनि भीना॥

निरंजनवचन

तबैं निरंजन विनती लायी । कैसे रचना रचूं बनायी ॥
पुरुषहिं कहौं जोर युग पानी । मैं सेवक दुतिया नहिं जानी॥
पुरुष सो विनती करो हमारा । दीजै खेत बीज निज सारा ॥
मैं सेवक दुतिया नहीं जानूं । ध्यानपुरुषको निशिदिनआनू॥
पुरुषहिं कहा जाय यह बानी । देहु बाज अम्मर सहिदानी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सहज कह्यो पुनि पुरुषहि जाई। जस कछु कह्यो निरंजनराई॥
गयो सहज निजदीपसुखासन । जबहिपुरुष दीन्हे अनुशासन॥
सेवा वश सत्पुरुष दयाला । गुण औगुणनहिंचितकिरपाला॥

अष्टाकी उत्पति

इच्छा कीन पुरुष तेहि बारा। अष्टंगी कन्या उपचारा ॥
अष्ट बाहु कन्या होय आई । बायें अंग सो ठाढ़ रहाई ॥

अष्टाकी उत्पति

माथ नाय पुरुष सो कहई । अहो पुरुष आज्ञा कस अहई॥

★ इस कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' की फोटोकापी पृष्ठ 20(144) में बहुत त्रुटियां हैं। यथार्थ सृष्टि रचना पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 63 से।

अनुरागसागर 145 (२१)

सत्य पुरुषका आद्याको मूलबीज देना

पुरुष वचन अद्याप्रति

तबहीं पुरुष वचन परगासा । पुत्री जाहु धरमके पासा ॥
देहुँ वस्तु सो लेहु सम्हारी । रचहु धर्म मिलि उतपतिवारी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

दीन्हो बीज जीव पुनि सोई । नाम सुहंग जीव कर होई ॥
जीव सोहंगम दूसर नाहीं । जीवसों अंश पुरुष को आहीं॥
शक्ति पुनि तीन पुरुष उत्पाना। चेतनि उलंघनि अभया जाना॥

छन्द

पुरुष सेवावश भये तब, अष्ट अंगहि दीन्ह हो ॥
मानसरोवर जाहु कहिया, देहु धर्महि चीन्ह हो ॥
अष्टङ्गी कन्या हती जेहि, रूप शोभा अति बनी॥
जाहुकन्या मानसरवर, करहु रचना अति घनी ॥
सोरठा–चौरासी लखजीव, मूलबीज तेहिसंग दे ॥
रचना रचहु सजीव, कन्या चलि सिरनायके॥
यह सब दीन्हो आदि कुमारी। मानसरोवर चलिभई नारी ॥
ततछिन पुरुष सहज टेरावा । धावत सहज पुरुष यहिं आवा॥

पुरुषवचन सहजप्रति

जाही सहज धरम यह कहेहू । दीन्ह वस्तु जस तुम चहेहू॥
मूल बीज तुमपहँ पठवावा । करहु सृष्टिजसतुवमनभावा॥
मानसरोवर जाहि रहाहू । ताते होइ है सृष्टि उराहू ॥

पुनि सहजका निरंजनके ढिग जाना

चले सहज तहवाँ तब आये । धर्म धीर जहँ ठाढ़ रहाये ॥
कहेउ सुवचन पुरुषको जबहीं । धर्मराय सिर नायो तबहीं ॥

★ यह फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 21 (145) की है। इसमें बहुत मिलावट है। यथार्थ ज्ञान आप जो सृष्टि रचना संत रामपाल दास जी महाराज द्वारा बताई है, वह पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 63 से।

(२२) 146 अनुरागसागर

निरंजनका मानसरोवरमें अद्याको पाकर मोहवश हो उसे निगल जाना और सत्यपुरुषका शाप पाना

पुरुष वचन सुन तबही गाजा। मानसरोवर आन विराजा॥
आवत कामिनी देख्यो जबही। धर्मराय मन हरष्यो तबही॥
कहा देखि अष्टंगी केरी। धर्मराय इतरान्यो हेरी॥
कहा अनन्त अंत कछु नाहीं। काल मगन है निरखत ताहीं॥
निरखत धर्मसु भयो अधीरा। अंग अंग सब निरख शरीरा॥
धर्मराय कन्या कहँ ग्रासा। कालस्वभाव सुनो धर्मदासा॥
कीन्हीं ग्रास काल अन्याई। तब कन्या चित विस्मय लाई॥
तत छण कन्या कीन्ह पुकारा। काल निरंजन कीन्ह अहारा॥
तबही धर्म सहज लग आई। सहज शून्य तब लीन्ह छुड़ाई॥
पुरुष ध्यान कूर्म अनुसारा। मोसनकाल कीन्ह अधिकारा॥
तान शीश मम भच्छण कीन्ह्यो। हो सत पुरुष दया भल चीन्ह्यो॥
यही चरित्र पुरुष भल जानी। दीन्ह शापसो कहों बखानी॥

पुरुषका शाप निरंजनप्रति

लच्छ जीव नि ग्रासन करहू। सवालच्छ नितप्रति विस्तरहू॥

छन्द

पुनिकीन्हपुरुषतियानतिही, किमिमेटिडारोकालहो
कठिन काल कराल जीवन, बहुत करइ बिहाल हो॥
यहि मेटत अबना बनै मुहिं, नालाइक सुत षोडसा॥
एक मेटत सबै मिटिहै, वचन डोल अडोलसा॥१६॥
सोरठा–डोल वचन हमार, जो अब मेटा धरमका॥
वचन करो प्रतिपाल, देश मोर अब ना लहैं॥१६॥

★ यह फोटोकापी कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 22 (146) की है। इसमें प्रमाण है कि काल ने युवती दुर्गा के शरीर का अंग-अंग देखा जिससे वासना उत्पन्न हुई। कन्या दुर्गा से अभद्र व्यवहार करने की ठानी। उसी समय कन्या काल के मुख मार्ग से काल के उदर में चली गई। परमेश्वर कबीर जी रूपांतर करके अपने पुत्र सहज दास के रूप में आए (वास्तव में ''जोगजीत'' के रूप में आए थे।) काल को एक लाख प्राणियों को खाने तथा सवा लाख उत्पन्न करने का शाप दिया। नीचे से चौथी पंक्ति में ''सुत षोडषा' गलत है। ठीक ''सतरहवां'' है।

# सृष्टि रचना (भाग-2)

## ''सर्व सद्ग्रन्थों में सृष्टि रचना का प्रमाण''

**(यह संक्षिप्त सृष्टि रचना आप जी ने ''ज्ञान गंगा'' तथा ''गहरी नजर गीता में'' में पढ़ा है। यह सृष्टि रचना का ज्ञान बहुत पुराने कबीर सागर को आधार मानकर लिखा है, वर्तमान के कबीर सागर में कुछ कांट-छांट की गई है। इसके समर्थन में अन्य सद्ग्रन्थों का सहयोग लिया गया है।)**

**श्री देवी भागवत पुराण के पहले स्कन्ध में अध्याय 1 से 8 पृष्ठ 21 से 43 पर प्रमाण है। कि महर्षि व्यास जी के परम शिष्य श्री सूत जी से शौनकादि ऋषियों ने प्रश्न किया कि हे सूत जी! कृपा आप देवी पुराण की पावन कथा सुनाऐं। श्री सूत जी ने कहा** (पृष्ठ 23) पौराणिकों एवं वैदिकों का कथन है तथा यह भली–भांति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत् के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्मा जी का जन्म भगवान् विष्णु जी के नाभि कमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिती में ब्रह्मा जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे ? भगवान् विष्णु को स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते क्योंकि वे शेष नाग की शय्या पर सोए थे। नाभि से कमल निकला और उस पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किन्तु वे श्री विष्णु जी भी तो किसी आधार पर अवलम्बित थे। उनके आधार भूत क्षीर समुन्द्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता क्योंकि वह रस है, रस बिना पात्र के ठहरता नहीं कोई न कोई उसका आधार रहना ही चाहिए। अतएव चराचर जगत् की आधार भूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निश्चित हुई'' (देवी पुराण के पृष्ठ 41 पर लिखा है :–) ऋषियों ने पूछा :– महाभाग सूत जी ! इस कथा प्रसंग को जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है, क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञ जनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर–ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। आपने इस सर्व की सृष्टि कारण भूत जिस जगदम्बिका (दुर्गा) के विषय में कहा है वह कौन शक्ति है उसकी सृष्टि (उत्पत्ति) कैसे हुई। यह सब बताने की कृपा करें।

सूत जी कहते हैं :– मुनिवरों! चराचर सहित इस त्रिलोकी में कौन ऐसा है जो इस संदेह को दूर कर सके। ब्रह्मा जी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते

हैं। महानुभावों! यह बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इस सम्बन्ध में मैं क्या कह सकता हूँ ?

(श्री देवीपुराण के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 13 पृष्ठ 115 पर) नारद जी ने अपने पिता ब्रह्मा जी से पूछा "पिता जी! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कहां से उत्पन्न हुआ है। विभो ! आपने सम्यक प्रकार से इसकी रचना की है ? अथवा विष्णु इस विश्व के रचियता हैं ? या शंकर ने इसकी सृष्टि की है ? जगत् प्रभो ! आप विश्व की आत्मा हैं। सच्ची बात बताने की कृपा करें। किस देवता की पूजा करनी चाहिए ? तथा कौन देवता (प्रभु) सबसे बड़ा एवं सर्व समर्थ है ? इन सभी प्रश्नों का समाधान करके मेरे हृदय के संदेह को दूर करने की कृपा कीजिए। ब्रह्मा जी ने कहा – बेटा मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँ ? यह प्रश्न बड़ा ही जटिल है। इस संसार में कोई भी रागी पुरूष ऐसा नहीं है जिसे यह रहस्य विदित हो। (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

**प्रिय पाठक जनों ! जिस सृष्टि रचना के विषय में तथा सर्व समर्थ प्रभु के विषय में न व्यास जी जानते हैं न श्री ब्रह्मा जी। उस रहस्य को इस सृष्टि रचना के उल्लेख में निम्न पढ़ें :-**

**प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न सृष्टि की रचना को पढ़ेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले ऊँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अध्यात्मिक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ते रहिए तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखिए। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु अर्थात् सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टि रचना अर्थात् अपने द्वारा निर्मित सर्व लोकों की रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।**

**1. इस सृष्टी रचना में सतपुरुष, सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष, अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष अनामी लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है। जो भिन्न-2 रूप धारण करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्मण्ड आते हैं।**

**यहाँ पर यह स्पष्ट करना अनिवार्य है कि ''आप जी असंख्य ब्रह्माण्डों के चित्र में सत्यलोक से ऊपर तीन लोक और देखते हैं = अलख लोक,**

अगम लोक तथा अनामी लोक। = अलख लोक तथा अगम लोक में भी सृष्टि है जैसे सत्यलोक में है। परन्तु अनामी (अकह) लोक में केवल पूर्ण परमात्मा अकेला ही है। सर्व सृष्टि की सामग्री अनामी पुरूष के शरीर में बीज के रूप में है। जैसे वट वृक्ष कितना विशाल होता है, उसका बीज कितना बारीक (महीन) होता है। आत्मा इससे भी हजार गुना महीन होती है जो परमेश्वर जी के शरीर में विद्यमान है। इसी से कुछ आत्माऐं निकली हैं जो असंख्य ब्रह्माण्डों में जन्मी हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्मण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परंतु यह तथा इसके ब्रह्मण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्मण्ड नाशवान हैं।

4. ब्रह्मा :- इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा कहलाता है तथा विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्मण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्तृत विवरण के लिए कृप्या पढ़ें निम्न लिखित सृष्टी रचना।

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया है। उसी ज्ञान को कृप्या पढ़िए लेखक के शब्दों में}

परमेश्वर कबीर जी द्वारा दिया ज्ञान लेखक के शब्दों में :- सर्व प्रथम केवल एक स्थान 'अनामी (अनामय) लोक' था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है पूर्ण परमात्मा उस अनामी अर्थात् अकह लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सर्व आत्माऐं तथा रचना की सामग्री बीज रूप में जैसे मकड़ी तथा रेशम के कीड़े में तार (धागा) होता है, उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी।

इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरूष के एक रोम कूप का प्रकाश असंख्य सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

# परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में आत्मा और परमात्मा एक रूप होकर कबीर साहेब ही अनामी रूप में है। जैसे मिट्टी के ढले (छोटे-छोटे टुकड़े) हो जाते हैं। फिर वर्षा होने पर एक पृथ्वी बन जाती है, अलग अस्तित्व नहीं रहता।

अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरूष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरूष रूप में रहते हैं।

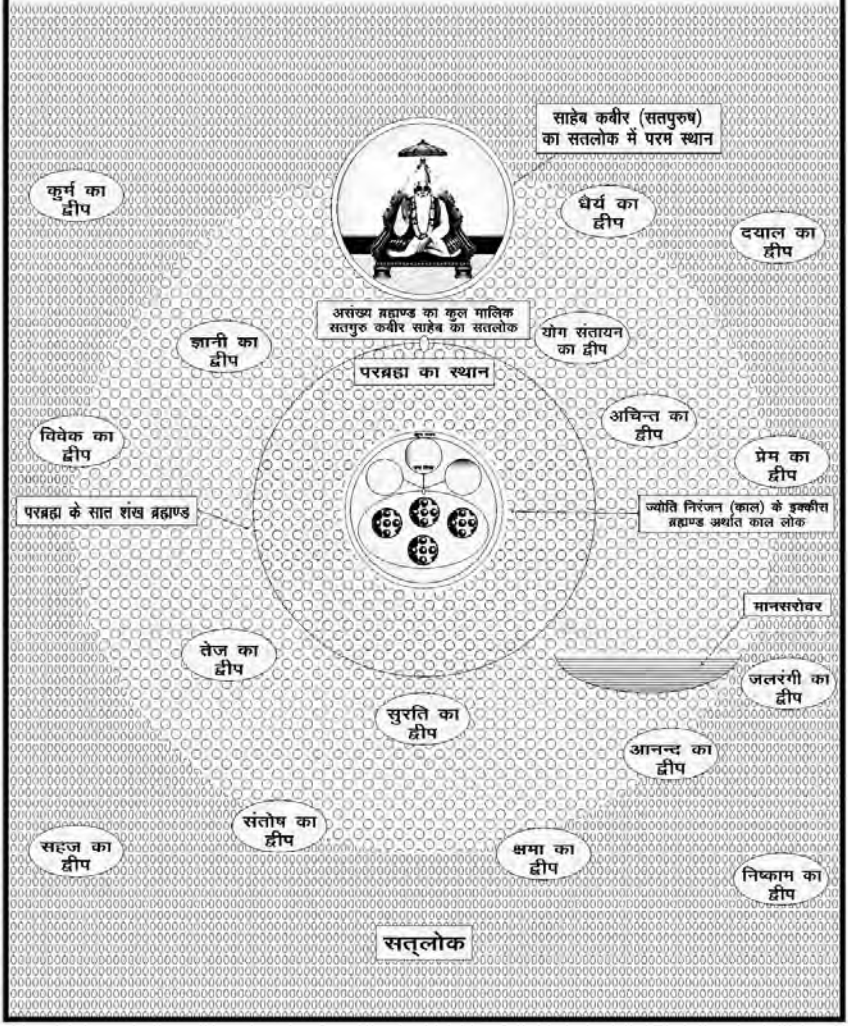

विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेता है। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करता है तो उस समय उसी पद को लिखता है। जैसे गृहमंत्रालय के हस्ताक्षर करेगा तो अपने को गृह मंत्री लिखेगा। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति प्रधान मंत्री रूप में किए हस्ताक्षर से कम होती है। जबकि व्यक्ति वही होता है इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर होता जाता है।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द (वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है। जिसके एक रोम कूप की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वज्र्योति स्वयं प्रकाशित) है। एक रोम कूप की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु)है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोमकूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की, एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :-(1) ''कूर्म'', (2)''ज्ञानी'', (3)

''विवेक'', (4) ''तेज'', (5) ''सहज'', (6) ''सन्तोष'', (7)''सुरति'', (8) ''आनन्द'', (9) ''क्षमा'', (10) ''निष्काम'', (11) 'जलरंगी' (12)''अचिन्त'', (13) ''प्रेम'', (14) ''दयाल'', (15) ''धैर्य'' (16) ''योग संतायन'' अर्थात् ''योगजीत''।

**नोटः- प्रिय पाठकों से निवेदन है कि आप जी ने ''कबीर सागर'' में ''अनुराग सागर'' अध्याय के पृष्ठ 14(138) में पढ़ा, उसमें तीन पंक्तियों को बाद में जोड़ा है, जिनमें कहा है कि निरंजन ही तेज रूप में परमात्मा का पुत्र उत्पन्न हुआ। वह गलत है। वास्तविक्ता आप जी ने ऊपर पढ़ी यह है, काल निरंजन की उत्पत्ति बाद में अण्डे से हुई है। जिसका प्रमाण कबीर सागर अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 98(962) तथा कबीर सागर के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' पृष्ठ 91 (1453) तथा पृष्ठ 92(1454) की फोटोकापी इसी पुस्तक के पृष्ठ 203, 52-53 पर है, कृप्या वहाँ पढ़ें।**

**★ एक बात का और ध्यान रखें कि परमेश्वर कबीर जी ने ''कबीर सागर'' अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 137(1001) पर कहा है कि** ''तेतीस (33) अरब ज्ञान हम भाषा। मूल ज्ञान गुप्त ही राखा। मूल ज्ञान तब तक छिपाई जब तक द्वादश पंथ मिटाई।।'' **भावार्थ है कि ''कबीर सागर'' में भी मूल ज्ञान का अभाव है। वह मूल ज्ञान मुझ दास (रामपाल दास) को प्रदान किया है। इसलिए मुझ दास द्वारा जो सृष्टि की उत्पत्ति बताई गई है, वह यथार्थ है।**

**बाहरवां (12वां) पंथ गरीबदास जी (गाँव=छुड़ानी, जिला=झज्जर, हरियाणा) वाला है। जिनका जन्म संवत् 1774 (सन् 1717) में हुआ। परमेश्वर कबीर जी सन्त गरीबदास जी को मिले। संवत् 1784 (सन् 1727) में। इसके बाद तक यह मूल ज्ञान छुपाना था तथा सार नाम (सार शब्द) को भी इन बारह (12) पंथों के चलकर समाप्त होने तक छुपा कर रखना था। इस से सिद्ध है कि सार नाम, सार शब्द श्री धर्मदास जी के वंश (पंथ श्री प्रकाश मुनि नाम जी) के पास नहीं है क्योंकि यह तो वही नाम दीक्षा देते आ रहे हैं जो छटे गद्दी वाले ने टकसारी पंथ (नकली कबीर पंथी) से ली थी तथा परमात्मा कबीर जी द्वारा दी गई यथार्थ दीक्षा जो पाँच नाम की थी, वह त्याग दी थी। इससे स्पष्ट है कि वह सार नाम, सत्य नाम पूर्ण रूप से छुपाना था। उसको इन बारह पंथों के चलकर समाप्त होने तक छुपाना था। यह प्रमाण ''कबीर सागर = जीव धर्म बोध''**

**के पृष्ठ 29(2001/1937) पर है। कबीर साहेब जी ने कहा है कि** ''नौ मन सूत उलझिया, ऋषि रहे झख मार। सतगुरू ऐसा सुलझादे, उलझै ना दूजी बार।।''

**सर्व द्वीप और 16 पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया, वहाँ जल में प्रवेश करके स्नान करने लगा। शीतल जल में आनन्द आया तथा जल में ही सो गया** (क्योंकि सतलोक में शरीर स्वांसों पर आधारित नहीं है) **लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़गड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निंरजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम ''कैल'' है। {प्रमाण कबीर सागर के अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 98(962) तथा कबीर सागर के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 91(1453) तथा 92(1454) तथा सर्वज्ञ सागर पृष्ठ 137(429) पर है, देखें फोटोकापी इसी पुस्तक के पृष्ठ 203, 51 से 53 पर।} तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष(कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे। (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिन कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्मण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति/परानन्दनी भी कहते हैं। सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16(सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर का करोड़ों सूर्यों से भी अधिक एक रोम कूप का प्रकाश है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष**

**(ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर प्रथम बार सत्तर (70) युग तक तप किया। प्रमाण कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 15(139) पर 16 वीं पंक्ति (ऊपर से)।**

## "आत्माऐं काल के जाल में कैसे फंसी ?"

**विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सर्व आत्माऐं जो आज ज्योति निरंजन के इक्कीस ब्रह्मण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा आत्मा से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए। पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्तता क्षर पुरुष से नहीं हटी।** {यही प्रभाव आज भी काल सृष्टि में सर्व प्राणियों में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्मी स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे अभिनय पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रूकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री निकटवर्ती शहर में आ जाए तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ केवल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाते हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता–पिता कितना ही समझाऐं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं – कभी न कभी लुक–छिप कर जाते ही रहते हैं।}

**पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो? उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इक्कीस) ब्रह्मण्ड (इनको तीन लोक भी कहा जाता है क्योंकि काल ने 7 ब्रह्मंडों का एक ग्रुप बनाया था। इस प्रकार 21 ब्रह्मंडों के तीन लोक बनाये हैं। प्रत्येक ब्रह्मंड में भी तीन लोक बनाये हैं) प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इसमें कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्मण्ड (प्लाट) किस काम के। यह विचार कर दूसरी बार 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री**

की याचना की। प्रमाणः- कबीर सागर अध्याय ''अनुराग सागर'' पृष्ठ 16(140) पर। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्मण्डों में कुछ रचना की।

प्रिय पाठकों से निवेदन है कि कबीर सागर अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 16(140) {तीसरी पंक्ति (ऊपर से) में दूसरी बार तप करने का प्रमाण है} , 17(141) तथा 18(142) व 19(143) {17 वीं पंक्ति (ऊपर से) में तीसरी बार तप करने का प्रमाण है।} पर लिखी चौपाइयों का भावार्थ है कि ''जब काल निरंजन ने दूसरी बार 70 युग तप किया, उसने परमात्मा (पुरूष) से रचना सामग्री माँगी। परमपुरूष ने क्षर पुरूष (काल-निरंजन) से कहा कि आप का बड़ा भाई कूर्म है उसके शरीर में मैंनें अपने वचन से पाँच तत्व तथा तीन गुण तथा अन्य आवश्यक सामग्री डाल रखी है। आप उसके पास जाकर विनम्र भाव से याचक बन कर रचना की सामग्री माँगना, उन्हें प्रणाम करना, शिष्टाचार का पालन करके आप वांछित वस्तु माँगोगे तो कूर्म आपको सर्व वस्तु सहर्ष दे देगा। काल (निरंजन) ने परमात्मा की आज्ञा की अवहेलना की। कूर्म के पास जाकर कहा कि मुझे रचना सामग्री दे, पिताजी का आदेश है। काल ब्रह्म ने न तो शिष्टाचार का पालन किया और न ही नम्र भाषा बोली तथा न ही अपने बड़े भाई को प्रणाम ही किया। इसका कारण यह रहा कि काल निरंजन (क्षर पुरूष) ने सोचा कि मैंने तप करके सामग्री प्राप्त की है, इस कूर्म का क्या अभिनय है। मेरा हक मुझे चाहिए। ऐसा सोच कर काल निरंजन ने कूर्म से शिष्ट बर्ताव नहीं किया। कूर्म ने कहा कि मैं आपको सर्व सामग्री दूँगा, कृपया कुछ देर संतोष करें। मैं पहले पिताजी से आज्ञा लूँगा, उनकी आज्ञा होगी तो आपको सामग्री अवश्य दूँगा। काल निरंजन ने कहा कि मैं क्या झूठ बोल रहा हूँ। ऐसा कह कर काल (ब्रह्म) ने कूर्म के सिर पर नाखूनों से प्रहार किया, तीन गुण निकले, ऐसे तीन बार सिर को नौंचा, सर्व सामग्री प्राप्त करके चला गया। कूर्म ने परमात्मा से शिकायत की तथा कहा कि मैं उसे समाप्त करूँगा, उसने मेरे साथ अभद्र व्यवहार किया है। परमेश्वर ने कहा ''बड़ों का बड़प्पन क्षमा करने में है। उसके किए का फल उसको अवश्य मिलेगा। उसकी सृष्टि में ऐसे ही छीना-झपटी, अशिष्ट व्यवहार बना रहेगा। परमात्मा के मुख कमल से ये वचन सुनकर कूर्म शान्त हो गया।

शंका समाधानः- आपजी को यहाँ शंका हो सकती है कि ''पाँच तत्व, तीन गुणों तथा अन्य रचना का उत्पन्नकर्ता कूर्म है और आप मुझ दास के प्रवचनों में सुनते रहे हैं कि परमात्मा ने सर्व रचना की। इसके लिए आपको बताना चाहूँगा कि परमेश्वर कबीर जी ने सर्व सामग्री उत्पन्न करके कूर्म के शरीर में रख दी। कूर्म के शरीर को तो एक स्टोर (गोदाम) जानों तथा कूर्म को स्टोर कीपर अर्थात् स्टोर का रखवाला और परमेश्वर ही सर्व का उत्पत्ति कर्ता है। {पहले यह प्रकरण जान-बूझ कर पुस्तक विस्तार के भय से नहीं लिखा गया था।} फिर क्षरपुरूष ने सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके तीसरी बार 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। {प्रमाणः- कबीर सागर अध्याय ''अनुराग सागर'' पृष्ठ 19(143) पर।}

पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि हे ब्रह्म! तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्मण्ड दे सकता हूँ, परन्तु अपनी प्रिय आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वइच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। समर्थ कबीर के वचन सुन कर ज्योति निरंजन उन आत्माओं के पास आया। जो पहले से ही उस पर आसक्त थे। वे आत्माऐं उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निंरजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्मण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार से रमणिक स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सर्व हंसों ने जो आज 21 ब्रह्मण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तो। तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष (कैल) तथा परम अक्षर पुरुष (कविरमितौजा) दोनों उन हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के

इक्कीस ब्रह्मण्डों में फंसी हैं उन) सर्व आत्माओं ने हाँ कर दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूंगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्मण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्मण्ड सतलोक में ही थे।

## ''श्री देवी (दुर्गा) की उत्पत्ति''

प्रमाणः- कबीर सागर अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 20(144) से 22(146) तक।

तत् पश्चात पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा उन सर्व आत्माओं को जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) ने अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इस बहन को वचन शक्ति प्रदान की है। आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया। (शेष पृष्ठ 83 पर)

# एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र

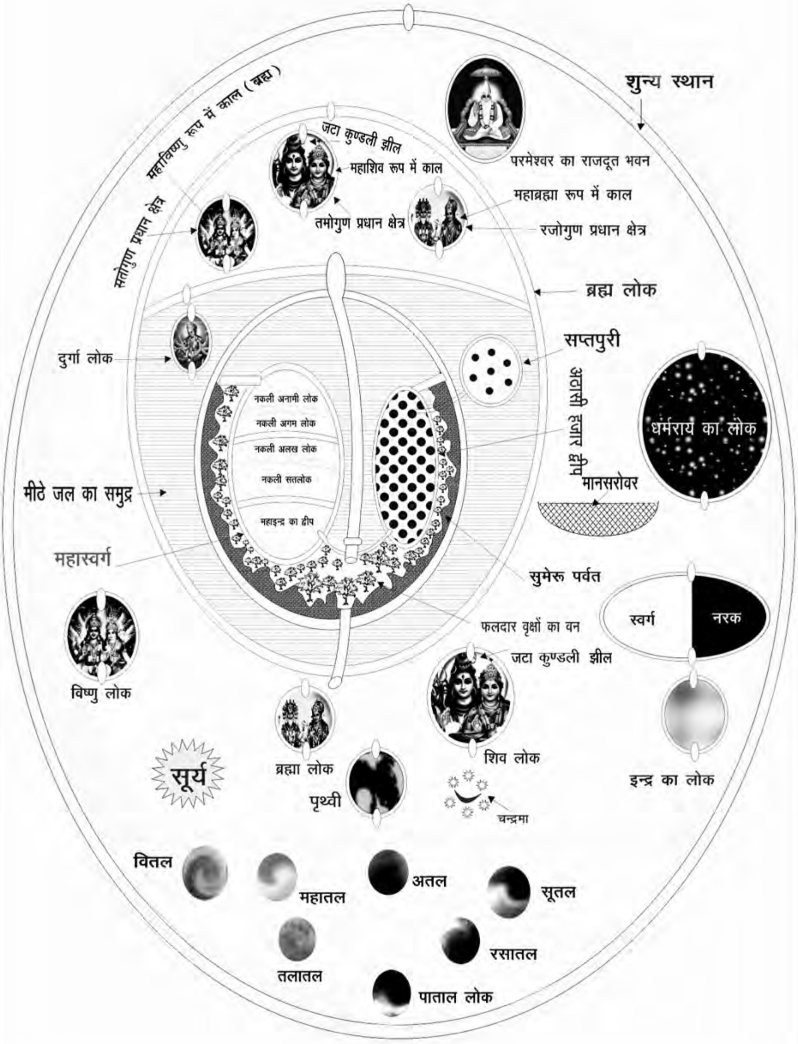

# ब्रह्म लोक का लघु चित्र

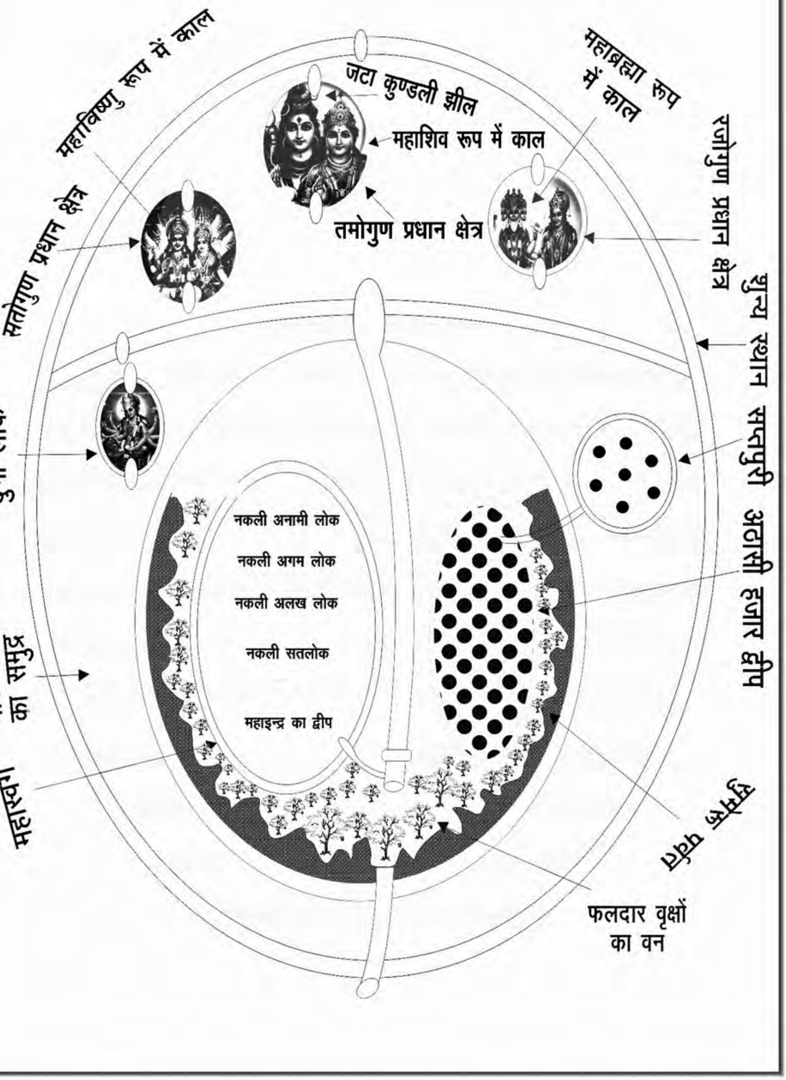

सत्पुरुषका जोगजीतका निरंजनके पास उसे मानसरोवरसे
निकाल देनेकी आज्ञा देकर भेजना

जोगजीत कह पुरुष बुलावा। धर्मचरित सब कहि समुझावा॥

सत्पुरुष वचन जोगजीत प्रति

जोगजीत तुम बेगि सिधारो। धर्मरायको मारि निकारो॥
मानसरोवर रहन न पावै। अब यहि देशकाल नहिं आवै॥
धर्मके उदर माहिं है नारी। तासो कहो निजशब्द सम्हारी॥
जाकर रहो धर्म वहि देशा। स्वर्ग मृत्यु पाताल नरेशा॥
उदर फारिकै बाहर आवे। धर्मविदार उदार फल पावे॥
धर्मरायसों कहो विलोई। वहै नारि अब तुम्हारी होई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

जोगजीत चल भे शिर नाई। मानसरोवर पहुँचे जाई॥
जोगजीत कहँ देखा जबहीं। अति भो काल भयंकर तबहीं॥

निरंजनवचन जोगजीतप्रति

पूछा काल कौन तुम आई। कौन आज तुम यहां सिधाई॥

जोगजीतवचन निरंजन प्रति

जोगजीत अस कहै पुकारी। अहो धर्म तुम ग्रासेहु नारी॥
आज्ञा पुरुष दीन्ह यह मोही। इहिंते बेगि निकारो तोही॥

जोगजीतवचन अद्या प्रति

जोगजीत कन्या सो कहिया। नारी कहे उदरमहँ रहिया॥
उदरफारि अब आवहु बाहर। पुरुष तेज सुमिरो तेहि ठाहर॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सुनिके धर्म क्रोध उर जरेऊ। जोगजीत सौ सन्मुखभिरेऊ॥
जोगजीत तब कीन्हे ध्याना। पुरुष प्रताप तेज उर आना॥
पुरुष आज्ञा भई तेहि काला। मारहु माझ लिलार कराला॥
जोगजीत पुनि तैसो कीन्हा। जस आज्ञा पुरुष तेहि दीन्हा॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 23(147) की है। इसमें प्रमाण है कि ''परमेश्वर ने जोगजीत को आदेश दिया कि उस कन्या (देवी=दुर्गा) को काल, ज्योति निरंजन ने ग्रास लिया है। आप जाओ तथा ज्योति निरंजन को मानसरोवर से मार-पीट कर निकाल दो, कन्या को उसके पेट से निकाल दे। जोगजीत ने वैसा ही किया जैसा सत्यपुरूष ने आदेश दिया था।

(२४) 148 अनुरागसागर

छन्द

गहि भुजा फटकार दीन्हों, परेउ लोकत न्यारहो॥
भयो त्रासित पुरुष डरते, बहुरि उठेउ सम्हार हो॥
निकसि कन्या उदरते पुनि,देख धर्महि अतिडरी॥
अब नाहिंदेखोदेश वह,कहौ कौनविधिकहवाँपरी १७

सोरठा-कामिनिरहीसकाय,त्रासितकालकडरअधिक
रही सो सीस नवाय, आसपासचितवत खड़ी ॥१७॥

निरंजनवचन अद्याप्रति

कहै धर्म सुनि आदि कुमारी । अब जनि डरपो त्रास हमारी॥
पुरुषा रचा तोहि हमरे काजा । इकमति होय करहु उपराजा॥
हम हैं पुरुष तुमहि हौ नारी ।अब जनि डरपो त्रास हमारी॥

अद्यावचन निरंजनप्रति

कहै कन्या कस बोलहु बानी । भ्राता जेठ प्रथम हम जानी॥
कन्या कहै सुनो हो ताता ।ऐसी विधिजनिबोलहु बाता॥
अब मैं पुत्री भई तुम्हारी । ताते उदर मांझ लियो डारी॥
जेष्ठ बन्धु प्रथमहिके नाता । अब तो अहो हमारे ताता॥
निरमलदृष्टिजब चितवहु मोहीं ।नहिं तो पाप होय अब तोहीं॥
मन्द दृष्टि जनि चितवहु मोही। ना तो पाप होय अब तोही॥

निरंजनवचन अद्याप्रति

कहै निरंजन सुनो भवानी । यह मैं तोहि कहों सहिदानी॥
पाप पुण्य डर हम नहिं डरता। पाप पुण्यके हमहीं करता॥
पाप पुन्य हमहींसे होई । लेखा मोर न लेहै कोई॥
पाप पुन्य हम करब पसारा । जो बाझे सो होय हमारा॥
ताते तोहिं कहौ समुझाई । सिख हमार लो सीस चढ़ाई॥
पुरुष दीनतोहिं हमकहँ जानी । मानहु कहा हमार भवानी॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 24(148) की है, इसमें वर्णन है कि ''जोगजीत ने देवी(दुर्गा) कन्या को कैल (ज्योति निरंजन) के उदर (पेट) को फाड़कर निकाल दिया, जोगजीत चला गया। देवी तथा ज्योति निरंजन केवल दो ही थे। देवी बहुत डरी हुई थी। काल ने कहा कि आप डरो मत अब यहाँ कोई नहीं आएगा, परमात्मा ने आपको मेरे लिए ही उत्पन्न किया है। यह सुनकर आदि कुमारी ने कहा कि प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हैं। दूसरे मैं आपके

पेट से निकली हूँ। जिस कारण से में आपकी पुत्री हुई। आप मुझे पवित्र दृष्टि से देखें नहीं तो पाप के भागी हो जाओगे। तब काल ने कहा कि यह मेरा राज्य है। यहाँ पाप-पुण्य का मैं ही कर्त्ता हूँ। मुझे किसी से डर नहीं है। हे भवानी! तू मेरा कहा मान तथा मुझे पति रूप में स्वीकार कर ले तेरा इसी में हित है।

अनुरागसागर 149 (२५)

कबीरवचन धर्मदास प्रति

बिहँसी कन्या सुन अस बाता। इक मति होय दोई रंगराता॥
रहस वचन बोली मृदु बानी। नारिनीचबुधिरतिविधिठानी॥
रहसवचन सुनि धरम हरषाना। भोग करनको मनमें आना॥

छन्द

मन नहिं कन्या कहती असचरितकीन्ह निरंजना॥
नख घातकियेभगद्वारततछिण, घाटउत्पतिगंजना॥
नखं रेषशोनितचल्या, तिहुँको खब खासआरंभनी॥
आदिउत्पत्तिसुनहु धर्मनि, कोउ नहिं जानत जम मनी॥
त्रियावार कीन्ही रति तबै, भये ब्रह्मा विष्णु महेशहो॥
जेठे विधि विष्णु लघु तिहि, तीज शंभु शेष हो॥१८॥
सोरठा-उत्पति आदिप्रकाश, यहिविधितेहिप्रसंगभो॥
कीन्हो भोगविलास, इकमनि कन्या काल है॥१८॥

भवसागरकी रचना

तेहि पीछे ऐसा भो लेखा। धर्मदास तुम करौ विवेका॥

निरंजनवचन अष्टाप्रति

अग्निपवनजलमहि आकाशा। कूर्म उदरतें भयो प्रकाशा॥
पांचौ अंस ताहि सन लीन्हा। गुण तीनों सीसनसों कीन्हा॥
यहि विधि भयेतत्त्वगुण तीनों। धर्मराज तब रचना कीनों॥

कबीर वचन धर्मदास प्रति

गुणतसम कर देविहि दीन्हा। आपन अंश उत्पने कीन्हा॥
बुन्द तीन कन्या भग डारा। तासँग तीनों अंग सुधारा॥

१ यह तो पुरानी प्रतियोंमें ऐसाही है किन्तु नवीन प्रतियोंमें उपर्युक्त दोनों पंक्ति नहीं हैं जो विचारपूर्वक प्रसंगोंके पढनेसे ठीक नहीं जान पड़ता।

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 25(149) की है। इसमें प्रकरण है कि भवानी ने अपनी सहमती

व्यक्त कर दी। तब काल ने अपने नाखुनों से स्त्री योनि बनाई तथा संभोग विलास किया। तीन बार रति क्रिया की उससे तीन पुत्रों का जन्म दुर्गा के पेट से हुआ। जेष्ट पुत्र ब्रह्मा, मध्यम विष्णु तथा लघु शंकर उत्पन्न हुए। इन्हीं को एक-एक गुण युक्त किया। श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शंकर तमगुण युक्त किये। यही तीन देवता कहलाए यही तीन गुण कहलाए।

(२६) 150 अनुरागसागर

पांच तत्त्व गुण तीनों दीन्हा। यहिबिधिजनकीरचना कीना॥
प्रथम बुन्दते ब्रह्म जो भयऊ। रजगुणपंचतत्त्व तेहि दयऊ॥
दूजो बुन्द विष्णु जो भयऊ। सतगुण पंच तत्त्वतिन पयऊ॥
तीजे बुन्द रुद्र उत्पाने। तमगुण पंच तत्त्व तेहि साने॥
पंच तत्त्व गुण तीन खमीरा। तीनों जनको रच्यो शरीरा॥
ताते फिरि फिरि परलय होई। आदि भेद जाने नहिं कोई॥
कहै धर्म कामिनि सुनबानी। जो मैं कहूँ लेहु सोमानी॥
जीव बीज आहै तुव पासा। सो ले रचना करहु प्रकाशा॥
कर्ण निरञ्जन पुनि सुनु रानी। अब अस करहु आदि भवानी॥
त्रय सुत सौंप तोहि कहँदीन्हा। अबहमपुरुषसेवचित्त लीन्हा॥
राज करहु तुम लै तिहुँ बारा। भेद न कहियो काहु हमारा॥
मोर दरस त्रय सुत नहिं पैहैं। जो मुहि खोजत जन्म सिरैहैं॥
ऐसो मता दिढैहो जानी। पुरुष भेद नहिं पावै प्रानी॥
त्रयसुत जबहिं होहिं बुधिवाना। सिंधुमथन दे पठहु निदाना॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

कहेउ बहुत बुझाय देविहि, गुप्त भये तब आहि हो॥
शून्य गुफहि निवास कीन्हों, भेद लहको ताहिहो॥
वह गुप्त भा पुनि सङ्ग सबके, मन निरंजन जानिये॥
मन पुरुष भेद उच्छेद देवे, आप परगट आनिये॥
सो०—जीवभयेमतिहीन, परिसि अगमसो कालको॥
जनम जनम भये खीन, मुरुचा कर्म अकर्मको १८
जीव सतावै काल, नाना कर्म लगायके॥
आप चलावै चाल, कष्ट देय पुनि जीवको॥२०॥

★ यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के

पृष्ठ 26(150) की है। इसमें प्रकरण है कि ''पांच तत्व तथा तीन गुणों से काल अपनी सृष्टि खड़ी करेगा। उसके पश्चात् प्रलय (सर्व विनाश) होगा। पुनः दुर्गा के शरीर में सर्व प्राणी बीज रूप में समा जाऐंगे।

काल ब्रह्म ने कहा कि ''मैं गुप्त रहा करूंगा, मेरा भेद किसी को भी नहीं बताना, मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) को भी नहीं बताना, मैं शुन्य में ब्रह्मण्ड के सर्वोपरि स्थान में रहा करूंगा। मेरे तीनों पुत्र मेरी खोज करेंगे मैं इनको भी दर्शन नहीं दूंगा। मेरी खोज करके व्यर्थ में अपना जीवन नाश करेंगे। हे भवानी! एक मत संसार में दृढ़ कर दे की पूर्ण परमात्मा का भेद कोई न पा सके। जब तीनों पुत्र बुद्धिमान तथा युवा हो जाऐं तो इनको सिन्धु मन्थन के लिए भेज देना। सत्य पुरूष कबीर जी अपने भक्त धर्मदास जी को बता रहे हैं कि ''काल स्वयं तो ऊपर गुप्त रहने लगा परन्तु अपना अंश ''मन'' सर्व आत्माओं के संग छोड़ दिया। सर्व अनुचित कर्म मन कराता है, दण्ड जीवात्मा को देता है। यह काल ऐसे मेरी आत्मा को सता रहा है।

यह फोटो कापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 27(151) की है जो कि इसी पुस्तक के पृष्ठ 81 पर है। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी अपने प्रिय भक्त धर्मदास जी से बता रहे हैं कि ''काल ब्रह्म ने अपने स्वांसों से चारों वेदों को प्रकट किया। (इनमें से वह प्रकरण निकाल दिया। जिसमें परमेश्वर की जानकारी थी। जिसकी पूर्ति के लिए स्वयं सत्यपुरूष को आना पड़ता है।) वेदों के शेष प्रकरण को काल ने समुन्द्र में छुपा दिया। उस समय तीनों पुत्र (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) युवा तथा बुद्धिमान (सयाने) हो चुके थे। तब दुर्गा जी को ब्रह्म काल ने कहा कि तीनों पुत्रों को सागर मंथन के लिए भेज दे। भवानी ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी को वेद प्राप्त हुए। विष्णु को तेज तथा शिव को विष प्राप्त हुआ। नोट :- यहाँ पर मिलावट है, वास्तव में पहली बार वेद ही निकले थे। तीसरी बार मन्थन करने पर {कबीर सागर अध्याय ''अनुराग सागर'' पृष्ठ 29(153) में कुछ स्पष्ट है। वहाँ भी गलती की है, लिखा है वेद निकले वहाँ पर वास्तव में रत्न निकले थे} अमृत तथा विष निकला था। अमृत विष्णु ने तथा विष शंकर ने ग्रहण किया था।

सिन्धुमथन और चौदह रत्न उत्पत्तिकी कथा

त्रय बालक जब भये सयाने । पठये जननी सिंधु मथाने ॥
बालक माते खेल खिलारी । सिंधुमथनहिं गयउ खरारी ॥
तेहि अंतर इक भयौ तमासा । सो चरित्र बूझो धर्मदासा ॥
धाऱ्यो योग निरंजन राई । पवन आरंभ कीन्ह बहुताई ॥
त्यागो पवन रहित पुनि जबही । निकसेउ वेदस्वास सँग तबही ॥
स्वास सँग आयउ सो वेदा । बिरला जन कोई जानेभेदा ॥
अस्तुति कीन्हवेद पुनि ताहां । आज्ञाका मोहि निर्गुनाहां ॥
कह्यौ जाव करू सिंधुनिवासा । जेहि भेटे जैहौ तिहिपासा ॥
उठी आवाज रूप नहिं देखा । जोतिअगम दिखलावतभेखा ॥
जलेउ वेद पुनि तेज अपाने । तेज अन्न पुनि विष संधाने ॥
चले वेद तहँवा कहँ जाई । जहँवा सिंधु रचा धर्मराई ॥
पहुँचे वेद तब सिंधु मँझारा । धर्मराय तब युक्ति विचारा ॥
गुप्त ध्यान देविहि समुझावा । सिंधुमथनकहँकसबिलमावा ॥
पठवहु बेगि सिंधुत्रय बारा । दृढ़कै शोचहु वचन हमारा ॥
बहुरिआपपुनि सिंधु समाना । देवी कीन्ह मथन अनुमाना ॥
तिहुँबालककहँकह समुझायी । आशिष दे पुनि तहां पठायी ॥
पैहौ वस्तु सिन्धुके पाहीं । जाहु वेगि तीनों सुत ताहीं ॥
चलिभौ ब्रह्मा मान सिखाई । दोउ लहुरा पुनि पाछे जाई ॥

छन्द

त्रय सुत बाल खेलत चले, ज्योंसुभगबालमरालहो ॥
एकगहिछोड़तमहीपुनि, एककरगहिचलतलटपटचालहो ॥
क्षणहिधावतक्षणस्थिर खड़े, क्षणभुजहिगरलावहीं ॥
तेहि समयकी शोभा भली, नहिं वेद ताकहँ गावहीं ॥

(२८) 152 अनुरागसागर

सोरठा–गये सिंधुके पास, भये ठाढ़ तीनों जने ॥
युक्तिमथनपरकास,एक एकको निरखही॥२१॥

प्रथमवार सिन्धु मथन

तीनों कीन्ह मथन तब जाई । तीन वस्तु तीनों जन पाई ॥
ब्रह्मा वेद तेज तेहि छोटा । लहुरा तासुमिलेविष खोटा ॥
भेटि वस्तु त्रय तीनों भाई । चलिभये हर्षकहत जहँमाई ॥
मातापहँ आये त्रय वारा । निजनिजवस्तुप्रगट अनुसारा॥
माता आज्ञा कीन्ह प्रकाशा । राखुवस्तुतुमनिजनिज पासा॥

द्वितीय वार सिन्धुमथन

पुनि तुम मथहु सिन्धु कहे जाई। जौ जेहि मिले लेउ सो भाई॥
कीन्हचरितअस आदिभवानी। कन्या तीन कीन्ह उत्पानी ॥
कन्या तीन उत्पान्यो जबहीं । अंसवारिमहँ नायो सबहीं ॥
सब माताको आगे कीन्हा । माताबांटितिन्हनकहँ दीन्हा ॥
पठयो सिंधु महि पुनि ताही । त्रय सुत मर्मसो जानत नाहीं॥
पुनि तिन मथनसिंधुको कीन्हा । भेटचो कन्याहर्षितह्वै लीन्हा ॥
कन्या तीनहु लीन्हे साथा । औ जननी कहँ नायहु माथा॥
माता कहे सुनहु सुत मोरा । यह तो काज भये सब तोरा॥
एकएकबांटि तीनहुको दीन्हा । काहु भोग कस आज्ञा कीन्हा॥
सावित्री ब्रह्मा तुम लेऊ । है लक्ष्मी विष्णु कहँ देऊ ॥
पारवती शंकर कहँ दीन्ही । ऐसी माता आज्ञा कीन्हीं ॥
तीनउ जन लीन्हीं सिरनाई । दीन्ह अद्याजस भाग लगाई॥
पाई कामिनि भये अनन्दा । जस चकोर पाये निशिचंदा ॥
काम बसी भए तीनों भाई । देव दैत दोनों उपजाई ॥
धर्मदास परखो यह बाता । नारी भयी हती सो माता ॥
माता बहुरि कहें समझाई । अब फिर सिंधु मथो तुम भाई॥
जो जेहि मिलै लेहुसो जाई । अबजनिकरोविलंब तुम भाई॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 28(152) की है। इसमें प्रकरण यह है कि ''दूसरी बार फिर से सागर मन्थन के लिए तीनों पुत्रों को भेजा। तब दुर्गा ने निरंजन (काल) के आदेशानुसार अपने वचन से तीन लड़की (युवती) उत्पन्न की तथा उनको समन्दर में छुपा दिया। तीनों (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश) ने सागर मन्थन दूसरी बार किया, तीन लड़कियाँ बारी-२ निकली। बड़ी का नाम सावित्री रखा तथा ब्रह्मा से विवाह कर दिया। दूसरी लड़की का नाम

''लक्ष्मी'' रखा, उसका विष्णु से विवाह कर दिया। तीसरी का नाम पार्वती रखा तथा शंकर के साथ विवाह कर दिया। परमेश्वर कबीर जी पूर्ण परमेश्वर तथा आदि पुरूष हैं। इसलिए सर्व राज बताते हुए अपने प्रिय भक्त धर्मदास जी को बता रहे हैं कि इस प्रकार इन्हीं तीनों पुत्रों से काल ब्रह्म की सृष्टि उत्पन्न हुई है। देवता तथा राक्षस उत्पन्न हुए हैं।

अनुरागसागर 153 (२९)

तृतीयवार सिंधुमथन

त्रयसुत चले तब माथ निवायो। जो कछु कहेउ करब हम जायो॥
मथ्योसिंधुकछुविलंबनकीन्हा। मिला वेदसो ब्रह्मै लीन्हा॥
चौदह रतनकी निकसी खानी। ले माता पहँ पहुँचे आनी॥
तीनहु बन्धु हरषि है लीन्हा। विष्णुसुधापायउहरविषदीन्हा॥

अघाका तोनों पुत्रोंको सृष्टिरचनेकी आज्ञा देना और सब
मिलकर पांच खानकी उत्पत्ति करना

पुनि माता अस वचन उचारा। रचहु सृष्टि तुम तीनों बारा॥
अण्डज उत्पत्ति कीन्हा माता। पिंडज ब्रह्मा कर उत्पाता॥
ऊष्मजखानिविष्णु व्यवहारा। शिव अस्थावर कीन्ह पसारा॥
चौरासी लख योनिन कीन्हा। आधाजल आधाथल कीन्हा॥
एक तत्त्व अस्थावर जाना। दोय तत्त्व ऊष्मज परवाना॥
तीन तत्त्व अण्डज-निरमाई। चार तत्त्व पिंडज उपजायी॥
पांच तत्त्व मानुष विस्तारा। तीनों गुण तेहि माहिं सँवारा॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 29(153) की है। इसमें तीसरी बार मंथन करने का प्रमाण है। इसमें कुछ मिलावट है ''लिखा है कि वेद निकले'' नहींऽयहाँ पर केवल चौदह रत्न, अमृत तथा विष निकला था जो विष्णु तथा शिव को प्राप्त हुए थे। इसके पश्चात् अन्य प्राणियों की उत्पत्ति देवी के द्वारा की गई।

पृष्ठ 73 से लगातार सृष्टि रचना का प्रकरण :-

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा प्रारम्भ मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के

**वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह विवाहकर्म महापाप का कारण है। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव (कबीर प्रभु)से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्मण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्मण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।**

**प्रमाणः- कबीर सागर के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 21(145), 22(146) पर।**

{विशेष विवरण – अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/परम अक्षर पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म सर्व ब्रह्मण्डों का स्वामी है अर्थात् वासुदेव है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्मण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है। जो केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्मण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें आपको तीन अन्य नाम पढ़ने को मिलेंगे – ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद – एक ब्रह्मण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म

(क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्मण्ड में बने चौदह लोकों में से केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा जाता है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकीय ब्रह्मा कहा जाता है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा जाता है।}

## "श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

**काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मन मानी करूंगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी कबीर पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप ब्रह्म की अण्डे से उत्पत्ति हुई है तथा बाद में मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी तू कहेगा मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूंगा। यह कह कर अपने नाखुनों से दुर्गा के स्त्री इन्द्री बनाई तथा दुर्गा-प्रकृति के साथ बलपूर्वक विवाह किया तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की तथा सख्त आदेश दिया कि मेरा भेद किसी को नहीं बताएगी। मैं कभी किसी को किसी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरी अटल प्रतिज्ञा है। (प्रमाण :- कबीर सागर के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 96 (1458) पर। पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 209 पर।) प्रकृति ने युवा होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करा दिया, युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत**

**करके इक्त्रित किया तथा प्रकृति (दुर्गा) के द्वारा इन तीनों का विवाह किया। एक ब्रह्मण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त किए। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग का तथा विष्णु जी को सत्तोगुण विभाग का तथा श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का प्रभु बनाया तथा स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्य मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्मण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। उसका नाम ब्रह्मा रखता है दूसरा सत्तोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखता है दोनों के संयोग से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सत्तोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से तमोगुण युक्त पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं।**(प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 8, 9 पृष्ठ नं. 99 से 110 तक, अनुवाद कर्त्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरख पुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद्देवीमहापुराण तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्त्ता हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) **इन्हीं को धोखे में रख कर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार श्री शिव जी द्वारा करवाता है।** (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वयं गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिंघला कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर

प्रदान करता है) **गुण प्रधान क्षेत्र को समझने के लिए :- जैसे किसी घर में तीन कक्ष बने हों। एक कक्ष में अश्लील चित्र लगे हों। उस कक्ष में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कक्ष में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार उत्पन्न होते हैं तथा प्रभु का चिन्तन ही बना रहता है। तीसरे कक्ष में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना ब्रह्मलोक में की हुई है।**

## ''तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित''

**''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''**

**प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।**

**दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सृष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।**

**उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद**

अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा - अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा (42)।

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो। (42)

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांऽबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः। (8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् हम तीनों को जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव हैं ये तीनों नाशवान है। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

## "ब्रह्म काल की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा"

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म (काल) ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकृति) से कहा कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूंगा। जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे ? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का

**आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। आप मेरी आज्ञा का पालन करो जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाऐं तो इन्हें अचेत कर देना तथा युवा होने पर सचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं तो मैं तुझे भी दण्ड दूंगा। दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती। (प्रमाण :- ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 96 (1458) पर। पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 209 पर।) यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में इसी काल रूपी ब्रह्म ने श्री कृष्ण में प्रवेश करके कहा है कि यह बुद्धिहीन जन समुदाय मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कृष्ण मानते हैं।**

**अध्याय 7 का श्लोक 24**

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्।२४।

**अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।**
**परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।**

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धि हीन (मम) मेरे अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम्) अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

**केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धि हीन मेरे अनुत्तम अर्थात् घटिया अविनाशी विशेष भाव को न जानते हुए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (24)**

**गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।**

**☛ जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) प्रथम बार सागर मन्थन किया तो चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चें माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढ़े।**

**नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कविर्गिरिः अर्थात् कविर्वाणी(कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है। (प्रमाण :- ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मन्त्र 17 में, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मन्त्र 1 तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मन्त्र 2 में स्पष्ट है।)**

**दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याऐं मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकृति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री,लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुप गई। सागर मन्थन के समय तीन भिन्न-2 रूपों में बाहर आई। गीता अध्याय 7 श्लोक 4 से 6 में स्पष्ट है कि जो जड़ प्रकृति है उससे भिन्न जो चेतन प्रकृति है। वह दुर्गा है। गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में स्पष्ट किया है कि सर्व प्राणी प्रकृति से उत्पन्न किए हैं मैं उसकी योनि में बीज स्थापित करता हूँ मैं सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा दुर्गा (प्रकृति) सब की माता है फिर श्लोक 5 में कहा है कि तीनों गुण (रजगुण, सतगुण, तमगुण) प्रकृति से उत्पन्न हुए हैं।**

**सिद्ध हुआ कि प्रकृति अर्थात् दुर्गा ही तीन रूप हुई। उन्हीं में से वही प्रकृति तीन रूप हुई तथा श्री ब्रह्मा को सावित्री, श्री विष्णु को लक्ष्मी, श्री शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।**

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमृत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} **जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरूष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी से बताया कि वेदों में वर्णन है कि सृजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्वदर्शी संत से पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वृतांत कह सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त अन्य कोई प्रभु नहीं है। मैं ही कर्त्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ। (प्रमाण = ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 96 (1458) तथा 97 (1459) में इसी पुस्तक के पृष्ठ 209-210 पर फोटोकापी।) परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कृत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा**

**कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने कसम खाई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरूष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तू क्या करेगा? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको मुख नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा अर्थात् 21 ब्रह्मण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।**

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्।२४।

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम) मेरे (अनुतमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदृश्यमान छुपे हुए अर्थात् परोक्ष (माम्) मुझ (व्यक्तिम्) मानव आकार में अर्थात् कृष्ण अवतार (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।(24)

**केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धिहीन लोग मेरे अश्रेष्ठ अटल परम भावको न जानते हुए अदृश्यमान छुपे हुए अर्थात् परोक्ष मुझ मानव आकार में अर्थात् कृष्ण अवतार प्राप्त हुआ मानते हैं।(24)**

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।२५।

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ अर्थात् अव्यक्त रूप में रहता हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने भिन्न–भिन्न रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।(25)

केवल हिन्दी अनुवाद : मैं योगमायासे छिपा हुआ अर्थात् अव्यक्त रूप में रहता हुआ सबके प्रत्यक्ष नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये जन्म न लेने वाले अविनाशी अटल भावको यह अज्ञानी जनसमुदाय संसार मुझे नहीं जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने भिन्न-भिन्न रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।(25)

शेष इसी पुस्तक के पृष्ठ 113 पर। इससे पहले कृपया पढ़ें प्रमाण के लिए कबीर सागर की फोटोकापियाँ विशेष व्याख्या के साथ।

यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 29 (153) की है जो कि इसी पुस्तक के पृष्ठ 93 पर है। जब ब्रह्मा जी ने वेदों को पढ़ा। वेद मन्त्रों का अर्थ जानने लगा तो काल ब्रह्म ने ब्रह्मा में प्रवेश करके अनर्थ करा दिया कि ''वह तो निराकार है, उसका कोई रूप नहीं केवल आकाश में एक ज्योति दिखाई देती है, वह ही परमात्मा का रूप है। उसकी देह (शरीर) दिखाई नहीं देती है। वेद भी कहते हैं कि परमात्मा की महिमा हमारे अन्दर पूर्ण नहीं है। न इति (नेति) न इति (नेति) नेति कह कर वे अर्थात् जो महिमा हमने परमात्मा की बताई है। इसका अन्त नहीं है। नेति-नेति-नेति ...।

जब माता से ब्रह्मा जी ने पूछा कि संसार की रचना आपने की है या किसी अन्य ने। तब दुर्गा जी ने कहा था कि सर्व रचना करने वाली मैं ही हूँ। मुझ से परे कोई परमात्मा नहीं है।

वेदों को पढ़ कर ब्रह्मा जी ने श्री दुर्गा जी से पूछा कि आप तो कह रहे थे कि मेरे से अन्य कोई सिरजनहार प्रभु नहीं है। वेदों में लिखा है कि सिरजनहार कोई अन्य परमात्मा है।

तृतीयवार सिंधुमथन

त्रयसुत चले तब माथ निवायो। जो कछु कहेउ करब हम जायो॥
मथ्योसिंधुकछुविलंबनकीन्हा। मिला वेदसो ब्रह्म लीन्हा॥
चौदह रतनकी निकसी खानी। ले माता पहँ पहुँचे आनी॥
तीनहु बन्धु हरषि है लीन्हा। विष्णुसुधापायउहरविषदीन्हा॥

अष्टाका तीनों पुत्रोंको सृष्टिरचनेकी आज्ञा देना और सब मिलकर पांच खानकी उत्पत्ति करना

पुनि माता अस वचन उचारा। रचहु सृष्टि तुम तीनों बारा॥
अण्डज उत्पत्ति कीन्हा माता। पिंडज ब्रह्मा कर उत्पाता॥
ऊष्मजखानिविष्णु व्यवहारा। शिव अस्थावर कीन्ह पसारा॥
चौरासी लख योनिन कीन्हा। आधाजल आधाथल कीन्हा॥
एक तत्त्व अस्थावर जाना। दोय तत्त्व ऊष्मज परवाना॥
तीन तत्त्व अण्डज-निरमाई। चार तत्त्व पिंडज उपजायी॥
पांच तत्त्व मानुष विस्तारा। तीनों गुण तेहि माहिं सँवारा॥

ब्रह्माका वेद पढकर निराकारका पता पाना

ब्रह्मा वेद पढ़न तब लागा। पढ़त वेद तब भा अनुरागा॥
कहे वेद पुरुष इक आही। हैं निरंकार रूप नहिं ताही॥
शून्य माहिं वहि जोत दिखावे। चितवन देह दृष्टि नहिं आवे॥
स्वर्ग सीस पग आहि पताला। तेहिमत ब्रह्मा भौ मतवाला॥
चतुरानन कहें विष्णु बुझावा। आदिपुरुष मोहिं वेद लखावा॥
पुनि ब्रह्मा शिवसों अस कहई। वेद मथन पुरुष एक अहई॥

ब्रह्मावचन विष्णुप्रति

अहै पुरुष इक वेद बतावा। वेद कहे हम भेद न पावा॥

कबीरवचन अष्टाप्रति

तब ब्रह्मा माता पहँ आवा। करि प्रणाम तब टेके पावा॥

ब्रह्मावचन अष्टाप्रति

हे माता मोहि वेद लखावा। सिरजनहार और बतलावा॥

(३०) 154 अनुरागसागर

छन्द

ब्रह्मा कहे जननी सुनौ, कहहु कन्त तुम्हार है ॥
कीजै कृपा जनि मोहि दुरावो,कहाँ पिता हमार है॥

अष्टावचन ब्रह्मप्रति

कहे जननीसुनहुब्रह्मा,कोउ नहिं जनक तुम्हारहो॥
हमहितेभई सब उत्पति,हमहिसबकीनसम्हारहो२१॥

ब्रह्मावचन अष्टाप्रति

सोरठा–ब्रह्मा कहे पुकार, सुनु जननी तैं चित्त दे॥
कहत वेद निरुवार, पुरुष एक सोगुप्त है ॥२२॥

अष्टावचन ब्रह्मप्रति

कहे अष्टा सुनु ब्रह्मकुमारा । मोसे नहिं कोउ स्रष्टा न्यारा॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल बनाई । सात समुन्दर हम निरमाई॥

ब्रह्मावचन अष्टाप्रति

मानो वचन तुमहि सब कीन्हा । प्रथमगुप्त तुम कसरखलीन्हा॥
जबै वेद मोहि कहै बुझाई । अलखनिरंजन पुरुष बताई ॥
अब तुम आप बनो करतारा । प्रथम कहे न किया विचारा॥
जो तुम वेद आप कथि राखा ।तोकसतुमअलखनिरंजनभाखा
आपे आप आप निरमाई । काहे न कथन कीन तुम माई॥
अब मोसनतुमछलजनिकरहू ।सांचे सांच सब कहि उच्चरहू॥
जब ब्रह्मा यहिविधि हठठाना । तब अष्टामन कीन्हतिवाना॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

केहि विधि याहि कहूँ समझाई । विधि नहिं मानत मोर बड़ाई॥
जो यदि कहौं निरंजन वाता ।केहिविधिसमझेयह विख्याता॥
प्रथम कह्यो निरंजन राई । मोर दरश काहू नहि पाई ॥
जबै जो यहीं अलख लखावों।केहिविधिकहिताकोदिखलावों॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 30 (154) की है। ब्रह्मा जी पूछ रहे हैं कि माता! हे कृपया करके मुझे बता दो हमारा पिता कहाँ है? आपका पति (कन्त) कौन है? श्री दुर्गा देवी जी ने पुनः यही दोहराया कि तुम्हारा कोई उत्पत्ति कर्ता (जनक-पिता) नहीं है। मरे से ही सब की उत्पत्ति हुई है। मैं ही सबकी सम्भाल (Take Care) करती हूँ।

ब्रह्मा जी ने कहा, हे माता! कृपया ध्यान से सुनो; वेद कह रहे हैं कि एक पुरूष (नराकार परमात्मा) है, वह गुप्त है। (प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 17 में) ब्रह्मा जी के पूछने पर दुर्गा जी ने कहा कि वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा।

तब ब्रह्मा ने कहा कि पहले तो आप कह रही थी कि मेरे अतिरिक्त कोई जगत का कर्ता नहीं है। अब वेदों से पता चला तो आप कह रही हो कि वह तुम्हें दिखेगा नहीं। आप हमारे साथ छलयुक्त बात मत करो, सच्चाई बताओ। कृपया करके मुझे उस के दर्शन कराओ। ब्रह्मा का हठ देखकर अध्या (दुर्गा) जी ने विचार किया कि एक तरफ तो निरंजन ने कहा है कि मैं दर्शन नहीं दूंगा। दूसरी ओर ब्रह्मा दर्शन करने का हठ कर रहा है।

अनुरागसागर 155 (३१)

अध्यावचन ब्रह्माप्रति

असविचार पुत्रब्रह्मै समझावा। अलखनिरञ्जनहिंदरसदिखावा॥

ब्रह्मावचन अध्याप्रति

ब्रह्मा कहै मोहि ठौर बतावो। आगा पीछा जनि तुम लावो॥
मैं नहिं मानौं तुम्हारी बाता। ऐसी बात न मोहि सुहाता॥
प्रथम तुम मुहि दीनभुलावा। अब तुम कहो न दरसदिखावा॥
तासु दरश न पैहो पूता। ऐसी बात कहो अजगूता॥

छन्द

दरशदिखायतत्कालदीजै, मोहिनभरोसतुम्हारहो॥
संशयनिवारयहिकालदीजै, कीजेनविलंबलगारहो॥

अध्यावचन ब्रह्माप्रति

कह जननी सुनो ब्रह्मा, कहौं तोसों सत्तही॥
सातस्वर्ग है माथ ताको, चरण पतालसप्तही॥२२॥
सोरठा—लेहु पुष्प तुम हाथ, जो इच्छा तेहि दरशकी
जाय नवाओ माथ, ब्रह्मा चले शिरनाइके॥२३॥

जननी गुन्यो वचन चितमाहीं। मोरि कही यह मानति नाहीं॥
यह कहँ वेद दीन्ह उपदेशा। पै दरश ते नहिं पावै भेशा॥
कह अर्धंगि सुनो रे वारा। अलखनिरञ्जन पिता तुम्हारा॥
तासु दरश नहिं पैहै पूता। यह मैं वचन कहौं निजगूता॥
ब्रह्मा सुनि व्याकुल ह्वै धावा। परसन सीस ध्यानहियलावा॥
ब्रह्मा चले जननि सिर नाई। सीस परसि आवै तेही ठाई॥
तुरतहि ब्रह्मा दीन्ह रिंगायी। उत्तर दिशा बेगि चलि जाई॥
आज्ञा मांगि विष्णु चलेबाला। पिता दरशको चले पताला॥
इत उत चितयमहेश न डोला। सेवा करत कछू नहीं बोला॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 31 (155) की है। इसमें लिखे लेख का भावार्थ है कि ''ब्रह्मा जी अपनी माता दुर्गा के दो तरफा वचनों से माता दुर्गा पर अविश्वास करके उत्तर दिशा की ओर

पिता की खोज करने चला गया। फिर विष्णु भी पाताल लोक में पिता की खोज के लिए निकल गया। परन्तु शिव तो अपनी माता के वचनों पर विश्वास करके चुप रहा, कोई प्रयत्न नहीं किया।

( ३२ ) 156 अनुरागसागर

तेहिशिवमनअसचिंतअभावा। सेवा करनजननि चितलावा॥
यहिविधिबहुतदिवसचलिगयऊ। माता सोचपुत्र कह कियऊ॥

विष्णुका पिताके खोजसे लौटकर पिताके चरणतक
न पहुँचनेका वृत्तान्त कहना

प्रथम विष्णुजननी ढिग आये। अपनी कथा कहि समुझाये॥
भेंट्यो नहिं मोहि पगु ताता। विषज्वालास्यामल भौगाता॥
व्याकुल भयउ तबै फिर आवा। पिता पगुदरश मैं नहिं पावा॥
सुनि हरषित भइ आदिकुमारी। लीन्हविष्णुकहँनिकटदुलारी॥
चूमेउ बदन सीस दिये हाथा। सत्य सत्य बोलउ सुतबाता॥

धर्मदासवचन कबीरप्रति

कहे धरमनि यह संशय बीती। साहब कहहु ब्रह्मकी रीती॥
पितासीस तना परसन कीन्हा। किहोयनिरासपीछेपग दीन्हा॥

छन्द

गयउ ब्रह्मा सीस परसन, कथा ता दिनकी कही॥
भयो दिष्ट मेराव कि,नहि तासु दरशन तिनलही॥
यह बरनि सब कहो सतगुरु, एकएक बिलीयके॥
निजहास जानि परगासकीजे, धरहुनिजजनिगायके२३॥
सो०-प्रभु हम हैं तुव दास, जन्मकृतारथमोरिकरि॥
करहु वचन परगास, तेहि पीछे जो चरित भा॥२४॥

पिताके खोजमें गये हुए ब्रह्माकी कथा। कबीरवचन धर्मदासप्रति

धरमदास मुहिं अतिप्रिय अहहू। कहो संदेश परखि दृढगहहू॥
चलत ब्रह्म तब वार न लावा। पिता दरश कहँअतिमनभावा॥
तेहि स्थान पहुँचि गे जाई। नहिं तहँरविशशि शून्यरहाई॥
बहुविधि अस्तुति करे बनायी। ज्योति प्रभावध्यानतहँलाई॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 32 (156) की है। इस उल्लेख का भावार्थ है कि ''इस प्रकार दोनों पुत्रों के चले जाने पर दुर्गा चिन्तित हुई। फिर विष्णु जी ने लौट कर बताया कि मुझे पिता का दर्शन नहीं हुआ। इस बात से दुर्गा अति प्रसन्न हुई और कहा कि बेटा आप सत्य वक्ता हैं। यह कह कर दुर्गा जी ने श्री विष्णु जी को बहुत प्यार किया। धर्मदास जी ने पूछा कि हे परमेश्वर आगे क्या हुआ? ब्रह्मा जी को उसका पिता

मिला कि नहीं? परमेश्वर कबीर जी ने कहा ''हे धर्मदास! आप मेरे बहुत प्रिय हैं। ब्रह्मा ऐसे स्थान पर चला गया जहाँ सुन्सान स्थान था।

अनुरागसागर 157 (३३)

ऐसे बहु दिन गये बितायी । नहि पायो ब्रह्मा दरशपितायी॥
शून्य ध्यानयुग चार गमावा। पिता दरश अजहुँ नहिं पावा॥

ब्रह्मा के लिये अद्याकी चिन्ता

ब्रह्मा तात दरश नहिं पाई । शून्य ध्यान महँ जुग बहु जाई॥
माता चिंता करत मनमाहाँ । जेठ पुत्र ब्रह्मा रह काहाँ ॥
किहि विधि रचना रचहुँ बनाई । ब्रह्मा आवै कौन उपाई ॥

गायत्री उत्पत्ति

उबटि शरीर मैल (न) गहिकाढी। पुत्री रूप कीन्ह रचिठाढी॥
शक्ति अंशनिज ताहि मिलावा। नाम गायत्री ताहि धरावा॥
गायत्री मातहि सिर नावा । चरणचूमि निज सीस चढ़ावा॥

गायत्रीवचन अद्याप्रति

गायत्री विनवै कर जोरी । सुनु जननी यक विनती मोरी॥
कौन काज मोहँ निरमाई । कहो वचन लेउँ सीस चढ़ाई॥

अद्यावचन गायत्रीप्रति

कहे अद्या पुत्री सुनु वाता । ब्रह्मा आहि जेठहि तुव भ्राता॥
पिता दरश कहँ गयो अकाशा। आनौ ताहि वचन प्रकाशा॥
दरश तातकर वह नहिं पावे । खोजत खोजत जन्म गमावे॥
जौने विधिते इहँवा आई । करो जाय तुम तीन उपाई॥

गायत्रीका ब्रह्माके खोजमें जाना । कबीर वचन धर्मदासप्रति

चलि गायत्री मारग आई । जननी वचन प्रीति चितलाई॥
चलत भई मारग सुकुमारी । जननी वचन ध्यान उर धारी॥

छन्द

जाय देखो चतुरमुख कहँ, नाहिं पलक उघारई ॥
कछुक दिन सो रही तहवाँ, बहुरि युक्ति विचारई ॥
कौन विधि यह जागि है,अबकरौं कौन उपायहो॥
मनगुनितसोचबहुतविधि, ध्यानजननीलायहो २४॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 33 (157) की है। इसके उल्लेख का भावार्थ है कि ''ऐसे ब्रह्मा जी को समाधि लगाए चार युग तक ध्यान करने पर भी पिता का दर्शन नहीं हुआ। तब दुर्गा जी को चिन्ता हुई कि ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा रजगुण बिना उत्पत्ति सम्भव नहीं हो सकती। ब्रह्मा को ध्यान से उठा कर लाने के लिए दुर्गा जी (अद्या जी) ने एक गायत्री नाम की कन्या को उत्पन्न करके ब्रह्मा को लाने के लिए भेजा। गायत्री जी ने ब्रह्मा को ध्यान (समाधि) में देखा। उसके वहाँ पहुँचने के कई दिन तक

भी ध्यान से ब्रह्मा जी नहीं उठे। गायत्री जी ने सोचा अब कैसे ध्यान से उठाऊँ?

( ३४ ) 158 अनुरागसागर

ब्रह्माको जगानेके लिये अद्याका गायत्रीको युक्ति बताना

सो०–अद्या आयसु पाइ, गायत्री तब ध्यान महँ ॥
निज कर परसेउ जाय,ब्रह्मा तबहीं जागि हैं॥२४॥
गायत्री पुनि कीन्ह तैसी। माता युक्ति बताई जैसी॥
गायत्री तब चित्त लगाई। चरणकमल कहँ परसेउ जाई॥

ब्रह्माका जागकर गायत्रीपर क्रोध करना

ब्रह्मा जाग ध्यान मन डोला। व्याकुल भयो वचन तब बोला॥
कवन अहै पापिन अपराधी। कहा छुड़ायहु मोरि समाधी॥
शाप देहुँ तोकहँ मैं जानी। पिताध्यानमोहिखण्डचोआनी

गायत्री वचन ब्रह्माप्रति

कहि गायत्री मोहिन पापा। बूझि लेहु तब देहहु शापा॥
कहों तोहिसो सांची बाता। तोहि लेन पठयी तुव माता॥
चलहु वेगि जननिलावहुबारे। तुम विन रचना को विस्तारे॥

ब्रह्मावचन गायत्रीप्रति

ब्रह्मा कहे कौन विधि जाऊँ। पितादरश अजहुँ नहिं पाऊँ॥

गायत्रीवचन ब्रह्माप्रति

गायत्री कह दरशन पैहो। बेगि चलहु नहिं तो पछतै हो॥

ब्रह्माका गायत्रीको साक्षी देनेको कहना और गायत्रीका
ब्रह्मासे रति करनेकी बात कहना

ब्रह्मा कहै देहु तुम साखी। परस्यो सीस देख मैं आंखी॥
ऐसे कहो मातु समुझायी। तो तुम्हरे सङ्ग हम चलिजायी॥

गायत्रीवचन ब्रह्माप्रति

कह गायत्री सुन श्रुति धारी। हम नहीं मिथ्या बचन उचारी॥
जो मम स्वारथ पुरवहु भाई। तो हम मिथ्या कहब बनाई॥

ब्रह्मावचन गायत्रीप्रति

कह ब्रह्मा नहिं लखी कहानी। कहौं बुँझाय प्रगटकी बानी॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 34 (158) की है। इसके उल्लेख का भावार्थ है कि ''गायत्री को कोई उपाय नहीं सूझ रहा था, उसी समय अद्या जी (दुर्गा जी) ने गायत्री जी को प्रेरणा की कि ''ब्रह्मा जी के चरण स्पर्श करो। ऐसा करने से ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हो गया, समाधि टूट गई। सामने लड़की को देख कर यह जान कर कि इसने मुझे जगाया है। गायत्री जी से कहा कि हे पापनी! तू कौन है, तुने मेरा ध्यान भंग कर दिया। मैं पिता के दर्शन करने का प्रयत्न कर रहा था, मैं तुझे शाप देता हूँ। गायत्री जी ने कहा पहले मेरी बात सुनो यदि मेरा अपराध हो तो शाप देना।

गायत्री ने कहा कि इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। माता ने मुझे आप को लिवा लाने के लिए भेजा है। आप के बिना रचना नहीं हो पा रही है। ब्रह्मा जी ने कहा कि पिता के दर्शन हुए नहीं। ब्रह्मा ने कहा यदि आप मेरी साक्षी बन जाओ कि मेरे सामने ब्रह्मा जी को पिता के दर्शन हुए, सिर-पैर आदि सर्वांग देखे। तब गायत्री ने कहा कि मेरा स्वार्थ पूरा करो, तब मैं तेरी झूठी गवाही दूँगी। यह संकेत किया, ब्रह्मा नहीं समझा और कहा कि स्पष्ट कर।

अनुरागसागर 159 ( ३५ )

गायत्री वचन

कह गायत्री देहु रति मोही । तो कह झूठ जिताऊं तोही ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

गायत्री कहै है यह स्वारथ । जानि कहौं मैं पुन परमारथ ॥
सुनि ब्रह्मा चित करे विचारा । अबका यत्न करहुँ इहिबारा ॥

छन्द

जो विमुख या कह करौं अब तो नहीं बन आवई ॥
साखि तो यह देय नहीं जननि मोहि लजावई ॥
यहाँ नाहिं पिता पायो भयो न एको काज हो ॥
पाप सोचत नहिं बने अब करौं रति विधि साजहो २५
सो०–कियो भोगरतिरंग, विसर्‍यो सो मनदरशका
दोउ कहँ बढ्यो उमंग, छलमति बुद्धिप्रकाशकिले २६॥

सावित्री उत्पत्तिकी कथा

कह ब्रह्मा चल जननी पासा । तब गायत्री वचन प्रकाशा ॥
औरो करौ युक्ति इक ठानी । दूसरी साखि लेहु उत्पानी ॥
ब्रह्मा कहे भली है बाता । करहु सोई जेहि मानै माता ॥
तब गायत्री यतन विचारा । देहि मैल गहि कीन्ह नियारा॥
कन्यारचि निज अंशमिलावा । नाम सावित्री तासु धरावा ॥
गायत्री तिहि कह समुझावा । कहियो दरशब्रह्म पितु पावा॥
कह सावित्रीहम नहिं जानी । झूठ साखि दै आपनि हानी॥
यहसुनिदोउकहँचिन्ता व्यापा। यह तौ भयो कठिन संतापा॥
गायत्री बहु विधि समुझाई । सावित्री के मन नहिं आयी॥
पुनि गायत्री कहा बुझाई । तब सावित्री वचन सुनाई ॥
ब्रह्मा कर मोसों रति साजा । तो मैं झूठ कहौं यहि काजा॥
गायत्री ब्रह्महि समुझावा । दै रति या कहँ काज बनावा॥
ब्रह्मा रति सावित्रिहि दीन्हा । पापमोट आपन शिर लीन्हा॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 35 (159) की है। इसके उल्लेख का भावार्थ है कि ''गायत्री ने कहा मुझे रति दे अर्थात् मेरे से भोग-विलास कर तब मैं तेरी झूठी साक्षी बनूँगी। तब ब्रह्मा ने

विचार किया कि माता के पास जाऊँगा और कहूँगा कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए तो वह कहेगी कि मैं पहले ही कह रही थी तू नहीं माना। तब मुझे शर्म आएगी। यह विचार कर ब्रह्मा ने गायत्री के साथ काम-क्रीड़ा की। फिर गायत्री ने कहा एक साक्षी और हो जाए तो पक्का काम हो जाएगा। ब्रह्मा ने सहमति दे दी। तब गायत्री ने एक लड़की अपने वचन से उत्पन्न की। उसका नाम पौहपवती (यहाँ पर सावित्री लिखा है यह गलत है जो पृष्ठ 36 पर स्पष्ट है।) फिर पौहपवती ने भी झूठी गवाही के लिए ब्रह्मा से काम-क्रीड़ा की शर्त रखी। ब्रह्मा ने शर्त पूरी की और पाप का भागी बना।

( ३६ ) 160 अनुरागसागर

सावित्री कस दूसर नाऊं । कहि पुहुपावति वचन सुनाऊं॥
तीनों मिलिके चलि भे तहवां। कन्या आदिकुमारी जहवां ॥

ब्रह्माका गायत्री और सावित्री के साथ माताके पास पहुँचना और सबका शाप पाना

करि प्रणाम सन्मुख रहे जाई । माता सब पूछी कुशलाई ॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति

कह ब्रह्मा पितु दरशन पाये । दूसरि नारि कहांसे लाये ॥

ब्रह्मावचन

कह ब्रह्मा दोऊ हैं साखी । परस्यो सीस देव इन आंखी॥

अद्यावचन गायत्रीप्रति

तब माता बूझे अनुसारी । कहु गायत्री बचन बिचारी॥
तुम देखा इन दर्शन पावा । कहा सत्य दर्शन परभावा ॥

गायत्रीवचन

तब गायत्री वचन सुनावा । ब्रह्मा दर्श सीस पितु पावा ॥
मैं देखा इन परसेउ शीशा । ब्रह्महि मिले देव जगदीशा ॥

छन्द

लेइ पुहुप परसेउ शीशपितु इन दृढमें देखत रही॥
जल ढार पुहुप चढ़ाय दीन्ह हे जननि यह है सही ॥
पुहुपते पुहुपावती भयी प्रगट ताही ठामते ॥
इनहु दर्शन लह्यो पितुको पूछहु इहि वामते ॥२६॥
हे जननी यह है सही तुम पूछि लो पुहुपावती ॥
सबही सांच मैं तोसों कहूँ नहिं झूठहै एको रती ॥

अद्यावचन पुहुपावतीप्रति

माता कह पुहुपावतीसी कहो सत्य हि मो सना ॥
जो चढ़े सीसहि पिताके तुम वचन बोलहु ततखना॥

१ यह छन्द पुरानी प्रतियोंमें नहीं है

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 36

(160) की है। इसके उल्लेख का भावार्थ है कि '' तीनों मिलकर माता दुर्गा के पास गए। माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तेरे को पिता के दर्शन हुए और यह दूसरी स्त्री कहाँ से लाए। ब्रह्मा ने कहा कि मैंने पिता का शीश देखा। ये दोनों जनी इस बात की गवाह हैं। माता के पूछने पर गायत्री ने कहा कि ब्रह्मा ने पिता का शीश देखा और ब्रह्मा ने परमात्मा की पुष्प-जल चढ़ा कर पूजा की, यह मैंने आँखों देखा। उन्हीं पुष्पों से यह लड़की उत्पन्न हुई, इसलिए इसका नाम पौहपवती है। माता ने पौहपवती से पूछा यदि तुम पिता के शीश पर पुष्प रूप चढ़ी है तो शीघ्र बता तूने क्या देखा?

अनुरागसागर 161 (३७)

सो०—कहु पुहुपावति मोहि, दरश कथानिरवारके॥
यह मैं पूछों तोहि, किम ब्रह्मादरशन किये॥२७॥

सावित्री वचन

पुहुपावंती वचन तब बोली। मातासत्य वचन नहीं डोली॥
दर्शन सीस लह्यो चतुरानन। चढ़े सीसयह धर निश्चय मन॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

साख सुनत अद्या अकुलानी। भा अचरज यह मर्म न जानी॥

अद्याकी चिंता

अलखनिरंजन अस प्रण भाखी। मोकहँ कोउ न देखै आंखी॥
ये तीनहुँ कस कहहिं लबारी। अलखनिरंजन कहहु सम्हारी॥
ध्यान कीन्ह अष्टंगी तिहि क्षण। ध्यानमहिं अस कह्यो निरंजन॥

निरंजन वचन

ब्रह्मा मोर दरश नहिं पाया। झूठिसाखिइन आन दिवाया॥
तीनों मिथ्या कहा बनाई। जनि मानहु यह है लबराई॥

अद्याका ब्रह्माको शाप देना

यह सुनि माता कीन्हे दापा। ब्रह्मा कहँ तब दीन्हो शापा॥
पूजा तोरि करै कोई नाहीं। जो मिथ्या बोलेउ मनमाहीं॥
इक मिथ्या अरु अकरम कीन्हा। नरक मोट अपने शिर लीन्हा॥
आगे है जो शाख तुम्हारी। मिथ्या पाप करहिं बहुभारी॥
प्रगट करहिं बहु नेम अपारा। अन्तर मैल पाप विस्तारा॥
विष्णु भक्तोंसे करहि हँकारा। तांते परिहैं नरक मँझारा॥
कथा पुराण औरहिं समुझै हैं। चाल बिहून आपन दुख पैहैं॥

१ पुराने ग्रन्थोंमें यह चौपाई इस प्रकार है—
सावित्री अस वचन उचारी। मानो निश्चय वचन हमारी

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 37

(161) की है। इसके उल्लेख का भावार्थ है कि '' पौहपवती ने भी साक्षी दे दी, ब्रह्मा ने पिता के शीश का दर्शन किया, मैंने अपनी आँखों देखा है। परमेश्वर कबीर जी ने अपने परम भक्त धर्मदास जी से कहा कि यह गवाही सुन कर दुर्गा व्याकुल हो गई और विचार करने लगी कि ''अलख निरंजन ने तो एसी प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूँगा। दुर्गा ने ज्योति निरंजन काल से ध्यान से कहा कि यह तीनों क्या कह रहे हैं? मुझे बताइये। अलख निरंजन ने गुप्त रूप से दुर्गा से कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। यह आकाशवाणी केवल दुर्गा ने सुनी।

तब दुर्गा देवी (अद्या) ने तीनों को शाप दिया।

ब्रह्मा को शाप :- तेरी पूजा नहीं होगी। तेरे वंशज झूठा प्रचार किया करेंगे, जिससे से वह पाप किया करेंगे। ऊपर से तो नेम-आचार किया करेंगे। बड़े शुद्ध और सच्चे-सुच्चे रहने का दिखावा किया करेंगे, अन्दर से दोष रखा करेंगे। पुराणों की कथा अन्य को सुनाया करेंगे, स्वंय उसके विपरीत गतिविधि किया करेंगे। जिस कारण से बहुत पाप करके दुख पाया करेंगे। विष्णु के भक्तों से अहंकारवश विरोध किया करेंगे।

उदाहरण :- ब्रह्मा का उपासक हिरण्कशिपु ब्राह्मण था। उसका पुत्र भक्त प्रहलाद श्री विष्णु का भक्त था। उस के साथ कैसे-कैसे जुल्म किए गए, इतिहास गवाह है। 2. भृगु ऋषि (ब्राह्मण) ने श्री विष्णु जी के सीने में लात मारी थी, इतिहास गवाह है।

(३८) 162 अनुरागसागर

उनसे और सुनैं जो ज्ञाना । करिसो भक्ति कहों परमाना॥
और देवको अंश लखैहैं । औरन निन्दि काल मुख जैहैं॥
देवन पूजा बहु विधि लैहैं । दछिना कारण गला कटै हैं॥
जा कहा शिष्य करैं पुनि जाई। परमारथ तिहि नहिं लखायी॥
परमारथके निकट न जैहैं । स्वारथ अर्थ सबै समुझैहैं ॥
आप स्वारथी ज्ञान सुनैहैं । आपनि पूजा जगत दृढ़ै हैं ॥
आप ऊंच औरहि कहँ छोटा । ब्रह्मा तोर सखा होइ खोटा ॥

कबीर वचन धर्मदासप्रति

जब माता अस कीन्ह प्रहारा। ब्रह्मा मूर्छित महीकर धारा ॥

अद्याकागायत्रीको शाप देना

गायत्री जान्यो तेहि वारा । हुए है तोर पंच भरतारा ॥
गायत्री तोर होई वृषभ भर्तारा । सांत पांच और बहुत पसारा॥
धर औतार अखज तुम खायी । कहा जानि यह दीन्ही साखी॥
निज स्वारथ तुम मिथ्या भाखी। कहा जानि यह दीन्ही साखी॥
मानि शाप गायत्री लीन्ही । सावित्रिहि तबचितवन कीन्ही॥

अद्याका सावित्री को शाप देना

पुहुपावति निजमान धरायेहु । मिथ्याकहनिजजन्मनशायेहु॥
सुनहुपुष्पावतितुम्हरोविश्वासा।नहिं पूजिहैं तुम्हसे कछु आशा॥
होय कुगंध ठौर तव बासा ।भुगतहु नरककामगहि आशा॥
जो तोहि सींच लगावे जानी । ताकर होय वंशकी हानी ॥
अब तुम जाय धरौ औतारा ।क्योडा केतकी नाम तुम्हारा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति छन्द

भये शापवश तीनों विकलमति, हीनछीन कुकर्मते॥
यह काल कलाप्रचंडकामिनि,डस्यो सब कहँ चर्मते ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 38 (162) की है। इसके उल्लेख का भावार्थ है कि '' श्री ब्रह्मा जी को अद्या (दुर्गा देवी) जी ने जो शाप दिया था उसका उल्लेख चल रहा है। परमेश्वर कबीर जी अपने भक्त धर्मदास जी को बता रहे हैं कि दुर्गा देवी ने कहा है ''ब्रह्मा के वंशज (ब्राह्मण = जो पंडिताई करते हैं) स्वार्थवश सत्य के स्थान पर असत्य का

प्रचार किया करेंगे। परमार्थ के निकट नहीं जाऐंगे। अपने को ऊँचा तथा अन्य को नीचा जानेंगे। अद्या (दुर्गा जी) जी कह रही है कि ब्रह्मा! इस प्रकार तेरे नाती खोटे (बुरे) होंगे। अपनी पूजा करा कर पाप के भागी बनेंगे। यह सुनकर ब्रह्मा जी मुर्छित हो गए।

गायत्री को शाप :- अद्या जी ने गायत्री को शाप दिया कि तू गाय की योनि में जाएगी, तेरे पाँच-सात सांड पति होंगे।

पौहपवती को शाप :- फिर अद्या जी ने पौहपवती से कहा कि तू क्योड़ा केतकी (कुसंधी) नाम के पौधे की योनि में जाएगी। तू कुगंध (गंदगी) वाले स्थान पर उगा करेगी। तेरे को पूजा में प्रयोग नहीं किया जाएगा। कबीर परमेश्वर जी ने धर्मदास जी से कहा कि यह सब काल की चाल है। कामिनी = स्त्री (दुर्गा) के माध्यम से सर्व जगत को पीड़ित किया जा रहा है।

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 39 (163) की है जो कि इसी पुस्तक के पृष्ठ 105 पर है। कबीर जी बता रहे हैं कि काल-जाल से ब्रह्मादि (ब्रह्मा-विष्णु-महेश) तथा सनकादि (सनक-सनन्दन, सन्त, कुमार) तथा नारद तक भी नहीं बचे हैं। जिनके पास सत्य शब्द (सत्य नाम) है। केवल वे ही काल-जाल से बच सकते हैं। उनके निकट काल का प्रभाव नहीं जा सकता। तीनों को शाप देने के पश्चात् दुर्गा जी को बहुत पश्चाताप हुआ।

निरंजन काल का अद्या (दुर्गा) को शाप :- निरंजन काल ने कहा कि भवानी! आपने इन को शाप देकर अच्छा नहीं किया। जो बलवान होकर निर्बल को सताता है, उसका बदला मुझसे पाएगा। सुन! द्वापर युग में तेरे पाँच भरतार (पति) (द्रोपदी ही दुर्गा का अवतार थी) होंगे। शाप प्राप्त करके भवानी ने कहा कि निरंजन! मैं तेरे वश हूँ, कुछ भी कर।

विष्णु जी का काला रंग कैसे हुआ? :- विष्णु जी ने माता को बताया कि जब मैं पिता की खोज में पाताल लोक में गया तो शेष नाग ने मेरे ऊपर एक हजार फनों से विष का फुंकारा मारा जैसे स्प्रे करते हैं। ऐसे मेरे शरीर पर विष के प्रभाव से यह काला हो गया। मैंने शेष नाग को मारना चाहा तो उसी समय आकाशवाणी हुई कि इस नाग को अब कुछ मत कह। जब द्वापर युग आएगा तब तुम इसका बदला लेना।

ब्रह्मादि शिवसनकादिनारदको उन बचि भागहो ॥
सुनुधरमनिविरलाबच शब्द सतसो लागि हो ॥२८॥
सो-०सत्य शब्द परताप, कालकला व्यापै नहीं ॥
निकट न आवै पाप,मनवच कर्म जो पदगहे॥२९॥

शाप देदेने पर अद्याका पश्चाताप और निरंजनके डरसे डरना । छन्द

शाप तीनोंको दैलियो मन माहीं तब पछतावई ॥
कस करहि मोहि निरंजनापल छमा मोहि नआवई॥

निरंजनका अद्याको शाप देना

आकाशबानी तबै भयी यह्न काह कीन भवानिया॥
उत्पत्तिकारणतोहिपठाई कहा चरित यह ठानिया॥
सो०-नीचहि ऊच सिताय, बदल मोहि सोपावई॥
द्वापर युग जब आय तुमहिं पञ्च भर्तार हो ॥३०॥

अद्याका निडर होना । कबीर वचन धर्मदासप्रति

शाप ओयल जब सुनेउ भवानी। मनसन गुने कहा नहिं बानी॥
ओयल प्रभाव शाप हम पाया। अब कहा करब निरंजनराया॥
तोरे वस परी हम आई। जस चाहौ तस करौ मिताई॥

विष्णुका गौरसे श्याम होने का कारण अद्यावचन विष्णुप्रति

पुनि कहि माता विष्णु दुलारा। सुनहु पुत्र इक वचन हमारा ॥
सत्य सत्य तुम कहो बुझाई । पितुपद परसन जब गै भाई॥
प्रथमहु तो तुम गौर शरीरा ।कारण कौन श्याम भये धीरा॥

विष्णुवचन अद्या प्रति

आज्ञा पाय हम तत्काला ।पितुपद परसन चले पताला॥
अक्षत पुहुप लीन्ह करमाहां । चले पताल पंथ मग जाहां ॥
पहुँचि शेष नाग पहँ गयऊ । विषके तेज हम अलसयऊ ॥

(४०) 164 अनुरागसागर

भयो श्याम विषतेज समावा । भइ अवाज अस वचन सुनावा॥
अहो विष्णु माता पहँ जाई । वचन सत्य कहियो समुझाई॥
सतयुग त्रेता जैसे जबही । द्वापर है चौथा पद तबही ॥
तब तुम होहु कृष्ण अवतारा । लैहौ ओयलसो कही विचारा॥
नाथ हु नाग कलिन्दी जाई । अब तुम जाहु विलंब न लाई॥
ऊंच होइके नीच सतावे । ताकर ओयल मोहिसो पावे॥
जो जिव देई पीर पुनि काहू । हम पुनि ओयल दिखावै ताहू॥
पहुँचे हम तब ही तुव पासा । कीन्हेउ सत्य बचन परकाशा॥
भेटउ नाहिं मोहिं पद ताता । विषज्वाला साँवल भो गाता॥
व्याकुल भयो तबै फिर आयो। पितु पद दर्शन मैं नहिं पायो॥

अद्याका विष्णुको ज्योतिका दर्शन कराना

इतना सुनि हर्षित भइ माई । लीन्ह विष्णु कहँ गोद उठाई॥
पुनि अस कहेउ आदि भवानी। अब सुनहु पुत्रप्रियममबानी॥
देख पुत्र तोहि पिता भिटावों। तोरे मन कर धोख मिटावों॥
प्रथमहि ज्ञान दृष्टिसों देखो । मोर वचन निज हृदय परेखो॥
मनस्वरूप करता कहँ जानो। मनते दूजा और न मानो ॥
स्वर्ग पताल दौर मन केरा । मन अस्थिर मन अहै अनेरा॥
क्षणमहँ कला अनन्त दिखावे। मनकहँ देख कोइ नहि पावे ॥
निराकार मनहीको कहिये । मनकीआशादिवसनिशिरहिये
देखहु पलटि शून्यमह जोती । जहवां झिलमिलझालर होती॥
फेरहु श्वास गगन कह धायो । मार्ग अकाशहि ध्यान लगायो॥
जैसे माता कहि समुझावा । तैसे विष्णु ध्यान मन लावा॥

छन्द

पेठि गुंफा ध्यान कीन्हो श्वास संयम लायके ॥
पवन धूँका दियो जबते गगन गरज्यो आयके ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 40 (164) की है। भावार्थ है :- जब विष्णु जी शेष नाग के लोक में गया तो उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का शरीर काला हो गया। विष्णु ने माता को बताया कि जब शेष नाग ने मेरे ऊपर विष का फुंकारा मारा, मेरा शरीर काला हो गया है। (नोट :- यहाँ पर कुछ पंक्तियाँ छूट गई हैं जिनका भावार्थ है ) तब विष्णु ने सोचा कि इस नाग को मार दूँ, इसने यह क्या कर दिया? तब काल (ब्रह्म) की आकाशवाणी हुई कि हे विष्णु! तुम अपनी माता के पास जाकर सत्य-सत्य बताना कि मुझे पिता का दर्शन नहीं हुआ और इस नाग के इस कर्म का बदला द्वापर युग में लेना जब तुम कृष्ण अवतार धार कर आओगे। माता जी से विष्णु

ने कहा कि यह आकाशवाणी सुन कर मैं आपके पास आ गया। इस बात से प्रसन्न होकर दुर्गा ने विष्णु जी को गोद में बैठाया तथा उल्टा पाठ पढ़ाया और कहा हे विष्णु पुत्र! मैं तुझे तेरे पिता के दर्शन कराती हूँ। तेरे मन की शंका समाप्त करती हूँ। मन को ही कर्ता मानों। मन को ही निराकार कहते हैं जो शरीर में ध्यान से ज्योति दिखाई देती है, यही उसका स्वरूप है। ध्यान लगाकर देखा जा सकता है। तब विष्णु जी ने माता दुर्गा जी के बताए अनुसार गुफा में बैठ कर ध्यान लगाया। तब काल ने भयंकर गर्जना की।

अनुरागसागर 165 (४१)

बाजासुनततबमगनभापुनिकीन्हमनकसख्यालहो ॥
शून्यस्वेतपीतसब्जलालदियायरंगजगालहो ॥३०॥
सो०–ताहपीछे धर्मदास, मनपनि आपदिखायऊ ॥
कीन्ह ज्योति परकास,देखि विष्णु हर्षित भये३०॥
मातहि नायो शीश, बहु अधीन पुनि विष्णुभा ॥
मैं देखा जगदीश, हे जननी परसाद तुव ॥ ३१ ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास गहि टेके पाया । हे साहिबइकसंशय आया ॥
कन्या मनको ध्यान बतावा । सो यह सकल जीव भरमावा॥

सद्गुरु वचन

धर्मदास यह काल स्वभाऊ । पुरुष भेद विष्णू नहिं पाऊ॥
कामिनिकी यह देखहु बाजी । अमृतगोय दियो विषसाजी॥
जात काल दूजा जनिजानहु ।निरखि धर्म सत्यहिं पुरआनहु॥
प्रगट सु तोहिं कहो समुझाई । धर्मदास परखहु चितलाई ॥
जब परगट तस गुप्त सुभाऊ। जोरह हृदय सो बाहर आऊ॥
जब दीपक बारे नर लोई । देखहु ज्योति सुभाव विलोई॥
देखत ज्योति पतंग हुलासा । प्रीति जान आवै तिहिपासा॥
परसत होवे भसम पतंगा । अनजाने जरि परहि मतंगा ॥
ज्योतिस्वरूपकाल अस आही। कठिनकाल यह छांडत नाहीं
कोटि विष्णु औतारहि खाया। ब्रह्मा रुद्रहि खाय नचाया ॥
कौन विपति जीवनकी कहऊँ। परखि वचन निज सहजहि रहऊँ
लाख जीव वह नित्यहि खाई। असविकरालसोकालकसाई ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कह सुनहुँ गुसाई । मोरे चित्त संशय असआई ॥
अष्टंगीहि पुरुष उत्पानी । जिहिविधि उपजी सो मैं जानी॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 41

(165) की है। भावार्थ :- विष्णु जी ने समाधि दशा में जो आवाज सुनी थी। उस में मस्त हो गया। फिर ज्योति तथा कई प्रकार को प्रकाश देखकर संतुष्ट हो गया और माता का धन्यवाद किया कि आपने मुझको परमात्मा के दर्शन करा दिये।

परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को बताया कि हे धर्मदास! अद्या ने सर्व को मन का ध्यान लगाने को कहा है। इसलिए कालवश होकर जीवों को भटका रही है। जिस कारण से सर्व ऋषि-मुनि-साधक इसी ज्योति के दर्शन के लिए प्रेरित होकर काल के मुख में पड़ जाते हैं और काल कसाई किसी को नहीं छोड़ता। करोड़ों विष्णु, ब्रह्मा तथा शिव को भी खा लिया है। जैसे पतंग दीपक की ज्योति को सुखदाई मान कर उस से प्रेम करने के लिए लिपट जाते हैं और तुरंत ही झुलस जाते हैं। मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार काल ब्रह्म के साधकों की दशा जानों। सर्व साधक काल को परमात्मा जान कर प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। अन्त में यह खा जाता है। यह सुनकर धर्मदास जी ने शंका व्यक्त की कि हे परमेश्वर! अष्टंगी को परमात्मा ने उत्पन्न किया जैसे यह उत्पन्न हुई, वह मैं आप से जाना हूँ।

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 42 (166) की है जो कि इसी पुस्तक के पृष्ठ 109 पर है। भावार्थ :- धर्मदास जी पूछ रहे हैं कि अष्टंगी (दुर्गा) को काल ने खा लिया था। परमेश्वर की कृपया से यह बाहर आई। फिर भी अष्टंगी ने यह कपट किया कि परमेश्वर को तो गुप्त कर दिया और काल को परमात्मा रूप में प्रकट कर दिया। परमात्मा का भेद अद्या ने अपने पुत्रों (सुतन्) को नहीं बताया। काल निरंजन का ही ध्यान कराया।

हे प्रभु! अष्टंगी ने यह क्या किया ''तजा पुरूष भई काल की संगी'' परमेश्वर को छोड़ कर काल की साथी हो गई। परमेश्वर कबीर जी ने उत्तर दिया। (नोट :- कुछ पंक्तियाँ मूल पाठ से छूटी हैं) :-

हे धर्मदास! सुनो अष्टंगी अब काल के भय से उसके आदेशानुसार सर्व कार्य करती है। इसलिए यह विवश होकर ऐसा कर रही है। इसी कारण से यह प्रभाव सर्व नारी जाति में हो गया है। उदाहरण देते हुए परमेश्वर कबीर जी ने बताया कि जैसे लड़की को माता-पिता कितने प्यार से पालता है। विवाह के पश्चात् वह अपने पति को अधिक महत्व देती है। चाहती है कि घर से जो मिल जाए अपने पति के घर में ले चलूं। (जैसे कुछ लड़के-लड़कियां प्यार की लीला करते हैं। वे उस समय माता-पिता की कोई प्रवाह नहीं करते, बस एक-दूसरे

को पाने के लिए माता-पिता पर कोर्ट में मुकदमा भी कर देते हैं। ऐसे बच्चों में काल का अधिक प्रभाव होता है, धिक्कार है ऐसी संतान को) आगे परमेश्वर ने बताया कि हे धर्मदास! दुर्गा ने विष्णु से प्रसन्न होकर कहा कि तेरी सब पूजा किया करेंगे।, सब देवताओं में तू श्रेष्ठ होगा। तेरी इच्छा जो भी होगी, मैं पूरी करूँगी। फिर दुर्गा माता शिव के पास गई।

(४२) 166 अनुरागसागर

पुनि वहि ग्रास लीन्ह धमराई। पुरुष प्रताप सु बाहर आई॥
सो अष्टंगीहि असछल कीन्हा। गोइसि पुरुष प्रगटयम कीन्हा॥
पुरुष भेद नहिं सुनन बतावा। कालनिरञ्जन ध्यान करावा॥
यह कस चरित कीन्ह अष्टंगी। ताजा पुरुष भइकाल किसंगी॥

सद्गुरु वचन

धर्म सुनहु जन नारि सुभाऊ। अब तुहि प्रगटवरणिसमझाऊ॥
होय पुत्री जेहि घर माहीं। अनेक जतन परितोषै ताहीं॥
वस्त्र भक्ष सुख सेज निवासा। घरबाहर सब तिहि विश्वासा॥
यज्ञ कराय देय पितु माता। बिदाकीन्हहितप्रीतिसों ताता॥
गयी सुता जब स्वामी गेहा। रात्या तासु संग गुण नेहा॥
माता पिता सबै बिसरावा। धर्मदास अस नारि स्वभावा॥
ताते अद्या भई बिगानी। काल अंग ह्वै रही भवानी॥
ताते पुरुष प्रगटने लायी। कालरूप विष्णुहि दिखलायी॥

धर्मदासवचन कबीर प्रति

हे साहब यह जान्यो भेदा। अब आगेका करहु उछेदा॥

कबीर वचन धर्मदास प्रति

पुनि माता कहि विष्णु दुलारा। मरद्यो मान जेठ निजबारा॥
अहो विष्णु तुम लेहु अशीशा। सब देवनमें तुमहीं ईशा॥
जो इच्छा तुम चितमें धरिहौं। सो तब तोर काज मैं करिहौं॥

मायाका विष्णुको सर्वप्रधान बनाना

प्रथम पुत्रब्रह्म दुरि गयऊ। अकरमझूठिताहि प्रिय भयऊ॥
देवन श्रेष्ठ तुमहिं कहँ मातहिं। तुम्हारी पूजा सब कोई ठानहिं॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

कृपा वचन अस मातै भाखा। सबते श्रेष्ठ विणुकह राखा॥
माता गयी रुद्रके पासा। देख रुद्र अति भये हुलासा॥

अनुरागसागर 167 (४३)

अद्याका महेशको बरदान देना

पुनि लहुरा कहँ पूछे माता । तुम शिव कहो हृदयकी बाता॥
माँगहु जो तुम्हरे चित भावे । सो तोहि देऊ माता फुरमावे॥
दोउ पुत्रन कहँ मात दृढावा । माँग महेश जो मनभावा॥

महेशवचन

जोरि पानि शिवकहवे लीन्हा। देहु जननि जो आज्ञा कीन्हा॥
कबहिं न विनसे मेरी देही । हे माता मागों वर एही॥
हे जननी यह कीजै दाया । कबहु न विनशै मेरी काया॥

अद्यावचन

कह अष्टंगी अस नहीं होई । दूसरा अमर भयो नहिं कोई॥
करहु योग तप पवन सनेहा । रहै चार युग तुम्हरी देहा॥
जौलौं पृथ्वी अकाश सनेही । कबहु न बिनशै तुम्हरी देही॥

धर्मदासवचन

धर्मदास विनती चित्त लाई । ज्ञानि मोहि कहो समुझाई॥
यह तो सकल भेद हम पायी । अब ब्रह्माको कहो उथायी॥
अद्या शाप ताहि कहँ दीन्हा । तेहि पीछे ब्रह्मा कस कीन्हा॥

कबीर वचन

विष्णु महेश जबै वर पाये । भये आनन्द अतिहि हरषाये॥
दोनों जने हरख मन कीन्हा । ब्रह्मा भयो मान मद हीना॥
धर्मदास मैं सब कुछ जानों । भिन्न भिन्न कर प्रगट बखानों॥

शाप पानेके कारण दुःखित हो ब्रह्मा विष्णुके पास जाकर
अपना दुःख कहना और विष्णुका उसे आश्वासन देना

ब्रह्मा मनमें भयो उदासा । तब चलि गयो विष्णुके पासा॥

ब्रह्मावचन विष्णुप्रति

जाय विष्णुसे बिन्ती ठाना । तुम हो बंधु देव परधाना॥
तुम पर माता भई दयाला । शाप विवश तुम भये बिहाला॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 43 (167) की है। भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी बता रहे हैं कि :-इसके पश्चात् अष्टंगी देवी अपने छोटे पुत्र शिव के पास गई और पूछा कि माँगो जो तेरे मन की इच्छा हो। महेश ने मांगा कि हे माता! मुझे अमर कर दो, मैं कभी ना मरूँ। अष्टंगी ने कहा कि पुत्र! यह मेरे वश से बाहर है। अमर तो केवल एक परमेश्वर है दूसरा अमर नहीं हो सकता। (नोट :- इसमें कुछ साखियों को बदल रखा है) वास्तविकता यह है कि :- दुर्गा देवी जी ने शिव से कहा कि आप स्वांश कम लेना योग अभ्यास अधिक करना जिस से तेरी आयु सब से अधिक

**हो जाएगी।** (जब सप्त ब्रह्मा नशाई, तब एक विष्णु मराई। जब सप्त विष्णु की विनशे काया, तब तक शिव तुम नहीं नशाया।।) **धर्मदास जी ने पूछा हे परमेश्वर! जब ब्रह्मा को दुर्गा जी ने शाप दे दिया उस के पश्चात् ब्रह्मा जी ने क्या किया? कबीर परमेश्वर जी ने उत्तर दिया कि :- ब्रह्म फिर विष्णु के पास गया तथा अपना दुःख बताया कि आप पर तो माता दयालु हो गई और मेरा शाप से बेहाल है।**

(४४) 168 अनुरागसागर

निज करनी बल पायेहो भाई। किहि विधि दोष लगाऊँ माई॥
अब अस जतन करो हो भ्राता। चले परिवारे वचन रहै माता॥

विष्णुवचन

कहे विष्णु छोड़ो मन भंगा। मैं करिहौं सेवकाई संगा॥
तुम जेठे हम लहुरे भाई। चित संशय सब देहु बहाई॥
जो कोइ होवे भक्त हमारा। सो सेवै तुम्हारो परिवारा॥

छन्द

जगमाहि एस दिढाई हौं फलपुन्य आशा जोयहो॥
यज्ञ धर्म रु करे पूजा द्विज बिना नहिं होय हो॥
जो करे सेवा द्विजनकी तेहि महापुण्य प्रभावहो॥
सो जीवमोकहँअधिकप्यारेराखिहौं निजठाँवहो३१

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सो०–ब्रह्मा भये अनंद, जबहि विष्णु असभाषेऊ॥
मेटेउ चितकर द्वंद्व, सखा मोर सब सुखीभौ॥३२॥

कालप्रपंच

देखहु धर्मनि काल पसारा। इन ठग ठग्यो सकल संसारा॥
आशा दै जीवन बिलपावे। जन्म जन्म पुनि ताहि सतावै॥
बलि हरिचंद बेनु बइरोचन। कुंती सुत औरौ महिसोचन॥
ये सब त्यागी दानि नरेशा। इन कहँ ले राखे केहि देशा॥
जस गंजत इन सबकी कीन्हा। सो जग जानेकाल अधीना॥
जानत है जग होय न शुद्धी। कालअमरबलसबकीहरबुद्धी॥
मन तरंगमें जीव भुलाना। निजघर उलटिनचीन्ह अजाना॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कह सुनो गुसांई। तबकी कथा मोहि समुझाई॥
तुम प्रसाद जमको छल चीन्हा। निश्चय तुम्हरे पदचित दीन्हा॥

**★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 44 (168) की है। भावार्थ :- ब्रह्मा जी अपने भाई विष्णु से बता रहे हैं कि मैंने गलती**

की, उसका फल पाया है। (शुद्ध वाणी = जैसा किया फल पाया भाई, किहि विधि दोष लगाऊँ माई) माता को कैसे दोष लगाऊँ? अब कुछ ऐसा उपाय करो मेरे भाई कि मेरा परिवार (वंशजों) का गुजारा (निर्वाह) चले और माता के वचन की भी पालना हो सके। तब विष्णु जी ने कहा कि आप मेरे बड़े भाई हो, मैं आपका छोटा भाई हूँ। आप चिंता छोड़ो मैं आपकी सेवा करूँगा। जो मेरा भक्त होगा, वह आपके परिवार (ब्राह्मणों) की सेवा किया करेगा। मैं संसार में ऐसी धारणा दृढ़ कर दूँगा कह दूँगा कि जो पुण्य चाहे वह द्विज (ब्राह्मण) की पूजा करे अन्यथा उसको पुण्य नहीं होगा और जो मेरा विशेष भक्त होगा उसको मैं अपने (विष्णु) लोक में रखूंगा। विष्णु जी की यह बात सुनकर ब्रह्मा जी विशेष प्रसन्न हुए। कहा कि मेरे भाई आप ने मेरी सब चिन्ता समाप्त कर दी। परमेश्वर कबीर जी ने बताया कि हे धर्मदास! काल कितना जालिम है? राजा हरिश्चन्द्र जैसे महापुरूषों, बली राजा जैसे धर्मात्मा और बैलोचन तथा कुंती सुत करण जैसे दानवीर आदि-२ ने कैसे पुण्य किए। अब उनको स्वर्ग में रखा है। फिर चौरासी लाख योनियों के कष्ट में डालेगा। (शुद्धवाणी = जानत न जग अस होए न शुद्धि। काल अपरबल सब की हरै बुद्धि) इस काल के षड़यंत्र को कोई नहीं जानता इसलिए इनकी गति नहीं होती क्योंकि काल महाबली ने इसके अंतर्गत सर्व प्राणियों की बुद्धि हर रखी है, अपने वश कर रखी है। मन के (काल के) आधीन प्राणी इसी झूठे सुख को सुख मानकर भूल में पड़ा है। अपने निज घर (सत्यलोक) की पहचान भी भूल चुका है। यह अज्ञानी प्राणी परमेश्वर के स्थान को नहीं जानता। धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी का धन्यवाद किया और कहा हे प्रभु! आप की कृपया-प्रसाद से मैंने काल का जाल जाना है। अब मैं विश्वास के साथ आप का दास बन गया हूँ।

अनुरागसागर 169 ( ४९ )

भव बूड़त तुमसी गहि राखा। शब्द सुधारस मोसन भाखा॥
अब वह कथा कहो समुझाई। शाप अंत किया कौन उपाई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति गायत्रीके ब्रह्माको शाप देनेका वृतान्त

धर्मनि तुम सन कहों बखानी। भाषो ज्ञान अगमकी बानी॥
मातु शाप गायत्री लीन्हा। उलटि शाप पुनिमातहिं दीन्हा
हम जो पांच पुरुषकी जोई। पांचोंकी तुम माता होई॥
बिना पुरुषकी तू जिनि है बारा। सो जानही सकल संसारा॥
दुहुन् शाप फल पायो भाई। उगरह भयो देह धरि आई॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 45 (169) की है। इसमें मिलावट स्पष्ट है। इसमें कहा कि ''गायत्री'' ने माता (दुर्गा) को शाप दिया कि मैं जिन पाँच पाण्डवों की पत्नी बनूँगी तू उनकी माता बनेगी और बिना पति के बच्चा (करण की ओर संकेत है) उत्पन्न करेगी। विचार करें ''अनुराग सागर'' के पृष्ठ 38 (162) पर दुर्गा ने गायत्री को शाप दिया है। उस में कहा कि तेरे वृषभ अर्थात् बैल पाँच पति होंगे। यहाँ पर पृष्ठ 45 (169) पर गलत है। फिर पृष्ठ 39 (163) पर प्रमाण है कि ''ज्योति निरंजन ने दुर्गा को शाप दिया वाणी = द्वापर युग आय तुमहरे पाँच भरतार हों'' वहाँ पर ''द्रोपदी'' रूप में दुर्गा का जन्म लेने का प्रमाण है। यहाँ पर गलत कहा है कि गायत्री ही द्रोपदी के रूप में जन्मी थी और उसने दुर्गा को कुंती के रूप में जन्मने का शाप दिया। यह गलत है।

प्रिय पाठको आप जी ने कबीर सागर की फोटोकापियाँ देखीं-पढ़ी। उन्हीं के आधार से पूर्व वाली सृष्टि रचना ''ज्ञान गंगा'' तथा ''गहरी नजर गीता में'' नामक पुस्तकों में लिखी थी जो संक्षिप्त में लिखी थी जो निम्न है।

## "ब्रह्मा का अपने पिता(काल) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

जब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निंरजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। यह सुनकर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की ओर चल दिया। जहां अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि दुर्गा सृष्टि रचना क्यों नहीं की। भवानी ने कहा आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्द करके आप की तलाश में गया है। ब्रह्म(काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। ब्रह्मा के बिना सब कार्य असम्भव है। तब दुर्गा(प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए था उसे कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोला तू कौन पापिन है जिसने मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री ने कहा की मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती।

ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा ने पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखो से देखा है तो मैं आपके साथ चलूं। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साखि (गवाही) भरूँ। तब ब्रह्मा ने सोचा कि पिता के दर्शन हुए नहीं वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी अन्य विकल्प न देख गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की पुहपवति नाम की उत्पन्न की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ। हाँ यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकृति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहां महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – ''दास गरीब यह चूक धुरों धुर'')

## "माता दुर्गा द्वारा ब्रह्मा को शाप देना"

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? तब तीनों ने कहा कि हाँ हमने अपनी आँखों से देखा है। भवानी (प्रकृति) को संशय हुआ कि मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निंरजन जी ने कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए। यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं प्रतिज्ञा करके पिता की खोज करने गया था। परन्तु पिता ब्रह्म के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

ब्रह्मा को शाप : -- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे

**बहुत पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठगेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, स्वयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाईयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाके, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठायेंगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मूर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।**

**गायत्री को शाप : -- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मृतलोक में गाय बनेगी।**

**पुहपवति को शाप : -- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा।** {हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।}

**इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई।** {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरूष अंश) के प्रभाव से उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता–पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल–निरंजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।}
**यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल/ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सत्ताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निरंजन (ब्रह्म/काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (ज्योति निरंजन) आपको शाप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही दुर्गा का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निरंजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।**

## ”विष्णु का अपने पिता ब्रह्म की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना“

**इसके बाद विष्णु से प्रकृति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी ब्रह्म का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शेषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रवेश किया देख कर क्रोधित हो कर विष भरा फूंकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला हो गया, जैसे स्प्रे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को सजा देनी चाहिए। ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि विष्णु को शांत करना चाहिए तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोद्ध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कृष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्द्री नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।**

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।
जो जीव देवे पीर पुनी काँहु, हम पुनि ओएल दिवावें ताहूँ।।

**तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता प्रकृति बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से आपको तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय समाप्त करती हूँ।**

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।
मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।
स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।
निंरकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।
देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती।।

**इस प्रकार अष्टंगी (प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब अष्टंगी (प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जगत् में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों के प्राणियों**

की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जगत् में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाईयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। जबकि सर्व शास्त्रों में परमात्मा साकार-मानव सदृश शरीर युक्त लिखा है। इसके बाद आदि भवानी, रूद्र (महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी! यदि मेरे दोनों बड़े भाईयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर तो प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि है (इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)।

## ''श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का विवाह''

ज्योति निरंजन के आदेशानुसार दुर्गा ने अपने वचन से तीन युवती उत्पन्न की तथा उनको समुद्र में छुपा दिया। फिर तीनों पुत्रों को सागर मन्थन के लिए भेजा और कहा कि जो-२ वस्तु प्राप्त हो उनकी अच्छी तरह पहचान करके भिन्न-भिन्न लाना है। सागर मन्थन किया उससे बारी-बारी तीन युवा लड़कियाँ निकली। तीनों को लेकर आए और माता से बताया कि पहले, दूसरे तथा तीसरे कौन-सी निकली थी। तब दुर्गा जी ने उन लड़कियों का नाम रखा। प्रथम का सावित्री नाम रखा, उसका विवाह श्री ब्रह्मा जी से कर दिया। दूसरी का नाम लक्ष्मी रखा और उसका विवाह श्री विष्णु जी से कर दिया। तीसरी का नाम उमा रखा और उसका विवाह श्री शिव जी से कर दिया। दुर्गा ने कहा कि ये तुम्हारी पत्नियाँ हैं। जाओ अपना घर बसाओ। इस प्रकार काल के लोक में जीवों की उत्पत्ति हुई। सुर तथा असुर उत्पन्न हुए। इसके पश्चात् दुर्गा देवी ने तीनों पुत्रों को विभाग बांट दिए : --

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चौले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया।

भगवान विष्णु जी को इन जीवों में मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग प्रदान किया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया।

क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

उपरोक्त विवरण एक ब्रह्मण्ड का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (अर्थात् काल भगवान) के इक्कीस ब्रह्मण्ड हैं।

परन्तु क्षर पुरूष (काल) स्वयं व्यक्त नहीं होता अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। परन्तु नहीं समझ सके क्योंकि सबकी बुद्धि काल वश है। वेदों में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 दो बार में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूर् असि'। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर परमेश्वर पूर्ण विद्वान् है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम्) का है, (शुक्रम् अकायम्) वीर्य से बनी पाँच तत्व से बनी भौतिक काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्यः अर्थान्) वास्तव में (शाश्वतिभः) अविनाशी है। अधिक जानकारी के लिए ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 96 मन्त्र 17 से 20 तक, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 54 मन्त्र 3, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 20 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 94 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 95 मन्त्र 2, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 67 मन्त्र 26, ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 1 मन्त्र 8-9 में विशेष प्रमाण है कि

**परमात्मा साकार है तथा उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् जीव जिस भी योनी में जाता है। जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की साकार स्थिति को समझें। वेदों में ओ३म् नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३म् नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का जान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधी लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रूपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल) ने प्रतिज्ञा की है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त कहा करेंगे** (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त अर्थात् परोक्ष कहते हैं।)**। (प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 47, 48 तथा 32)**

**पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३म् नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (अध्याय 11 श्लोक 32 से 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि**

मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। क्योंकि मैं अपनी योग माया अर्थात् सिद्धी शक्ति से छिपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 का श्लोक 24-25) विचार करें :- अपने छूपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

क्योंकि जो पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 हजार प्रतिदिन जो अधिक उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की व्यवस्था की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता को खाए तो सर्व को काल ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) स्वयं आऐं या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाएं। इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है।

प्रत्येक ब्रह्मण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करा रखी है। एक ब्रह्मण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभाले हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। **इसी ब्रह्मण्ड** {इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्मण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्मण्ड की रचना कमलों में टी.वी. की तरह देखी जाती है।} **में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण**

**परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है। जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे आत्माऐं रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस समय इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डारे से सर्व सुविधाऐं उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है। क्योंकि इस काल ब्रह्म का लोक (ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड) तथा परब्रह्म लोक (परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड) में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है।**

**क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्मण्डों को चार महाब्रह्मण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्मण्ड में पाँच ब्रह्मण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्मण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड की रचना एक महाब्रह्मण्ड जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है।** {प्रत्येक युग में अपने संदेश वाहक (नकली सतगुरु) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाईयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं।} **सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे जैसी** (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट जैसी होती है) **स्वयं गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंद निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हा-हाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त बेहोश हो जाते**

हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म - मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।

## "परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों की स्थापना"

*(नोट :– आप जी ने "कबीर सागर" के अध्याय "कबीर बानी" के पृष्ठ 137 (1001) पर पढ़ा है कि परमेश्वर कबीर जी ने कहा था कि वाणी = "तेतीस अरब ज्ञान हम भाखा, मूल ज्ञान हम गुप्त ही राखा" यह निम्न विवरण कबीर सागर में नहीं है। यह मूल ज्ञान सन्त रामपाल दास जी महाराज को परमेश्वर कबीर जी ने बताया है। इसी प्रकार सृष्टि रचना में जो कबीर सागर से हट कर ज्ञान है वह मूल ज्ञान का अंश है।) कृपया पढ़ें निम्न शेष सृष्टि रचना।)*

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में सतर्कता नहीं की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंनें अर्थात् कबीर साहेब) ने उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण इसे भी यह सतलोक में रहने योग्य नहीं रहा। अन्य कारण :- अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की वियोग में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत आनन्द मना रहा होगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माऐं जो परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्मण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन आत्माओं की वियोग की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इक्कीस ब्रह्मण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविर्देव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सहज ध्यान प्रारम्भ

कर दिया। इसी प्रकार अन्य आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माऐं गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाऐंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु सहज समाधी का अभ्यास केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माऐं उसके वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान मांगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविर्देव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वइच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु के पूछने पर कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकृति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकृति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।) कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्मण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्व्यवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वइच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्रीइन्द्री (योनी) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्मण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मृत्यु कर्माधार पर कर्म फल तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्मण्ड उसके सहज समाधी के अभ्यास की इच्छा रूपी भक्ति की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किया तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्मण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख ब्रह्मण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों का भी प्रभु

**(मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है।**

**श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएँ तथा 16 कलाऐं हैं तथा प्रकृति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाऐं हैं तथा 64 कला हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाऐं हैं तथा एक हजार कला है तथा इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की दस हजार भुजाऐं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। {परब्रह्म की दस हजार कला हैं का प्रमाण :-** श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश अध्याय 9 श्लोक 53 (पृष्ठ 32) में है "यस्य अयुतांश अयुतांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता। पर ब्रह्मस्वरूपम् यत् प्रणमाम् अस्तम् अव्ययम् (53) हिन्दी अनुवाद :- जिसके अयुतांश (दस हजारवें अंश) के अयुतांश में अर्थात् दस हजार वें अंश के दस हजार वें अंश में यह विश्व रचना की शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अव्यक्त को हम प्रणाम करते हैं। (53) इस प्रमाण से सिद्ध हुआ कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष की दस हजार कलांऐं हैं जो स्वसम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के प्रमाण का समर्थन है। क्योंकि यह तत्व ज्ञान परमेश्वर कबीर जी ने प्रथम सत्ययुग में ऋषि सत्य सुकृत नाम से प्रकट होकर श्री ब्रह्मा जी को सुनाया था। इसलिए श्री ब्रह्मा जी ने कुछ ज्ञान उस तत्वज्ञान से तथा शेष अपना अनुभव के ज्ञान का मिश्रण करके पुराण ज्ञान कहा है।} **पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाऐं तथा असंख्य कलाऐं हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड व परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों सहित असंख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाऐं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा इस परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्मण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक घूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी.वी. पर बाहर का सर्व दृश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए। उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।**

**इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए है तथा प्रत्येक ब्रह्मण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं। जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए है।**

## ''वेदों में सृष्टि रचना का प्रमाण''

## "पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :–

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्त्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः।।1।।

संधिछेद :– ब्रह्म जज्ञानम् प्रथमम् पुरस्त्तात् विसिमतः सुरुचः वेनः आवः सः बुध्न्याः उपमा अस्य विष्ठाः सतः च योनिम् असतः च वि वः। (1)

अनुवाद :– (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (जज्ञानम्) प्रकट होकर अपनी सूझ–बूझ से (पुरस्त्तात्) सर्व प्रथम समय में शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वइच्छा से बड़े चाव से स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को उस (वेनः) रचनहार ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है इसलिए उसी मूल मालिक ने मूल स्थान सतलोक की रचना की है इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक को रच कर (अस्य) इस सतलोक के (उपमा) उपमा के सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई अर्थात् नाशवान लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

**भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म(काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय(अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को भिन्न-2 सीमा युक्त स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्मण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।**

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :–

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः।
तस्मा एतं सुरुचं ह्वारमह्यं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे।।2।।

संधिछेद :– इयम् पित्र्या राष्ट्रि एतु अग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः तस्मा एतम् सुरुचम् हवारमह्यम धर्मम् श्रीणान्तु प्रथमाय धास्यवे (2)

अनुवाद :– (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर से (एतु) इस (अग्रे) सर्वोतम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, उत्पन्न हुई जिस को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वइच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) सर्व प्रथम उत्पन्न की गई माया अर्थात् पराशक्ति के द्वारा (ह्वारमह्यम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकषर्ण शक्ति के (श्रीणान्तु) गुरूत्व आकर्षण को पूर्ण परमात्मा ने आदेश दिया कि सृष्टि समय तक बना रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव अर्थात् गुरूत्व आकर्षण से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

**भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्मण्डों को स्थापित किया है।**

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :–

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।
ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।

संधिछेद :– प्र यः जज्ञे विद्वानस्य बन्धुः विश्वा देवानाम् जनिमा विवक्ति ब्रह्मः ब्रह्मणः उज्जभार मध्यात् निचैः उच्चैः स्वधा अभिः प्रतस्थौ। (3)

अनुवाद :– (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्मण्डों की (जज्ञे) उत्पत्ति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी (जनिमा) पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को अपने द्वारा सृजन किए हुए सर्व ब्रह्मण्डों तथा सर्व देवों अर्थात् आत्माओं के विषय में (विवक्ति) स्वयं ही ठीक–ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म/क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्मण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः प्रतस्थौ) आकर्षण शक्ति से दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

**भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता**

**है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म(क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्मण्डों (ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्मण्डों) को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।**

**जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।**

**इस अथर्ववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 3 में स्पष्ट है कि ब्रह्म की उत्पत्ति पूर्ण ब्रह्म से हुई है। यही प्रमाण आगे लिखे ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 5 में है तथा यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 14-15 में है कि अविनाशी परमात्मा से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई है।**

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

स: हि दिवः स पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत्।
महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां स**द्म** पार्थिवं च रजः।।4।।

संधिछेद :– सः हि दिवः सः पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमम् रोदसी अकस्भायत् महान् मही अस्कभायद विजातः धाम् सदम् पार्थिवम् च रजः। (4)

अनुवाद – (सः) वह वही परमात्मा है जिसने (हि) निःसंदेह ही (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक अगम लोक तथा अनामी/अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अविनाशी रूप से स्थिर किया है (सः) वह परमात्मा सर्व रचना करता है उसी ने उन्हीं के समान (मही) पृथ्वी वाले नीचे के सर्व लोक जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इक्कीस ब्रह्मण्ड (पृथिव्या) पृथ्वी तत्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत्) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्व तथा पृथ्वी तत्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को उसी {**जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म/अक्षर पुरूष के सप्त संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरुष के इक्कीस ब्रह्मण्डों को पृथ्वी तत्व से अस्थाई रचा**} (महान्) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पृथ्वी वाले (वि) भिन्न–भिन्न (धाम्) लोक (च) और (सदम्)

आवास स्थान (मही) पृथ्वी तत्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्मण्ड में छोटे–छोटे लोकों की (जातः) उसी परमात्मा ने रचना की तथा (अस्कभायत्) स्थिर किया।

**भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक, यह तो अजर-अमर स्थाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अस्थाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर अस्थाई स्थापित किए।**

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

स बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोऽभ्यग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सम्राट्।
अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः।।5।।

संधिछेद :– सः बुध्न्यात् आष्ट्र जनुषेः अभि अग्रम् बृहस्पतिः देवता तस्य सम्राट अहः यत् शुक्रम् ज्योतिषः जनिष्ट अथ द्युमन्तः वि वसन्तु विप्राः। (5)

अनुवाद :– (सः) वह (बुध्न्यात्) मूल मालिक है जिस से (अभि–अग्रम्) सर्व प्रथम वाले सतलोक स्थान पर (आष्ट्र) अष्टँगी माया/दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी (जनुषेः) उत्पन्न हुई क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों का प्रथम स्थान सतलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सम्राट) राजाधिराज (बृहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके पश्चात् (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) ब्राह्मण अर्थात् भक्त आत्माएं (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वि) भिन्न–2 (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

**भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम अर्थात् सत्यलोक में आष्ट्रा अर्थात् अष्टंगी(प्रकृति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर(सतपुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन(काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्ट्रा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पृथ्वी लोक पर निवास करने लगे।**

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्व्यस्य धाम।

एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु।।6।।

संधिछेद :– नूनम् तत् अस्य काव्यः महः देवस्य पूर्व्यस्य धाम हिनोति पूर्वे विषिते एष जज्ञे बहुभिः साकम् इत्था अर्धे ससन् नु। (6)

अनुवाद – (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्व्यस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है (पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) सृष्टि उत्पत्ति के ज्ञान से यर्थाथता को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची लगन से स्तुति करता है।

**भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर स्वयं जगत गुरु अर्थात् तत्वदर्शी सन्त के रूप में प्रकट होकर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आऐ थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मस्ती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।**

**आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तथा सत्य लोक दिखाकर वापस छोड़ा था। तब अपनी अमृतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने कहा:-**

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन। झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान।।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।

त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

संधिछेद :– यः अथर्वाणम् पित्तरम देवबन्धुम बृहस्पतिम नमसा अव च गच्छात त्वम विश्वेषाम् जनिता यथा सः कविर्देवः न दभायत् स्वधावान्। (7)

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का

आधार (बृहस्पतिम्) सबसे बड़ा मालिक अर्थात् परमेश्वर (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक जा चुके हैं तथा अन्य को सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्मण्डों को (जनिता) रचने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्–देवः) कविर्देव है। भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं। क्योंकि कविर्=कबिर् फिर अपभ्रंश होकर कबीर कहा जाने लगा तथा देव=परमेश्वर अर्थ है। इसलिए कबीर परमेश्वर उसी काशी वाले जुलाहे का सम्बोधन वेदों में है।

**भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।**

**जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) सबसे बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, काल(ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्मण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणम् त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।**

# "पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्त्रशीर्षा पुरूषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।
स भूमिं विश्वतों वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।1।।

संधिछेद :– सहस्त्रशिर्षा पुरूषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात् स भूमिम् विश्वतः वृत्वा अत्यातिष्ठत् दशंगुलम्। (1)

अनुवाद :– (पुरूषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरूष (सहस्रशिर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्मण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

**भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल-ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल-ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है गीता अध्याय 11 श्लोक 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्रबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज में दर्शन दीजिए। क्योंकि अर्जुन काल का वास्तविक रूप भी आँखों देख रहा था तथा अपनी बुद्धि से उसे कृष्ण अर्थात् विष्णु मान रहा था) जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्मण्डों को गोलाकार परिधि में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में बैठा है।**

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।2।।

संधिछेद :– पुरूष एव इदम् सर्वम् यत् भूतम् यत् च भाव्यम् उत अमृतत्वस्य इशानः यत् अन्नेन अतिरोहति। (2)

अनुवाद :– (एव) परब्रह्म भी कुछ (पुरूष) भगवान जैसे लक्षणों युक्त है (च) और (इदम्) इस के लोक में यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरूष भी (उत)

सन्देह युक्त (अमृतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है। अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरूष भी कुछ सही है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

**भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भक्ति से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मृत्यु का समय भले ही काल (क्षर पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।**

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।3।।

संधिछेद :– एतावान अस्य महिमा अतः ज्यायान् च पुरूषः पादः अस्य विश्वा भूतानि त्रि पाद् अस्य अमृतम् दिवि। (3)

अनुवाद :– (अस्य) इस अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरूषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरूष का (पादः) एक पैर मात्र है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक– अलख लोक–अगम लोक (अमृतम्) अविनाशी (पाद्) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्मण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरूष पूर्ण परमात्मा का ही अंश अर्थात् उन्हीं की रचना है।

**भावार्थ :- इस उपरोक्त मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्मण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी(अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरुष-अक्षर पुरूष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरूष) का विवरण श्रीमद्भगवत गीता**

**अध्याय 15 संख्या 16-17 में तथा गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 18 से 22 में भी है इस प्रकार तीन अव्यक्त प्रभु हैं {इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :- गरीब, जाके अर्ध रूम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा।।**

गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सृजनहार।।

**इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-**

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार।
दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सृजनहार।।

**इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-**

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार। हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदिगार।।

**(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पृष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)**

**कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से सर्व रचना करने के कारण शब्द स्वरूपी प्रभु। हक्का कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ सर्व सुखदाई परमात्मा है।}**

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्व ङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।4।।

संधिछेद :– त्रि पाद ऊर्ध्वः उदैत् पुरूषः पादः अस्य इह अभवत् पूनः ततः विश्वङ् व्यक्रामत् सः अशनानशने अभि। (4)

अनुवाद :– (पुरूषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह) यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरूष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष के भी (अभि)ऊपर (विश्वङ्)सर्वत्र (व्यक्रामत्)व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है।

भावार्थ :- यही सर्व सृष्टि रचन हार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है। यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अन्य रचना से पूर्व का है। फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मृत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज(क्षमता) को सर्व ब्रह्मण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए सर्व ओर छोड़ा हुआ है। जैसे मोबाइल फोन का टावर एक देशीय होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज(क्षमता) सर्वत्र अपनी सीमा में फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा ने अपनी निराकार शक्ति को सर्वव्यापक किया है। जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित रखता है।

उपरोक्त तीन प्रभुओं (1. क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म, 2. अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म 3. परम अक्षर पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत्गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 1 तथा 3 में भी है। क्योंकि श्रीमद्भगवत् गीता जी पवित्र चारों वेदों का सारांश है)

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमृतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए।
माता, पिता, कुलन न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये।।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरूषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।।5।।

संधिछेद :– तस्मात् विराट अजायत विराजः अधि पुरूषः सः जातः अत्यरिच्यत पश्चात् भूमिम् अथः पुरः। (5)

अनुवाद :– (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरूष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरूष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट पुरूष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरूषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पृथ्वी वाले लोक अर्थात् काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे–छोटे लोक (सः) वह (जातः) पूर्ण परमेश्वर ही उत्पन्न किया करता है अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व लोकों को स्थापित किया।

**भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पत्ति की अर्थात् उसी सर्व शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) से ही विराट अर्थात् ब्रह्म(काल) की उत्पत्ति हुई** {यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 14 में है कि परम अक्षर पुरूष से अर्थात् अविनाशी परमात्मा से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई।} **उस पूर्ण ब्रह्म ने भूमिम् अर्थात् पृथ्वी तत्व से ब्रह्म तथा परब्रह्म के छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।**

**इस ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 5 में स्पष्ट है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष/काल की उत्पत्ति पूर्ण परमात्मा से हुई है। यही प्रमाण पूर्वोक्त अथर्ववेद काण्ड 4 में अनुवाक 1 मन्त्र 3 में है तथा यही प्रमाण श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 3 मन्त्र 14-15 में है कि ब्रह्म की उत्पत्ति अक्षरम् सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् अविनाशी सर्व व्यापक परमात्मा से हुई है।**

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।<br>
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरूषं पशुम्।। 15।।

संधिछेद :– सप्त अस्य आसन् परिधयः त्रिसप्त समिधः कृताः देवा यत् यज्ञम् तन्वानाः अबध्नन् पुरूषम् पशुम्। (15)

अनुवाद :– (सप्त) सात संख ब्रह्मण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्मण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी

(कृताः) करने वाले (परिधयः) गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं (यत्) जो (पुरूषम्) पूर्ण परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम्) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वानाः) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बंधन जाल से (अबध्नन्) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

**भावार्थ :- वह पूर्ण परमात्मा सात संख ब्रह्मण्ड परब्रह्म के तथा इक्कीस ब्रह्मण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बली दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मृत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बंध छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि** कविरंघारिसि=(कविर्) कबिर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि=(बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।16।।

संधिछेद :— यज्ञेन यज्ञम् अयजन्त देवाः तानि धर्माणि प्रथमानि आसन् ते ह नाकम् महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः। (16)

अनुवाद :— जो (देवाः) देव स्वरूप भक्तात्मायें (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार से अर्थात् शास्त्रवर्णीत विधि अनुसार (यज्ञम्) यज्ञ रूपी धार्मिक (अयजन्त्) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन्) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन अपनी भक्ति कमाई के बल द्वारा(नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली सृष्टि के (देवाः) देव स्वरूप भक्त आत्मायें (सन्ति) रहती हैं।

**भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस,शराब, तम्बाकू आदि नशीली व अखाद्य वस्तुओं का सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से**

रहित है) देव स्वरूप भक्त आत्माऐं शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची सृष्टि के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माऐं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माऐं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फंस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्मण्डों में आ गई, फिर भी असंखों आत्माऐं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरे वे वहीं रह गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन है कि जो साधक उस पूर्ण परमात्मा (परम दिव्य पुरूष) की साधना अंतिम स्वांस तक करता है वह शास्त्र अनुकूल की गई साधना की कमाई के बल के कारण उस परमात्मा पूर्ण ब्रह्म को प्राप्त होता है अर्थात् उस परम दिव्य पुरूष के पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ की तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म - पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म=ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म=अक्षर पुरुष - अक्षर ब्रह्म तथा 3. पूर्ण ब्रह्म=परम अक्षर ब्रह्म - परमेश्वर - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान (कविर्गीर्भिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाईयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। इस कारण से उस परमात्मा को महान कवि की उपाधी से जाना जाता है परन्तु वह कविर्देव वही परमात्मा होता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें नराकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदृश अर्थात् नराकार में विराजमान है।

## ''पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

### (दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द (गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी जी, पृष्ठ नं. 114 से)

पृष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकृति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा, ब्रह्म (काल) की पत्नी है। एक ब्रह्मण्ड की सृष्टि रचना के विषय में राजा श्री परिक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्मण्ड की रचना कैसे हुई ? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्मण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है ? सच-सच बताने की कृपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे नहीं मालूम इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया ? एक हजार वर्ष तक पृथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकशवाणी हुई कि तप करो। एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर सृष्टि करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षए आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उतरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रवेश दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे। इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्म लोक में घुमाया। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा। (यह ब्रह्म ही तीन रूप बना कर ऊपर लीला कर रहा है। कृप्या देखें एक ब्रह्मण्ड का चित्र पृष्ठ 89) फिर एक देवी देखी, उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पृष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह हम तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकृति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा-सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देवता नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत जननी हो, प्रकृति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मृत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकृति) के पुत्र हैं तथा काल ब्रह्म (सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी ने प्रश्न किया कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है ? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कंद के पृष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं मेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकृति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ये तीनों देवता, ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व पूर्ण शक्ति युक्त नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) का विवाह दुर्गा (प्रकृति देवी) ने किया। पृष्ठ नं. 128-129 पर, श्री देवी पुराण तीसरे स्कंद में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि। १२।

ये, च, एव, सात्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।12।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मतः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परंतु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।(12)

**केवल हिन्दी अनुवाद : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं ऐसा जान परंतु वास्तवमें उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं।(12)**

**भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) द्वारा जो भी उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार हो रहा है इसका निमित्त मैं ही हूँ। परन्तु मैं इनसे दूर हूँ। कारण है कि काल को शापवश एक लाख प्राणियों का आहार करना होता है। इसलिए मुख्य कारण अपने आप को कहा है तथा काल भगवान तीनों देवताओं से भिन्न ब्रह्म लोक में रहता है तथा इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में रहता है। इसलिए कहा है कि मैं उनमें तथा वे मुझ में नहीं हैं।**

**श्री मद्देवीभागवत से लेख :-(प्रथम स्कन्ध अध्याय 23,28,29,31,38,39,41,42 पृष्ठ 1 से 8)**

**(प्रथम स्कन्ध अध्याय 1 पृष्ठ 23) श्री सूत जी ने कहा :-**पौराणिकों एवं वैदिकोंका कथन है तथा यह भलीभाँति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्माजी का जन्म भगवान् विष्णु के नाभिकमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिति में ब्रह्मजी जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे? भगवान् विष्णु को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते। वे शेषनागकी शय्यापर सोये हुए थे। नाभिसे कमल निकला और उसपर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किंतु वे श्रीहरि भी तो किसी आधारपर अवलम्बित थे। उनके आधारभूत

क्षीरसमुद्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता; क्योंकि वह रस है। रस बिना पात्र के ठहरता नहीं, कोई न कोई रसका आधार रहना ही चाहिये। अतएव चराचर जगत् की आधारभूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निशचित हुई।

**(प्रथम स्कन्ध, अध्याय 8 पृष्ठ 41 पर) ऋषियों ने पूछा** - महाभाग सूत जी! इस कथा प्रसङ्गको जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है; क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञजनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर–ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। ब्रह्माजी सारे संसार की सृष्टि करते हैं। जगत् का संरक्षण भगवान् विष्णु के अधीन रहता है। प्रलय के अवसर पर शंकर जी उसका संहार किया करते हैं। इस जगत्प्रपञ्च के ये ही तीनों देवता कारण हैं। ये वास्तव में एक ही हैं, किंतु कार्यवश सत्त्व, रज और तम आदि गुणों को स्वीकार करके ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नाम से विख्यात होते हैं। इन तीनों में परमपुरूष भगवान् विष्णु सबसे श्रेष्ठ हैं। वे जगत् के स्वामी और आदिदेव कहलाते हैं। उनमें सब कुछ करने की योग्यता है। दूसरा कोई भी देवता उन अतुल तेजस्वी श्रीविष्णु के समान शक्तिशाली नहीं है। फिर ऐसे सर्वसमर्थ परमप्रभु भगवान् श्री विष्णु योगमाया के अधीन होकर कैसे सो गये? महाभाग! हमें यह महान् संदेह हो रहा है! इस मङ्गलमय प्रसङ्ग को सुनाने की कृपा कीजिये। सुव्रत! आप पहले जिसकी चर्चा कर चुके हैं तथा जिसने परमप्रभु विष्णु पर भी अधिकार जमा लिया, वह कौन–सी शक्ति है? कहाँ से उसकी सृष्टि हुई, उसमें कैसे इतना पराक्रम हो गया और क्या उसका परिचय है – सब बताने की कृपा करें।

**सूत जी कहते हैं** - मुनिवरो! चराचर सहित इस त्रिलोकीमें कौन ऐसा है, जो इस संदेहको दूर कर सके। ब्रह्माजी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते हैं। महानुभावो ! यह प्रश्न बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इसके सम्बन्ध में मैं क्या कह सकता हूँ ?

**(पृष्ठ 42)** विद्वान पुरूष ऐसा कहते हैं और पुराणों ने भी घोषणा की है कि ब्रह्मा में सृष्टि करने की शक्ति है और विष्णु पालन करने में समर्थ हैं तथा शंकर संहार करने में कुशल है। सूर्य जगत् को प्रकाश देते हैं। शेष और कच्छप पृथ्वी धारण किये रहते हैं। अग्नि में जलाने की और पवन में हिलाने–डुलाने की शक्ति है। सबमें जो शक्ति विराजमान है, वही आद्याशक्ति है। उसी के प्रभाव से

शिव भी शिवता को प्राप्त होते हैं। जिसपर उस शक्ति की कृपा न हुई, वह कोई भी हो, शक्तिहीन हो जाता है। बुधजन उसे असमर्थ कहते हैं। सबमें व्यापक रहने वाली जो आद्याशक्ति है, उसी का 'ब्रह्म' इस नाम से निरूपण किया गया है। अतएव विद्वान् पुरूषों को चाहिये कि भलीभाँति विचार करके सदा उसी शक्तिकी उपासना करे। विष्णु में सात्त्विकी शक्ति व्याप्त है। यदि वह उनसे अलग हो जाए तो विष्णु कुछ भी न कर सकें। ब्रह्मा में जो राजसी शक्ति है, उसके बिना वे सृष्टि—कार्य में अयोग्य हैं। शिव में जो तामसी शक्ति है, उसी के प्रभाव से वे संहारलीला करते हैं। मनोयोग—पूर्वक इस प्रकार बार—बार विचार करके सारी बात समझ लेनी चाहिये। वही आद्याशक्ति इस अखिल ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करती और उसका पालन भी करती है। वही इच्छा होने पर इस चराचर जगत् का संहार भी करने में संलग्न हो जाती है। **ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, इन्द्र, अग्नि और पवन-ये सभी किसी प्रकार भी स्वतन्त्ररूप से अपने-अपने कार्य का सम्पादन नहीं कर सकते; किंतु जब वह आद्याशक्ति इन्हें सहयोग देती है, तभी ये अपने कार्य में सफल होते हैं।** अतः इन कार्य—कारणों से यही प्रत्यक्ष सिद्ध होता है कि वह शक्ति ही सर्वोपरि है।

**(पहला स्कन्ध अध्याय 6 पृष्ठ 38-39)** ब्रह्मा जी के स्तुति करने पर भी भगवान् विष्णु की नींद नहीं टूटी। उन पर योगनिद्रा का पूरा अधिकार जम चुका था। तब ब्रह्मा जी सोचने लगे—'अब श्रीहरि शक्ति के प्रभाव से पूर्ण प्रभावित होकर खूब गाढ़ी नींद में मग्न हो गये हैं।

इससे सिद्ध हो गया, ये भगवती योगनिद्रा इन लक्ष्मीकान्त भगवान् विष्णु की भी अधिष्ठात्री हैं। लक्ष्मी जी भी इन्हीं के अधीन हो गयीं; क्योंकि पतिदेव विष्णु ही जब अधीन हो गये, तब उनकी अलग सत्ता कहाँ। इससे निश्चित होता है कि यह अखिल ब्रह्माण्ड भगवती योगनिद्रा के अधीन है। मैं (ब्रह्मा), विष्णु, शंकर, सावित्री, लक्ष्मी और उमा—सभी इन्हीं योगनिद्रा के शासनसूत्र में बँधे हैं।

**ब्रह्मा जी बोले** - देवी! मैं जान गया, तुम निश्चय ही इस जगत् की कारणस्वरूपा हो। सम्पूर्ण वेद—वचन इसे प्रमाणित कर रहे हैं। यही कारण है कि चराचर जगत् को प्रबुद्ध करने वाले परमपुरूष भगवान् विष्णु आज गाढ़ी नींद में मग्न हैं।

**(पहला स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29) नारदजी ने कहा** - महाभाग व्यासजी! तुम इस विषय में जो पूछ रहे हो, ठीक यही प्रश्न मेरे पिताजी ने भगवान् श्रीहरि से किया था। देवाधिदेव भगवान् जगत् के स्वामी हैं। लक्ष्मी जी

उनकी सेवा में उपस्थित रहती हैं। दिव्य कौस्तुभमणि उनकी शोभा बढ़ाती है। वे शङ्ख, चक्र और गदा लिये रहते हैं। पीताम्बर धारण करते हैं। चार भुजाएँ हैं। वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिन्ह चमकता रहता है। वे चराचर जगत् के आश्रयदाता हैं, जगत्गुरु एवं देवताओं के भी देवता हैं। ऐसे जगत्प्रभु भगवान् श्रीहरि महान् तप कर रहे थे। उनकी समाधि लगी थी। यह देखकर मेरे पिता जी ब्रह्माजी को बड़ा आश्चर्य हुआ। अतः उन्होंने उनसे जानने की इच्छा प्रकट की।

**ब्रह्मा जी ने पूछा**-प्रभो! आप देवताओं के अध्यक्ष, जगत् के स्वामी और भूत, भविष्य एवं वर्तमान—**सभी जीवों के एकमात्र शासक हैं। भगवन्! फिर आप क्यों तपस्या कर रहे हैं और किस देवता की आराधना में ध्यानमग्न हैं?** मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा हैं कि आप देवश्वर एवं सारे संसार के शासक होते हुए भी समाधि लगाये बैठे हैं।

**ब्रह्माजी के ये विनीत वचन सुनकर भगवान् श्रीहरि (श्री विष्णु) उनसे कहने लगे**-'ब्रह्मन्! सावधान होकर सुनो। मैं अपने मनका विचार व्यक्त करता हूँ। देवता, दानव और मानव—सब यही जानते हैं कि तुम सुष्टि करते हो, मैं पालन करता हूँ और शंकर संहार किया करते हैं, किन्तु फिर भी वेद के पारगामी पुरूष अपनी युक्ति से यह सिद्ध करते हैं कि रचने, पालने और संहार करने की यह योग्यता जो हमें मिली है, इसकी अधिष्ठात्री शक्तिदेवी हैं। वे कहते हैं कि संसार की सृष्टि करनेके लिये **तुममें राजसी शक्तिका संचार हुआ है, मुझे सात्त्विकी शक्ति मिली है और रूद्र में तामसी शक्ति का अविर्भाव हुआ है। उस शक्ति के अभाव में तुम इस संसार की सृष्टि नहीं कर सकते, मैं पालन करने में सफल नहीं हो सकता और रूद्रसे संहारकार्य होना भी सम्भव नहीं**। ब्रह्माजी! हम सभी उस शक्ति के सहारे ही अपने कार्य में सदा सफल होते आये हैं। सुव्रत! प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों उदाहरण मैं तुम्हारे सामने रखता हूँ, सुनो। यह निश्चित बात है कि उस शक्ति के अधीन होकर ही मैं (प्रलयकालमें) इस शेषनाग की शय्यापर सोता हूँ और सृष्टि करने का अवसर आते ही जग जाता हूँ। **मैं सदा तप करने में लगा रहता हूँ। उस शक्ति के शासन से कभी मुक्त नहीं रह सकता। कभी अवसर मिला तो लक्ष्मी के साथ सुख-पूर्वक समय बिताने का सौभाग्य प्राप्त होता है। मैं कभी तो दानवों के साथ युद्ध करता हूँ।** अखिल जगत् को भय पहुँचानेवाले दैत्यों के विकराल शरीरोंको शान्त करना मेरा परम कर्तव्य हो जाता है।

**मुझे सब प्रकारसे शक्ति के अधीन होकर रहना पड़ता है। उन्हीं भगवती**

**शक्ति का मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ। ब्रह्माजी! मेरी जानकारी में इन भगवती शक्ति से बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।**

**(पहला स्कन्ध अध्याय 5 पृष्ठ 31) सूतजी कहते हैं** - इस प्रकार ब्रह्माजी के कहने पर उसी क्षण वम्री ने प्रत्यञ्चा को, जो नीचे भूमि पर थी, खा लिया। फिर तो बन्धन–मुक्त हो गया। प्रत्यञ्चा कटते ही दूसरी ओर की डोरी भी वैसे ही ढीली पड़ गयी। उस समय बड़े जोर से भयंकर शब्द हुआ, जिससे देवता भयभीत हो उठे। चारों ओर अन्धकार छा गया। सूर्य की प्रभा क्षीण हो गयी। फिर तो सभी देवता घबराकर सोचने लगे–'अहो, ऐसे भयंकर समय में पता नहीं क्या होने वाला है।' ऋषियों! समस्त देवता यों सोच रहे थे; इतने में पता नहीं, भगवान् विष्णुका मस्तक कुण्डल और मुकुटसहित कहाँ उड़कर चला गया। कुछ समय के बाद जब घोर अन्धकार शान्त हुआ, तब भगवान् शंकर और ब्रह्मा जी ने देखा श्रीहरिका श्रीविग्रह बिना मस्तक का पड़ा हुआ है। यह बड़े आश्चर्य की बात सामने आ गयी।

**ब्रह्माजी ने कहा** - कालभगवान् ने जैसा विधान रच रखा है, वैसा अवश्य ही होता है – यह बिलकुल असंदिग्ध बात है। जैसे बहुत पहले काल की प्रेरणा से भगवान् शंकर ने मेरा ही मस्तक काट दिया था। उसी तरह आज भगवान् विष्णु का भी मस्तक धड़ से अलग होकर समुद्र में जा गिरा है।

**श्री देवी भागवत् पुराण से निष्कर्ष :-(1)अध्याय 1 प्रथम स्कन्ध पृष्ठ 23 पर लिखे विवरण से स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी सृष्टा नहीं है। सर्व शक्तिमान नहीं हैं।**

**2. श्री सूत जी अर्थात् पुराण ज्ञान वक्ता दुर्गा को सृष्टा कह रहा है तथा यह भी कह रहा है कि जगदम्बा (दुर्गा) की उत्पत्ति के विषय में कपिल जी तथा नारद जी भी नहीं जानते मैं क्या उत्तर दे सकता हूँ। इस से सिद्ध है कि पुराण वक्ता भी अल्पज्ञ है। इसलिए उसका ज्ञान कि जगदम्बा (दुर्गा) सृष्टा है मान्य नहीं है।**

**3. प्रथम स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29 वाले लेख से स्पष्ट है कि (क) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी है।(ख) श्री विष्णु जी भी दुर्गा देवी की पूजा करता है। (ग) श्री विष्णु जी तप करता है। (घ) श्री विष्णु जी स्वीकार करता है कि मैं महा दुःखी हूँ क्योंकि राक्षसों के साथ युद्ध करने में लगा रहता हूँ। कभी तप करके अपनी बैट्री चार्ज करता हूँ बहुत कम समय ही लक्ष्मी के साथ रहने को मिलता है। (ङ) श्री विष्णु जी दुर्गा देवी को सबसे बड़ा**

देवता (परमात्मा) मानते हैं। जो श्री विष्णु जी की अल्पज्ञता का प्रमाण है।

4. पहला स्कन्ध अध्याय 5 पृष्ठ 31 वाले विवरण से स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव भी काल भगवान के आधीन हैं। वह इनको जैसा नाच नचाना चाहता है नचाता है।

5. पहला स्कन्ध अध्याय 8 पृष्ठ 41 वाले विवरण में स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव समर्थ नहीं हैं।

## ''पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

### (दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

यही प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्त्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रूद्र संहिता, पृष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अम्बिका, प्रकृति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभु और महेश्वर भी कहते हैं। (पृष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (पृष्ठ नं. 102)।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 7 पृष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 9 पृष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं। विद्यवेश्वर संहिता अध्याय में पृष्ठ 25-26 पर भी स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर से अन्य काल रूपी ब्रह्म अर्थात् सदाशिव है।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए जिस से सिद्ध हुआ कि सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकृति (दुर्गा) से ही ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी,

सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

कृप्या पढ़ें अन्य प्रमाण जो स्वसम वेद (कविर्वाणी) में वर्णित हैं। अन्तर इतना है कि पुराणों के वक्ता व ज्ञान दाता तथा लेखक तत्वज्ञान से अपरिचित थे। जिस कारण से काल ब्रह्म (क्षर पुरूष अर्थात् ज्योति निरंजन) के जाल को नहीं समझ सके। यही कारण रहा की सर्व ऋषिजन व देवता काल ब्रह्म को विष्णु या शिव या ब्रह्मा कह कर अखिल विश्व का सृष्टा बताते रहे। जो ऋषि साधक उस काल ब्रह्म को शिव रूप में ईष्ट देव मानकर उपासना करता था। उसने श्री ब्रह्मा जी द्वारा बताए सृष्टि रचना के अधूरे ज्ञान के आधार पर श्री शिव पुराण की रचना की जिसमें वक्ता व ज्ञान दाता दोनों विचलित हैं। एक तरफ तो कहा है कि भगवान शिव ही श्री ब्रह्मा रूप धारण करके सृष्टि करता है। विष्णु रूप धारण करके स्थिति बनाए रखता है या श्री शिव रूप धारण करके संहार करता है। फिर लिखा है (पृष्ठ 19) जिन से ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र (शिव) आदि पहले प्रकट हुए हैं। वे ही महादेव, सर्वज्ञ एवं सम्पूर्ण जगत के स्वामी हैं। शिव पुराण में ही फिर लिखा है (पृष्ठ 86) :- हमने सुना है कि भगवान शिव शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। वे महान दयालु हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश- ये तीनो देवता शिव के ही अंग से उत्पन्न हुए हैं। शिव पुराण में ही लिखा है (पृष्ठ 131पर) श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- मुनि श्रेष्ठ नारद! इस प्रकार मैंने सृष्टि क्रम का तुम से वर्णन किया है। ब्रह्माण्ड का यह सारा भाग भगवान् शिव की आज्ञा से मेरे द्वारा रचा गया है। भगवान शिव को परब्रह्म परमात्मा कहा गया है। मैं, विष्णु तथा रूद्र- ये तीनों देवता उन्हीं के भाग बताए गये हैं। वे मनोरम शिव लोक में शिवा (दुर्गा) के साथ स्वच्छन्द विहार करते हैं। भगवान् शिव स्वतन्त्र परमात्मा हैं। निगुर्ण और सर्गुण भी वे ही हैं। इसी शिव पुराण में (पृष्ठ 115पर) श्री ब्रह्मा जी ने कहा है कि नारद! जो स्फटिक मणी के समान निर्मल, निष्कल (आकार रहित) अविनाशी परम देव है, जो ब्रह्मा, रूद्र और विष्णु आदि देवताओं की भी दृष्टि में नहीं आते। जिनकी शिवत्व नाम से ख्याती है। जो शिव लिंग के रूप में प्रतिष्ठित है। उन भगवान शिव का शिव लिंग के मस्तक पर प्रणव मन्त्र (ओम्) से ही पूजन करें।

➽ उपरोक्त विवरण श्री शिव पुराण से है। जिसमें स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी से भिन्न कोई अन्य प्रभु भी है। परन्तु ऋषिजन उस अन्य प्रभु (काल ब्रह्म) से अपरिचित है। इसीलिए कभी ब्रह्मा जी को सृष्टा बताते हैं कभी विष्णु जी को तथा कभी शिव को सृष्टा

**बताते हैं। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी भी काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) से अपरिचित हैं। पूर्वोक्त सृष्टि रचना से आप पाठकों को काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) परब्रह्म (अक्षर पुरूष) तथा इन से भी भिन्न परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा का ज्ञान हुआ। कृप्या पढ़ें श्री शिव पुराण में सृष्टि रचना का सांकेतिक ज्ञान जो श्री ब्रह्मा जी ने पूर्ण परमात्मा से सुना था। परन्तु काल ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी को आकाशवाणी आदि करके भ्रम में डाल कर गलत ज्ञान से परिपूर्ण कर दिया जो पुराणों में वर्णित है। श्री शिव पुराण में श्री ब्रह्मा जी ने कुछ ज्ञान पूर्ण परमात्मा सतसुकृत जी से सुना हुआ तथा कुछ अपने अनुभव का लिखा है तथा श्री ब्रह्मा जी से सुना हुआ ज्ञान अन्य वक्ताओं ने जो ज्ञान कहा है, लिखा गया है। यही दशा अन्य सत्तरह पुराणों के ज्ञान की है। श्री ब्रह्मा जी ने कुछ सत्य तथा कुछ असत्य तथा कुछ अपना अनुभव तथा कुछ पूर्ण परमात्मा के मुख से सुना ज्ञान पुराणों में कहा है। फिर भी यथार्थ ज्ञान को समझने व परखने के लिए पुराणों व वेदों तथा श्री मद्भगवत् गीता जी का ज्ञान बहुत सहयोगी है। कृप्या आगे पढ़ें श्री शिव पुराण से लेख :-**

**संक्षिप्त शिवपुराण, (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार) के अध्याय रूद्रसंहिता पृष्ठ 99 से 110 :-**

**ब्रह्माजीने कहा** - ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत् के उपकार में ही लगे रहते हो। तुमने लोगों के हित की कामना से यह बहुत उत्तम बात पूछी है।

जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अंधकार ही अंधकार था। न सूर्य दिखायी देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहों और नक्षत्रों का भी पता नहीं था। न दिन होता था न रात; अग्नि, पृथ्वी, वायु और जल की भी सत्ता नहीं थी।

उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुति में जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था।

जिस परब्रह्म के विषय में ज्ञान और अज्ञान से पूर्ण उक्तियोंद्वारा इस प्रकार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किये जाते हैं; उसने कुछ काल के बाद (सृष्टिका समय आने पर) द्वितीय की इच्छा प्रकट की—उसके भीतर एकसे अनेक होने का संकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्मा ने अपनी लीलाशक्ति से अपने लिये मूर्ति (आकार) की कल्पना की।

**जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसीकी मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव हैं।** अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उन्हीं को ईश्वर कहते हैं। उस समय एकाकी रहकर स्वेच्छानुसार विहार करनेवाले **उन सदाशिव ने अपने विग्रहसे स्वयं ही एक स्वरूपभूता शक्ति की सृष्टि की,** जो उनके अपने श्रीअंग से कभी अलग होनेवाली नहीं थी। **उस पराशक्ति को प्रधान, प्रकृत्ति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्वकी जननी** तथा विकाररहित बताया गया है। **वह शक्ति अम्बिका कही गयी है। उसीको प्रकृति, सर्वेश्वरी, त्रिदेवजननी, नित्या, और मूलकारण भी कहते हैं। सदाशिवद्वारा प्रकट की गयी उस शक्तिके आठ भुजाएँ हैं।**

नाना प्रकार के आभूषण उसके श्रीअंगोंकी शोभा बढ़ाते हैं। वह देवी नाना प्रकार की गतियों से सम्पन्न है और अनेक प्रकारके अस्त्र–शस्त्र धारण करती है। एकाकिनी होने पर भी वह माया संयोगवशात् अनेक हो जाती है।

**वे जो सदाशिव हैं, उन्हें परमपुरूष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन कालरूपी ब्रह्मने एक ही समय शक्ति के साथ 'शिवलोक' नामक क्षेत्र का निर्माण किया था।** उस उत्तम क्षेत्र को ही काशी कहते हैं। वह परम निर्वाण या मोक्ष का स्थान है, जो सबसे ऊपर विराजमान है। **वे प्रिया-प्रियतमरूप शक्ति और शिव, जो परमानन्द स्वरूप हैं, उस मनोरम क्षेत्र में नित्य निवास करते हैं।** काशीपुरी परमानन्दरूपिणी है। मुने! शिव और शिवाने प्रलयकालमें भी कभी उस क्षेत्र को अपने सांनिध्यसे मुक्त नहीं किया है।

**देवर्षे! एक समय उस आनन्दवन में रमण करते हुए शिवा और शिव के मन में यह इच्छा हुई कि किसी दूसरे पुरूष की भी सृष्टि करनी चाहिए,** जिसपर यह सृष्टि–संचालनका महान् भार रखकर हम दोनों केवल काशीमें रहकर इच्छानुसार विचरें और निर्वाण धारण करें।

**ऐसा निश्चय करके शक्तिसहित सर्वव्यापी परमेश्वर शिवने अपने वामभाग के दसवें अंगपर अमृत मल दिया। फिर तो वहाँ से एक पुरूष प्रकट हुआ।**

तदनन्तर उस पुरूष ने परमेश्वर शिव को प्रणाम करके कहा–'स्वामिन्! मेरे नाम निश्चित कीजिये और काम बताइये। उस पुरूष की यह बात सुनकर महेश्वर भगवान् शंकर हँसते हुए मेघके समान गम्भीर वाणी में

उससे बोले–

**शिव ने कहा- वत्स! व्यापक होने के कारण तुम्हारा विष्णु नाम विख्यात हुआ।** इसके सिवा और भी बहुत–से नाम होंगे, जो भक्तों को सुख देने वाले होगें। तुम सुस्थिर उत्तम तप करो; क्योंकि वही समस्त कार्यों का साधन है।

ऐसा कहकर भगवान् शिवने श्वासमार्गसे श्री विष्णु को वेदों का ज्ञान प्रदान किया। तदनन्तर अपनी महिमा से कभी च्युत न होनेवाले श्रीहरि भगवान् शिवको प्रणाम करके बड़ी भारी तपस्या करने लगे और शक्तिसहित परमेश्वर शिव भी पार्षदगणों के साथ वहाँ से अदृश्य हो गये। भगवान विष्णु ने सुदीर्घ काल तक बड़ी कठोर तपस्या की।

**ब्रह्माजी कहते हैं - देवर्षे! तत्पश्चात् कल्याणकारी परमेश्वर साम्ब सदाशिव ने पूर्ववत् प्रयत्न करके मुझे अपने दाहिने अंग से उत्पन्न किया।** मुने! उन महेश्वर ने मुझे तुरन्त ही अपनी माया से मोहित करके नारायण देव के नाभी कमल में डाल दिया और लीला पूर्वक मुझे वहाँ से प्रकट किया। इस प्रकार उस कमल से पुत्र के रूप में मुझ हिरण्यगर्भ का जन्म हुआ।

मैंने उस कमल के सिवा दूसरे किसी को अपने शरीर का जनक या पिता नहीं जाना। मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, मेरा कार्य क्या है, मैं किसका पुत्र होकर उत्पन्न हुआ हूँ और किसने इस समय मेरा निर्माण किया है–

ऐसा निश्चय करके मैंने अपने को कमल से नीचे उतारा। मुने! मैं उस कमल की एक–एक नाल में गया और सैकड़ों वर्षों तक वहाँ भ्रमण करता रहा, किन्तु कहीं भी उस कमल के उद्गम का उत्तम स्थान मुझे नहीं मिला। तब पुनः संशय में पड़कर मैं उस कमल पुष्प पर जाने को उत्सुक हुआ और नाल के मार्ग से उस कमल पर चढ़ने लगा। इस तरह बहुत ऊपर जाने पर भी मैं उस कमल के कोश को न पा सका। उस दशा में मैं और भी मोहित हो उठा। मुने! उस समय भगवान शिव की इच्छा से परम मंगलमयी उत्तम आकाशवाणी प्रकट हुई, जो मेरे मोहका विध्वंस करने वाली थी। उस वाणी ने कहा–'तप' (तपस्या) करो। उस आकाशवाणी को सुनकर मैंने अपने जन्मदाता पिता का दर्शन करने के लिए उस समय पुनः प्रयत्नपूर्वक बारह वर्षों तक घोर तपस्या की तब

मुझपर अनुग्रह करने के लिये ही चार भुजाओं और सुन्दर नेत्रों से सुशोभित भगवान् विष्णु वहाँ सहसा प्रकट हो गये।

तदनन्तर उन नारायण देव के साथ मेरी बातचीत आरम्भ हुई। भगवान् शिव की लीला से वहाँ हम दोनों में कुछ विवाद छिड़ गया। इसी समय हम लोगों के बीच में एक महान अग्निस्तम्भ (ज्योतिर्मयलिंग) प्रकट हुआ। मैंने और विष्णु ने क्रमशः ऊपर और नीचे जाकर उसके आदि–अन्त का पता लगाने के लिए बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु हमें कहीं भी उसका ओर–छोर नहीं मिला। मैं थककर ऊपर से नीचे लौट आया और भगवान् विष्णु भी उसी तरह नीचे से ऊपर आकर मुझसे मिले। हम दोनों शिव की माया से मोहित थे। श्री हरि ने मेरे साथ आगे–पीछे और अगल–बगल से परमेश्वर शिव को प्रणाम किया। फिर वे सोचने लगे–'यह क्या वस्तु है?' इसके स्वरूप का निर्देश नहीं किया जा सकता; क्योंकि न तो इसका कोई नाम है और न कर्म ही है। लिंग रहित तत्व ही यहाँ लिंगभाव को प्राप्त हो गया है। ध्यानमार्ग में भी इसके स्वरूप का कुछ पता नहीं चलता। इसके बाद मैं और श्रीहरि दोनों ने अपने चित्त को स्वस्थ करके उस अग्निस्तम्भ को प्रणाम करना आरम्भ किया।

हम दोनों बोले–महाप्रभो! हम आपके स्वरूप को नहीं जानते। आप जो कोई भी क्यों न हों, आपको हमारा नमस्कार है। महेशान! आप शीघ्र ही हमें अपने यथार्थ रूपका दर्शन कराइये।

मुनिश्रेष्ठ! इस प्रकार अहंकार से आविष्ट हुए हम दोनों ही वहाँ नमस्कार करने लगे। ऐसा करते हुए हमारे सौ वर्ष बीत गये।

**ब्रह्माजी कहते हैं** – मुनिश्रेष्ठ नारद! इस प्रकार हम दोनों देवता गर्व रहित हो निरन्तर प्रणाम करते रहे। हम दोनों के मन में एक ही अभिलाषा थी कि इस ज्योर्तिलिंग के रूपमें प्रकट हुए परमेश्वर प्रत्यक्ष दर्शन दें। भगवान शंकर दीनों के प्रतिपालक, अहंकारियों का गर्व चूर्ण करने वाले तथा सबके अविनाशी प्रभु हैं। वे हम दोनों पर दयालु हो गये। उस समय वहाँ उन सुरश्रेष्ठ से, 'ओ३म्' 'ओ३म्' ऐसा शब्द रूप नाद प्रकट हुआ, जो स्पष्टरूपसे सुनाई देता था।

तब वहाँ एक ऋषि प्रकट हुए, जो ऋषि समूह के परम साररूप माने जाते हैं। उन्हीं ऋषि के द्वारा परमेश्वर श्रीविष्णु ने जाना की इस शब्दब्रह्ममय शरीरवाले परम लिंगके रूप में साक्षात् परब्रह्मस्वरूप महादेवजी

ही यहाँ प्रकट हुए हैं।

उस परब्रह्म परमात्मा शिव का वाचक एकाक्षर (प्रणव) ही है, वे इसके वाच्यार्थरूप हैं। वह परम कारण, ऋत,सत्य,आन्नद एवं अमृतस्वरूप परात्पर परब्रह्म एकाक्षर वाच्य है।

**तत्पश्चात् परमेश्वर भगवान् महेश प्रसन्न हो अपने दिव्य शब्दमय रूप को प्रकट करके हँसते हुए खड़े हो गये।**

**परमात्मा के शब्दमय रूप को भगवती उमा के साथ देखकर मैं और श्रीहरि दोनों कृतार्थ हो गये।** इस तरह शब्द–ब्रह्ममय–शरीरधारी महेश्वर शिवका दर्शन पाकर मेरे साथ श्री हरि ने उन्हें प्रणाम किया और पुनः ऊपर की ओर देखा। उस समय उन्हें पाँच कलाओं से युक्त ॐकारजनित मन्त्र का साक्षात्कार हुआ। तत्पश्चात् महादेवजी का 'ॐ तत्वमसि' यह महावाक्य दृष्टिगोचर हुआ, जो परम उत्तम मन्त्र रूप है तथा शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल है। फिर सम्पूर्ण धर्म और अर्थ का साधक तथा बुद्धिस्वरूप गायत्री नामक दूसरा महान् मन्त्र लक्षित हुआ, जिसमें चौबीस अक्षर हैं तथा जो चारों पुरूषार्थरूपी फल देने वाला है। तत्पश्चात् मृत्युंजय–मन्त्र फिर पञ्चाक्षर–मन्त्र तथा दक्षिणामूर्तिसंज्ञक चिन्तामणि–मन्त्रका साक्षात्कार हुआ। इस प्रकार पाँच मन्त्रों की उपलब्धि करके भगवान् श्रीहरि उनका जप करने लगे।

जो मुझ ब्रह्मके भी अधिपति, कल्याणकारी तथा सृष्टि, पालन एवं संहार करने वाले हैं, उन वरदायक साम्बशिवका मेरे साथ भगवान् विष्णु ने प्रिय वचनों द्वारा संतुष्टचित्त से स्तवन किया।

तब पापहारी करूणाकर भगवान् महेश्वर ने प्रसन्नचित्त होकर उन श्रीविष्णुदेवको श्वासरूप से वेद का उपदेश दिया। मुने! उसके बाद शिव ने परमात्मा श्रीहरि को गुह्य ज्ञान प्रदान किया। फिर उन परमात्मा ने कृपा करके मुझे भी वह ज्ञान दिया। वेदका ज्ञान प्राप्त करके कृतार्थ हुए भगवान् विष्णु ने मेरे साथ हाथ जोड़कर महेश्वर को नमस्कार करके पुनः उनसे पूजन की विधि बताने तथा सदुपदेश देने के लिये प्रार्थना की।

**ब्रह्मा जी कहते हैं** - मुने! श्रीहरि की यह बात सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुए कृपानिधान भगवान् शिवने प्रीतिपूर्वक यह बात कही।

**श्री शिव बोले** - सूरश्रेष्ठगण! मैं तुम दोनों की भक्ति से निश्चय ही बहुत प्रसन्न हूँ। तुमलोग मुझ महादेव की ओर देखो। इस समय तुम्हें मेरा

स्वरूप जैसा दिखायी देता है, वैसे ही रूपका प्रयत्नपूर्वक पूजन–चिन्तन करना चाहिये। **तुम दोनों महाबली हो और मेरी स्वरूपभूता प्रकृति से प्रकट हुए हो।**

शम्भु की उपर्युक्त बात सुनकर मेरेसहित श्रीहरिने महेश्वर को हाथ जोड़ प्रणाम करके कहा ।

**भगवान विष्णु बोले** - प्रभो! यदि हमारे प्रति आपके हृदय में प्रीति उत्पन्न हुई है और यदि आप हमें वर देना आवश्यक समझते हैं तो हम यही वर माँगते है कि आपमें हम दोनों की सदा अनन्य एवं अविचल भक्ति बनी रहे।

**श्रीमहेश्वर बोले - मै सृष्टि, पालन और संहारका कर्ता हूँ, सगुण और निर्गुण हूँ** तथा सच्चिदानन्दस्वरूप निर्विकार परब्रह्म परमात्मा हूँ। विष्णो! सृष्टि, रक्षा और प्रलयरूप गुणों अथवा कार्यों के भेदसे मैं ही ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र नाम धारण करके तीन स्वरूपों में विभक्त हुआ हूँ।

ब्रह्मन! मेरा ऐसा ही परम उत्कृष्ट रूप तुम्हारे शरीर से इस लोक में प्रकट होगा जो नाम से 'रूद्र' कहलायेगा।

**मैं, तुम, ब्रह्मा तथा जो ये रूद्र प्रकट होंगे, वे सब-के-सब एकरूप हैं। ब्रह्मन्! इस कारण से तुम्हे ऐसा करना चाहिये। तुम तो इस सृष्टि के निर्माता बनो और श्रीहरि इसका पालन करें तथा मेरे अंशसे प्रकट होने वाले जो रूद्र हैं, वे इसका प्रलय करने वाले होंगे। ये जो 'उमा' नामसे विख्यात परमेश्वरी प्रकृति देवी है, इन्हीं की शक्तिभूता वाग्देवी ब्रह्माजी का सेवन करेगी। फिर इन प्रकृति देवी से वहाँ जो दूसरी शक्ति प्रकट होगी वे लक्ष्मी रूप से भगवान् विष्णु का आश्रय लेंगी। तदनन्तर पुनः काली नाम से जो तीसरी शक्ति प्रकट होगी, वे निश्चय ही मेरी अंश भूत रूद्रदेव को प्राप्त होंगी।**

मैं ही सृष्टि, पालन और संहार करने वाले रज आदि त्रिविध गुणों द्वारा ब्रह्मा, विष्णु और रूद्रनाम से प्रसिद्ध हो तीन रूपों में पृथक–पृथक प्रकट होता हूँ। साक्षात् शिव गुणों से भिन्न हैं। वे प्रकृति और पुरूष से भी परे हैं–अद्वितीय, नित्य, अनन्त पूर्ण एवं निरंजन परब्रह्म परमात्मा हैं। तीनों लोकों का पालन करने वाले श्री हरि भीतर तमोगुण और बाहर सत्त्वगुण धारण करते हैं, त्रिलोकी का संहार करने वाले रूद्रदेव भीतर सत्त्वगुण और बाहर तमोगुण धारण करते हैं तथा त्रिभुवन की सृष्टि करने

वाले ब्रह्माजी बाहर और भीतर से भी रजोगुणी ही है। **इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र-इन तीन देवताओं में गुण हैं, परंतु शिव गुणातीत माने गये हैं।**

**परमेश्वर शिव बोले** - उत्तम व्रतका पालन करने वाले हरे! विष्णो! अब तुम मेरी दूसरी आज्ञा सुनों। उसका पालन करने से तुम सदा समस्त लोकों में माननीय और पूजनीय बने रहोगे। ब्रह्माजी के द्वारा रचे गये लोक में जब कोई दुःख या संकट उत्पन्न हो, तब तुम उन सम्पूर्ण दुःखों का नाश करने के लिए सदा तत्पर रहना। तुम्हारे सम्पूर्ण दुस्सह कार्यों में मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। तुम्हारे जो दुर्जेय और अत्यन्त उत्कट शत्रु होंगे, उन सबको मैं मार गिराऊँगा। हरे! तुम नाना प्रकार के अवतार धारण करके लोक में अपनी उत्तम कीर्तिका विस्तार करो और सबके उद्धार के लिये तत्पर रहो। तुम रूद्र के ध्येय हो और रूद्र तुम्हारे ध्येय हैं। तुममें और रूद्र में कुछ भी अन्तर नहीं है।

**संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 114 से :-**

**'ॐ वामदेवाय नमः'** इत्यादि वामदेव–मन्त्र से उन्हें आसनपर विराजमान करे।

**संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 126 से :-**

वे ब्रह्माण्ड से बाहर जाकर भगवान शिव की कृपा प्राप्त करके वैकुण्ठधाम में जा पहुँचे और सदा वहीं रहने लगे। मैंने सृष्टि की इच्छा से भगवान् शिव और विष्णु का स्मरण करके पहले के रचे हुए जल में अपनी अंजली डालकर जलको ऊपर की ओर उछाला। इससे वहाँ एक अण्ड प्रकट हुआ।

**संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 130 से :-**

उस जोड़े में जो पुरूष था, वही स्वायम्भुव मनु के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

**विशेष प्रमाण :- श्री शिव महापुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 से 9 में (अनुवाद कर्ता विद्यावारिधि पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र, प्रकाशक=खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन बम्बई- 400004 इस शिव महापुराण में मूल संस्कृत भी विद्यमान है। परन्तु यहाँ पुस्तक विस्तार के कारण केवल हिन्दी अनुवाद ही लिखा गया है।) पृष्ठ 11-13,14,17,18 से सारांश ज्ञान :- लिखा है कि ''एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी में प्रभुता के कारण युद्ध हुआ। श्री ब्रह्मा जी ने कहा मैं सर्व सृष्टि का रचनहार हूँ मैं ही आप (श्री विष्णु) का उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता हूँ। इसी का प्रत्युत्तर देते हुए श्री विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी से कहा मैं आप (श्री ब्रह्मा जी) का**

**उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता हूँ। इस बात पर दोनों का युद्ध हुआ।(पृष्ठ 11 पर उपरोक्त विवरण है)**

उनके मध्य में एक प्रकाशमान स्तम्भ प्रकट हुआ। दोनों (ब्रह्मा–विष्णु) को उसके आदि अन्त का भेद नहीं पाया तब वह निराकार ब्रह्म शिव रूप में साकार हुआ तथा कहा ''मेरे सकल निष्कल भेद से दो स्वरूप हैं'' पहला स्तम्भ रूप और पीछे मूर्तिमान रूप धारण किया इसमें ब्रह्म निष्कल (निराकार) और ईशरूप सगुण (साकार) मेरे यह दोनों रूप सिद्ध हैं। दूसरे किसी के नहीं। **इस कारण तुम दोनों को (ब्रह्मा व विष्णु को) अथवा दूसरों को ईश्वरत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती तुमने (श्री ब्रह्मा तथा श्री विष्णु जी ने) जो अज्ञानता से अपने आप को ईश (भगवान) माना यह बड़ा अद्भुत हुआ उसको दूर करने को ही मैं रणस्थान मैं आया हूँ।** अब तुम अपना अभिमान त्याग कर मुझ ईश्वर में अपनी बुद्धि लगाओ मेरे प्रसाद से लोक में सब अर्थ प्रकाश करते हैं। **मैं ही ब्रह्म हूँ और** मेरा ही कल–अकल रूप है, **ब्रह्म होने से मैं ईश्वर हूँ**। मैं इस सबका ईश्वर हूँ यह मेरा है मेरे सिवाय किसी दुसरे का नहीं है। प्रथम तो ब्रह्म ज्ञान के निमित्त निष्कल ब्रह्म का प्रादुर्भाव हुआ है। इसी से मैं अज्ञात स्वरूप हूँ पीछे तुम्हें प्रगट दर्शन देने के निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षण ही में सगुण रूप हुआ हूँ। (पृष्ठ18) हे पुत्रों ! **यह कृत्य (उत्पत्ति व स्थिति का कार्य) आपने तप से प्राप्त किया है जो सृष्टि की उत्पत्ति तथा पालन कहलाता हैं। सौ मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है। इसी प्रकार से दूसरे दो कृत्य रूद्र और महेश को प्रदान किए हैं परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पाने को समर्थ नहीं है।**

**''श्री शिव पुराण के उपरोक्त लेखों का सारांश'' :-**

**उपरोक्त शिव पुराण से निम्न बातें स्पष्ट हुई :-**

**(1) सदाशिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म, श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश जी का जनक (पिता) है।**

**(2) प्रकृति अर्थात् दुर्गा जिसकी आठ भुजाऐं हैं यह श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर (रूद्र) जी की जननी (माता) है।**

**(3) दुर्गा को प्रधान, प्रकृति, शिवा भी कहा जाता है।**

**(4) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश ईश (भगवान) नहीं हैं क्योंकि खेमराज श्री कृष्णदास प्रकाशन बम्बई वाली श्री शिवपुराण में श्री शिव**

**अर्थात् काल ब्रह्म ने कहा है कि हे ब्रह्मा तथा विष्णु तुमने अपने आप को ईश (भगवान) माना है यह ठीक नहीं है अर्थात् तुम प्रभु नहीं हो।**

**(5) श्री शिव अर्थात् काल ब्रह्म से भिन्न तथा इसी के आधीन तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश/रूद्र) हैं।**

**(6) श्री ब्रह्मा, विष्णु ने जो उपाधी प्राप्त की है यह तप करके प्राप्त की है। जो ब्रह्म काल अर्थात् सदाशिव द्वारा तप के प्रतिफल में प्रदान की गई है।**

**(7) सदाशिव अर्थात् महाशिव ही ब्रह्म है यही काल रूपी ब्रह्म है। दुर्गा ने अपनी शब्द (वचन) शक्ति से सावित्री, लक्ष्मी, पार्वती को उत्पन्न किया।**

**(8) श्री ब्रह्मा जी से सावित्री, श्री विष्णु जी से लक्ष्मी तथा श्री महेश/रूद्र से पार्बती/काली का विवाह किया गया।**

**(9) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश को क्षमा करने का अधिकार नहीं है। केवल कर्म फल ही प्रदान कर सकते हैं।**

**(10) श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री महेश/रूद्र तमगुण युक्त हैं।**

## ''श्री विष्णु पुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

**श्री विष्णु पुराण (प्रकाशक एवं मुद्रक गीता प्रैस गोरखपुर। अनुवाद :- श्री मुनिलाल गुप्त)**

**(उल्लेख संख्या - 1)**

अध्याय 2 श्लोक 1–2 (प्रथम अंश) श्री पराशर उवाच

अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने। सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ।।1।।
नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च। वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे।।2।।

**अनुवाद** – श्री पराशरजी बोले– **जो ब्रह्मा, विष्णु और शंकर रूप से जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के कारण हैं** तथा अपने भक्तों को संसार–सागर से तारने वाले हैं, उन विकाररहित, शुद्ध, **अविनाशी, परमात्मा, सर्वदा एकरस, सर्वविजयी भगवान् वासुदेव विष्णु को नमस्कार है।** ।1–2।।

**(उल्लेख संख्या - 2)** अध्याय 2 श्लोक 3 (प्रथम अंश)

एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः। अव्यक्तव्यक्तरूपाय विष्णवे मुक्तिहेतवे ।।3।।

**अनुवाद** :– जो एक होकर भी नाना रूपवाले हैं, स्थूलसूक्ष्ममय हैं, अव्यक्त (कारण) एवं व्यक्त (कार्य) रूप हैं तथा {अपने अनन्य भक्तों की}

मुक्ति के कारण हैं, {उन श्री विष्णु भगवान् को नमस्कार है}।।3।।

**(उल्लेख संख्या - 3)** अध्याय 2 श्लोक 9 (प्रथम अंश)

तैश्चोक्तं पुरूकुत्साय भूभुजे नर्मदातटे। सारस्वताय तेनापि मह्यं सारस्वतेन च ।।9।।

**अनुवाद :- वह प्रसंग दक्ष आदि मुनियों ने नर्मदा-तटपर राजा पुरूकुत्स को सुनाया था तथा पुरूकुत्सने सारस्वत से और सारस्वत ने मुझसे कहा था।।9।।**

**(उल्लेख संख्या - 4)** अध्याय 2 श्लोक 10-13 (प्रथम अंश)

परः पराणां परमः परमात्मात्मसंस्थितः। रूपवर्णादिनिर्देशविशेषणविवर्जितः।।10।।
अपक्षयविनाशाभ्यां परिणामर्धिजन्मभिः। वर्जितः शक्यते वक्तुं यः सदास्तीति केवलम्।।11।।
सर्वत्रासौ समस्तं च वसत्यत्रेति वै यतः। ततः स वासुदेवेति विद्वद्भिः परिपठ्यते।।12।।
तद्ब्रह्म परमं नित्यमजमक्षयमव्ययम्। एकस्वरूपं तु सदा हेयाभावाच्च निर्मलम्।।13।।

**अनुवाद :- जो पर (प्रकृति) से भी पर, परमश्रेष्ठ, अन्तरात्मा में स्थित परमात्मा,** रूप, वर्ण, नाम और विशेषण आदि से रहित है; जिसमें जन्म, वृद्धि, परिणाम, क्षय और नाश—इन छः विकारों का सर्वथा अभाव है; जिसको सर्वदा केवल 'है' इतना ही कह सकते हैं, तथा **जिनके लिये यह प्रसिद्ध है कि 'वे सर्वत्र हैं** और उनमें समस्त विश्व बसा हुआ है—**इसलिये ही विद्वान् जिसको वासुदेव कहते हैं' वही नित्य, अजन्मा,** अक्षय, अव्यय, एकरस और हेय गुणों के अभाव के कारण **निर्मल परब्रह्म है**।।10—13।।

**(उल्लेख संख्या - 5)** अध्याय 2 श्लोक 14 (प्रथम अंश)

तदेव सर्वमेवैतद्व्यक्ताव्यक्तस्वरूपवत्। तथा पुरुषरूपेण कालरूपेण च स्थितम्।।14।।

**अनुवाद :- वही इन सब व्यक्त (कार्य) और अव्यक्त (कारण) जगत् के रूपसे, तथा इसके साक्षी पुरूष और महाकारण काल के रूप से स्थित है।**।14।।

**(उल्लेख संख्या - 6)** अध्याय 2 श्लोक 15 (प्रथम अंश)

परस्य ब्रह्मणो रूपं पुरूषः प्रथमं द्विज। व्यक्ताव्यक्ते तथैवान्ये रूपे कालस्तथा परम्।।15।।

**अनुवाद :- हे द्विज! परब्रह्म का प्रथम रूप पुरूष है,** अव्यक्त (प्रकृति) और व्यक्त (महदादि) उसके अन्य रूप हैं तथा {सबको क्षोभित करनेवाला होने से} **काल उसका परमरूप है**।।15।।

**(उल्लेख संख्या - 7)** अध्याय 2 श्लोक 16 (प्रथम अंश)

प्रधानपुरूषव्यक्तकालानां परमं हि यत्। पश्यन्ति सूरयः शुद्धं तद्विष्णोः परमं पदम्।।16।।

**अनुवाद :- इस प्रकार जो प्रधान, पुरूष, व्यक्त और काल-इन चारों से परे है तथा जिसे पण्डितजन ही देख पाते हैं वही भगवान् विष्णु का परमपद है।।16।।**

**(उल्लेख संख्या - 8)** अध्याय 2 श्लोक 17 (प्रथम अंश)

प्रधानपुरूषव्यक्तकालास्तु प्रविभागशः। रूपाणि स्थितिसर्गान्तव्यक्तिसद्भावहेतवः।।17।।

**अनुवाद** :– प्रधान, पुरूष, व्यक्त और काल–ये {भगवान विष्णु के} रूप पृथक्–पृथक् संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के प्रकाश तथा उत्पादन में कारण हैं।।17।।

**(उल्लेख संख्या - 9** अध्याय 2 श्लोक 18 (प्रथम अंश)

व्यक्तं विष्णुस्तथाव्यक्तं पुरूषः काल एव च। क्रीडतो बालकस्येव चेष्टां तस्य निशामय।।18।।

**अनुवाद** :– भगवान् विष्णु जो व्यक्त, अव्यक्त, पुरूष और काल रूप से स्थित होते हैं, इसे उनकी बालवत् क्रीडा ही समझो।।18।।

**(उल्लेख संख्या - 10)** अध्याय 2 श्लोक 23 (प्रथम अंश)

नाहो न रात्रिर्न नभो न भूमि र्नासीत्तमोज्योतिरभूच्च नान्यत्।
श्रोत्रादिबुद्ध्यानुपलभ्यमेकं प्राधानिकं ब्रह्म पुमांस्तदासीत्।।23।।

**अनुवाद :- 'उस समय (प्रलयकालमें) न दिन था, न रात्रि थी, न आकाश था, न पृथ्वी थी,** न अन्धकार था, न प्रकाश था और न इनके अतिरिक्त कुछ और ही था। बस, श्रोत्रादि इन्द्रियों और **बुद्धि आदि का अविषय एक प्रधान ब्रह्म और पुरूष ही था'**।।23।।

**(उल्लेख संख्या - 11)** अध्याय 2 श्लोक 24 (प्रथम अंश)

विष्णोः स्वरूपात्परतो हि ते द्वे रूपे प्रधानं पुरूषश्च विप्र।
तस्यैव तेऽन्येन धृते वियुक्ते रूपान्तरं तद्द्विज कालसंज्ञम्।।24।।

**अनुवाद :- हे विप्र! विष्णु के परम (उपाधिरहित) स्वरूप से प्रधान और पुरूष-ये दो रूप हुए;** उसी (विष्णु) के जिस अन्य रूप के द्वारा वे दोनों {सृष्टि और प्रलयकाल में} संयुक्त और वियुक्त होते है, उस रूपान्तरका ही नाम 'काल' है।।24।।

**(उल्लेख संख्या - 12)** अध्याय 2 श्लोक 25 (प्रथम अंश)

प्रकृतौ संस्थितं व्यक्तमतीतप्रलये तु यत्। तस्मात्प्राकृतसंज्ञोऽयमुच्यते प्रतिसञ्चरः।।25।।

**अनुवाद** :– बीते हुए प्रलयकाल में यह व्यक्त प्रपञ्च प्रकृति में लीन था, इसलिये प्रपञ्चके इस प्रलय को प्राकृत प्रलय कहते हैं।।25।।

**(उल्लेख संख्या - 13)** अध्याय 2 श्लोक 26 (प्रथम अंश)

अनादिर्भगवान्कालो नान्तोऽस्य द्विज विद्यते। अव्युच्छिन्नास्ततस्त्वेते सर्गस्थित्यन्तसंयमाः।।26।।

**अनुवाद** :– हे द्विज! कालरूप भगवान् अनादि हैं, इनका अन्त नहीं है इसलिए संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी कभी नहीं रूकते {वे प्रवाह रूप से निरन्तर होते रहते हैं}।।26।।

**(उल्लेख संख्या - 14)** अध्याय 2 श्लोक 27 (प्रथम अंश)

गुणसाम्ये ततस्तस्मिन्पृथक्पुंसि व्यवस्थिते। कालस्वरूपं तद्विष्णोर्मैत्रेय परिवर्त्तते।।27।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! प्रलयकाल में प्रधान (प्रकृति) के साम्यावस्था में स्थित हो जाने पर और पुरूष के प्रकृति से पृथक् स्थित हो जाने पर **विष्णु भगवान् का काल रूप** {इन दोनों को धारण करने के लिये} **प्रवृत्त होता है**।।27।।

**(उल्लेख संख्या - 15)** अध्याय 2 श्लोक 28–29 (प्रथम अंश)

ततस्तु तत्परं ब्रह्म परमात्मा जगन्मयः। सर्वगः सर्वभूतेशः सर्वात्मा परमेश्वरः।।28।।
प्रधानपुरूषौ चापि प्रविश्यात्मेच्छया हरिः। क्षोभयामास सम्प्राप्ते सर्गकाले व्ययाव्ययौ।।29।।

**अनुवाद** :– तदनन्तर {सर्गकाल उपस्थित होने पर} उन परब्रह्म परमात्मा विश्वरूप सर्वव्यापी सर्वभूतेश्वर सर्वात्मा **परमेश्वर ने अपनी इच्छा से विकारी प्रधान और अविकारी पुरूष में प्रविष्ट होकर उनको क्षोभित किया**।।28–29।।

**(उल्लेख संख्या - 16)** अध्याय 2 श्लोक 30 (प्रथम अंश)

यथा सन्निधिमात्रेण गन्धः क्षोभाय जायते। मनसो नोपकर्तृत्वात्तथाऽसौ परमेश्वरः।।30।।

**अनुवाद** :– जिस प्रकार क्रियाशील न होने पर भी गन्ध अपनी सन्निधिमात्रसे ही मन को क्षुभित कर देता है **उसी प्रकार परमेश्वर अपनी सन्निधिमात्र से ही प्रधान और पुरूष को प्रेरित करते हैं**।।30।।

**(उल्लेख संख्या - 17)** अध्याय 2 श्लोक 31 (प्रथम अंश)

स एव क्षोभको ब्रह्मन् क्षोभ्यश्च पुरूषोत्तमः। स सङ्कोचविकासाभ्यां प्रधानत्वेऽपि च स्थितः।।31।।

**अनुवाद :- हे ब्रह्मन्! वह पुरूषोत्तम ही इनको क्षोभित करने वाले हैं** और वे ही क्षुब्ध होते हैं तथा संकोच (साम्य) और विकास (क्षोभ) युक्त

प्रधानरूप से भी वे ही स्थित हैं।।31।।

**(उल्लेख संख्या - 18)** अध्याय 2 श्लोक 32 (प्रथम अंश)

विकासाणुस्वरूपैश्च ब्रह्मरूपादिभिस्तथा। व्यक्तस्वरूपश्च तथा विष्णुः सर्वेश्वरेश्वरः।।32।।

**अनुवाद :- ब्रह्मादि समस्त ईश्वरोंके ईश्वर वे विष्णु ही समष्टि-व्यष्टिरूप, ब्रह्मादि जीवरूप तथा महत्तत्त्वरूप से स्थित हैं।**।32।।

**(उल्लेख संख्या - 19)** अध्याय 2 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

तत्क्रमेण विवृद्धं सज्जलबुद्‌बुदवत्समम्। भूतेभ्योऽण्डं महाबुद्धे महत्तदुदकेशयम्। प्राकृतं ब्रह्मरूपस्य विष्णोः स्थानमनुत्तमम्।।55।।

**अनुवाद :- हे महाबुद्धे! जल के बुलबुले के समान क्रमशः भूतों से बड़ा हुआ वह गोलाकार और जलपर स्थित महान् अण्ड ब्रह्म (हिरण्यगर्भ) रूप विष्णु का अति उत्तम प्राकृत आधार हुआ।**।55।।

**(उल्लेख संख्या - 20)** अध्याय 2 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

तत्राव्यक्तस्वरूपोऽसौ व्यक्तरूपो जगत्पतिः। विष्णुर्ब्रह्मस्वरूपेण स्वयमेव व्यवस्थितः।।56।।

**अनुवाद :- उसमें वे अव्यक्त-स्वरूप जगत्पति विष्णु व्यक्त हरिण्यगर्भरूपसे स्वयं ही विराजमान हुए**।।56।।

**(उल्लेख संख्या - 21)** अध्याय 2 श्लोक 61 (प्रथम अंश)

जुषन् रजो गुणं तत्र स्वयं विश्वेश्वरो हरिः। ब्रह्मा भूत्वास्य जगतो विसृष्टौ सम्प्रवर्त्तते।।61।।

**अनुवाद :- उसमें स्थित हुए स्वयं विश्वेश्वर भगवान् विष्णु ब्रह्मा होकर रजोगुण का आश्रय लेकर इस संसार की रचना में प्रवृत्त होते हैं।**

**(उल्लेख संख्या - 22)** अध्याय 9 श्लोक 40 से 41 (प्रथम अंश)

नमामि सर्वं सर्वेशमनन्तमजमव्ययम्। लोकधाम धराधारमप्रकाशमभेदिनम्।।40।।

नारायणमणीयांसमशेषाणामणीयसाम्। समस्तानां गरिष्ठं च भूरादीनां गरीयसाम्।।41।।

**अनुवाद** :– ब्रह्मा जी कहने लगे–जो समस्त अणुओं से भी अणु और पृथ्वी आदि समस्त गुरुओं (भारी पदार्थों) से भी गुरु (भारी) है उन निखिललोकविश्राम, पृथ्वी के आधारस्वरूप, अप्रकाश्य, अभेद्य, सर्वरूप, सर्वेश्वर, अनन्त, अज और अव्यय नारायण को मैं नमस्कार करता हूँ।।40–41।।

**(उल्लेख संख्या - 23)** अध्याय 9 श्लोक 53 (प्रथम अंश)

यस्यायुतायुतांशांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता। परब्रह्मस्वरूपं यत्प्रणमामस्तमव्ययम्।।53।।

**अनुवाद** :– जिसके अयुतांश (दस हजारवें अंश) के अयुतांश में यह विश्वरचना की शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अव्ययको हम प्रणाम करते हैं ।।53।।

**(उल्लेख संख्या - 24)** अध्याय 9 श्लोक 54 (प्रथम अंश)

यद्योगिनः सदोद्युक्ताः पुण्यपापक्षयेऽक्षयम्। पश्यन्ति प्रणवे चिन्त्यं तद्विष्णोः परमं पदम्।।54।।

**अनुवाद** :– नित्य–युक्त योगिगण अपने पुण्य–पापादिका क्षय हो जानेपर **ॐकारद्वारा चिन्तनीय जिस अविनाशी पदका साक्षात्कार करते हैं वही भगवान् विष्णु का परमपद है**।।54।।

**(उल्लेख संख्या - 25)** अध्याय 9 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

यन्न देवा न मुनयो न चाहं न च शङ्करः।जानन्ति परमेशस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।।55।।

**अनुवाद :- जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं-कोई भी नहीं जान सकते वही परमेश्वर श्री विष्णु का परमपद है**।।55।।

**(उल्लेख संख्या - 26)** अध्याय 9 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

शक्तयो यस्य देवस्य ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाः। भवन्त्यभूतपूर्वस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।।56।।

**अनुवाद** :– **जिस अभूतपूर्व देवकी ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप शक्तियाँ हैं वही भगवान् विष्णुका परमपद है**।।56।।

**(उल्लेख संख्या - 27)** अध्याय 9 श्लोक 57 (प्रथम अंश)

सर्वेश सर्वभूतात्मन्सर्व सर्वाश्रयाच्युत। प्रसीद विष्णो भक्तानां व्रज नो दृष्टिगोचरम्।।57।।

**अनुवाद** :– हे सर्वेश्वर! हे सर्व भूतात्मन्! हे सर्वरूप! हे सर्वाधार! हे अच्युत! हे विष्णो! हम भक्तोंपर प्रसन्न होकर हमें दर्शन दीजिये।।57।।

**(उल्लेख संख्या - 28)** अध्याय 6 श्लोक 32–33

संसिद्धायां तु वार्तायां प्रजाः सृष्टा प्रजापतिः। मर्यादां स्थापयामास यथास्थानं यथागुणम्।।32।।

वर्णानामाश्रमाणां च धर्मान्धर्मभृतां वर। लोकांश्च सर्ववर्णानां सम्यग्धर्मानुपालिनाम्।।33।।

**अनुवाद** :– हे धर्मवानोंमें श्रेष्ठ मैत्रेय! इस प्रकार कृषि आदि जीविकाके साधनों के निश्चित हो जाने पर प्रजापति ब्रह्माजी ने प्रजा की रचना कर उनके स्थान और गुणों के अनुसार मर्यादा, वर्ण और आश्रमों के धर्म तथा अपने धर्म का भली प्रकार पालन करने वाले समस्त वर्णों के लोक

आदिकी स्थापना की।।32–33।।

**उल्लेख संख्या - 29)** अध्याय 6 श्लोक 34 (प्रथम अंश)

प्राजापत्यं ब्राह्मणानां स्मृतं स्थानं क्रियावताम्। स्थानमैन्द्रं क्षत्रियाणां संग्रामेषवनिवर्तिनाम्।।34।।

**अनुवाद :- कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों का स्थान पितृलोक है, युद्ध-क्षेत्र से कभी न हटनेवाले क्षत्रियों का इन्द्रलोक है।।34।।**

**(उल्लेख संख्या - 30)** अध्याय 6 श्लोक 35 (प्रथम अंश)

वैश्यानां मारूतं स्थानं स्वधर्ममनुवर्तिनाम्। गान्धर्वं शुद्रजातीनां परिचर्यानुवर्तिनाम्।।35।।

**अनुवाद** :– तथा अपने धर्म का पालन करने वाले वैश्योंका वायुलोक और सेवाधर्मपरायण शुद्रोंका गन्धर्वलोक है।।35।।

**(उल्लेख संख्या - 31)** अध्याय 6 श्लोक 36 (प्रथम अंश)

अष्टाशीतिसहस्राणि मुनीनामूर्ध्वरेतसाम्। स्मृतं तेषां तु यत्स्थानं तदेव गुरुवासिनाम्।।36।।

**अनुवाद :- अट्ठासी हजार ऊर्ध्वरेता मुनि हैं; उनका जो स्थान बताया गया है वही गुरुकुलवासी ब्रह्मचारियों का स्थान है।।36।।**

**(उल्लेख संख्या - 32)** अध्याय 6 श्लोक 37–38 (प्रथम अंश)

सप्तर्षीणां तु यत्स्थानं स्मृतं तद्वै वनौकसाम्। प्राजापत्यं गृहस्थानां न्यासिनां ब्रह्मसंज्ञितम्।।37।।

योगिनाममृतं स्थानं स्वात्मसन्तोषकारिणाम्।।38।।

**अनुवाद :- इसी प्रकार वनवासी वानप्रस्थोंका स्थान सप्तर्षिलोक, गृहस्थोंका पितृलोक और संन्यासियों का ब्रह्मलोक है तथा आत्मानुभवसे तृप्त योगियोंका स्थान अमरपद (मोक्ष) है।।37–38।।**

**(उल्लेख संख्या - 33)** अध्याय 6 श्लोक 39 (प्रथम अंश)

एकान्तिनः सदा ब्रह्मध्यायिनो योगिनश्च ये। तेषां तु परमं स्थानं यत्तत्पश्यन्ति सूरयः।।39।।

**अनुवाद :- जो निरन्तर एकान्तसेवी और ब्रह्मचिन्तनमें मग्न रहनेवाले योगिजन हैं उनका जो परमस्थान है उसे पण्डितजन ही देख पाते हैं।।39।।**

**(उल्लेख संख्या - 34)** अध्याय 22 श्लोक 36 (प्रथम अंश)

कालेन न विना ब्रह्मा सृष्टिनिष्पादको द्विज। न प्रजापतयः सर्वे ने चैवाखिलजन्तवः।।36।।

**अनुवाद :- हे द्विज! काल के बिना ब्रह्मा, प्रजापति एवं अन्य समस्त प्राणी भी सृष्टि-रचना नहीं कर सकते {अतः भगवान् कालरूप विष्णु ही सर्वदा सृष्टिके कारण हैं}**।।36।।

**(उल्लेख संख्या - 35)** अध्याय 22 श्लोक 53 (प्रथम अंश)

एवंप्रकारममलं नित्यं व्यापकमक्षयम्। समस्तहेयरहितं विष्ण्वाख्यं परमं पदम्।।53।।

**अनुवाद** :– इस प्रकार का वह निर्मल, नित्य, व्यापक, अक्षय और समस्त हेय गुणों से रहित **विष्णु नामक परमपद है**।।53।।

**(उल्लेख संख्या - 36)** अध्याय 22 श्लोक 54 (प्रथम अंश)

तद्ब्रह्म परमं योगी यतो नावर्त्तते पुनः। श्रयत्यपुण्योपरमे क्षीणक्लेशोऽतिनिर्मलः।।54।।

**अनुवाद :- पुण्य-पापका क्षय और क्लेशों की निवृत्ति होने पर जो अत्यन्त निर्मल हो जाता है वही योगी उस परब्रह्मका आश्रय लेता है जहाँसे वह फिर नहीं लौटता**।।54।।

**(उल्लेख संख्या - 37)** अध्याय 22 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

द्वे रूपे ब्रह्मणस्तस्य मूर्त्तं चामूर्तमेव च। क्षराक्षरस्वरूपे ते सर्वभूतेषव्वस्थिते।।55।।

**अनुवाद** :– उस ब्रह्मके मूर्त और अमूर्त दो रूप हैं, जो क्षर और अक्षररूपसे समस्त प्राणियों में स्थित हैं।।55।।

**{विशेष :- इस (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 55 का अनुवाद उचित नहीं किया गया है कृप्या अनुवाद पढ़ें जो उचित है**

**अनुवाद :- जिस तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म के विषय में श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9 तथा 10 अध्याय 15 श्लोक 1,4,16 तथा 17 में वर्णन है। उसी के विषय में श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 54-55 में भी किया है श्लोक 54 में कहा है कि (तत् परमम् ब्रह्म) उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की साधना करने वाले योगी अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पुरूषोत्तम के विषय में श्लोक 55 में कहा है कि ''उस परम अक्षर ब्रह्म के दो रूप है मूर्त अर्थात् साकार तथा अमूर्त अर्थात् अव्यक्त क्योंकि पूर्ण ब्रह्म दूर देश**

**में तेजोमय शरीर युक्त है। जब वह परम अक्षर ब्रह्म इस लोक में आता है तो अन्य हल्के तेज युक्त शरीर धारण करके आता है। इसलिए मूर्त तथा अमूर्त'' कहा है और वही परम अक्षर ब्रह्म ही क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) रूपी प्रभुओं तथा सर्व प्राणियों को व्यवस्थित किए हुए है। जैसे श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में कहा है क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दो परमात्मा इस लोक में जाने जाते हैं। इसी प्रकार दो स्थिति इस लोक में प्राणियों की हैं कि स्थूल शरीर सबका नाशवान है आत्मा सब की अविनाशी है। (उत्तम पुरूष तू अन्यः) परन्तु वास्तव में श्रेष्ट परमात्मा तो इन दोनों से अन्य (भिन्न) है वही वास्तव में अविनाशी है तथा सर्व का पालन कर्ता है}**

**(उल्लेख संख्या - 38)** अध्याय 22 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

अक्षरं तत्वरं ब्रह्म क्षरं सर्वमिदं जगत्। एकदेशस्थितस्यागेर्ज्योत्स्ना विस्तारिणी यथा। परसय ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमखिलं जगत्।।56।।

**अनुवाद :- अक्षर ही वह परब्रह्म है** और क्षर सम्पूर्ण जगत् है। जिस प्रकार एकदेशीय अग्निका प्रकाश सर्वत्र फैला रहता है। **उसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् परब्रह्म की ही शक्ति है।** ।56।।

**(उल्लेख संख्या - 39)** अध्याय 22 श्लोक 57 (प्रथम अंश)

तत्राप्यासन्नदूरत्वाद्बहुत्वस्वल्पतामयः। ज्योत्स्नाभेदोऽस्ति तच्छक्तेस्तनद्वन्मैत्रेय विद्यते।।57।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! अग्नि की निकटता और दूरताके भेदसे जिस प्रकार उसके प्रकाशमें भी अधिकता और न्यूनताका भेद रहता है। उसी प्रकार ब्रह्मकी शक्ति में भी तारतम्य है।।57।।

**(उल्लेख संख्या - 40)** अध्याय 22 श्लोक 58 (प्रथम अंश)

ब्रह्मविष्णुशिवा ब्रह्मन्प्रधाना ब्रह्मशक्तयः। ततश्च देवा मैत्रेय न्यूना दक्षादयस्ततः।।58।।

**अनुवाद :- हे ब्रह्मन्! ब्रह्मा, विष्णु और शिव ब्रह्मकी प्रधान शक्तियाँ हैं उनसे न्यून देवगण हैं तथा उनके अनन्तर दक्ष आदि प्रजापतिगण हैं** ।।58।।

**(उल्लेख संख्या - 41)** अध्याय 22 श्लोक 59 (प्रथम अंश)

ततो मनुष्याः पशवो मृगपक्षिसरीसृपाः। न्यूनान्न्यूनतराश्चैव वृक्ष गुल्मादयस्तथा।।59।।

**अनुवाद :- उनसे भी न्यून मनुष्य, पशु,** पक्षी, मृग और सरीसृपादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्ष, गुल्म और लता आदि हैं।।59।।

**(उल्लेख संख्या - 42)** अध्याय 22 श्लोक 63 (प्रथम अंश)

स परः परशक्तीनां ब्रह्मणः समनन्तरम्। मूर्त्तं ब्रह्म महाभाग सर्वब्रह्ममयो हरिः।।63।।

**अनुवाद :- हे महाभाग! हे सर्वब्रह्ममय श्री विष्णुभगवान् समस्त परा शक्तियों में प्रधान और ब्रह्मके अत्यन्त निकटवर्ती मूर्त-ब्रह्मस्वरूप हैं**।।63।।

**(उल्लेख संख्या - 43)** अध्याय 22 श्लोक 80 (प्रथम अंश)

भूर्लोकोऽथ भुवर्लोकः स्वर्लोको मुनिसत्तम। महर्जनस्तपः सत्यं सप्त लोका इमे विभुः।।80।।

**अनुवाद** :– हे मुनिश्रेष्ठ! भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक तथा मह, जन, तप, और सत्य आदि सातों लोक भी सर्वव्यापक भगवान् ही हैं।।80।।

**(उल्लेख संख्या - 44)** अध्याय 22 श्लोक 81 (प्रथम अंश)

लोकात्ममूर्त्तिः सर्वेषां पूर्वेषामपि पूर्वजः। आधारः सर्वविद्यानां स्वयमेव हरिः स्थितः।।81।।

**अनुवाद :- सभी पूर्वजों के पूर्वज तथा समस्त विद्याओं के आधार श्रीहरि ही स्वयं लोकमयस्वरूप से स्थित हैं**।।81।।

**(उल्लेख संख्या - 45)** अध्याय 22 श्लोक 82 (प्रथम अंश)

देवमानुषपश्वादिस्वरूपैर्बहुभिः स्थितः। ततः सर्वेश्वरोऽनन्तो भूतमूर्तिरमूर्त्तिमान्।।82।।

**अनुवाद :- निराकार और सर्वेश्वर श्रीअनन्त ही भूतस्वरूप होकर देव, मनुष्य और पशु आदि नानारूपोंसे स्थित हैं।।82।।**

**(उल्लेख संख्या - 46)** अध्याय 7 श्लोक 40 (द्वितीय अंश)

स च विष्णुः परं ब्रह्म यतः सर्वमिदं जगत्। जगच्च यो यत्र चेदं यस्मिंश्च लयमेष्यति।।40।।

**अनुवाद** :– जिससे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है, जो स्वयं जगत्रूप से स्थित है, जिसमें यह स्थित है तथा जिसमें यह लीन हो जायगा वह परब्रह्म ही विष्णुभगवान् हैं।।40।।

**(उल्लेख संख्या - 47)** अध्याय 7 श्लोक 41 (द्वितीय अंश)

तद्ब्रह्म तत्परं धाम सदसत्परमं पदम्। यस्य सर्वमभेदेन यतश्चैतच्चराचरम्।।41।।

**अनुवाद :- वह ब्रह्म ही उन (विष्णु) का परमधाम (परस्वरूप) है, वह पद सत् और असत् दोनों से विलक्षण है तथा उससे अभिन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उससे उत्पन्न हुआ है।।41।।**

**(उल्लेख संख्या - 48)** अध्याय 1 श्लोक 83 (चतुर्थ अंश)

न ह्यादिमध्यान्तमजस्य यस्य विझ्मो वयं सर्वमयस्य धातुः।

न च स्वरूपं न परं स्वभावं न चैव सारं परमेश्वरस्य।।83।।

**अनुवाद :- श्रीब्रह्माजीने कहा-जिस अजन्मा, सर्वमय, विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते**।।83।।

**(उल्लेख संख्या - 49)** अध्याय 1 श्लोक 84 (चतुर्थ अंश)

कलामुहूर्त्तादिमयश्च कालो न यद्विभूतेः परिणामहेतुः।

अजन्मनाशस्य सदैकमूर्त्तेरनामरूपस्य सनातनस्य।।84।।

**अनुवाद** :– कलामुहूर्त्तादिमय काल भी जिसकी विभूतिके परिणाम का कारण नहीं हो सकता, जिसका जन्म और मरण नहीं होता, जो सनातन और सर्वदा एकरूप है तथा जो नाम और रूपसे रहित है।।84।।

**(उल्लेख संख्या - 50)** अध्याय 1 श्लोक 85 (चतुर्थ अंश)

यस्य प्रसादादहमच्युतस्य भूतः प्रजासृष्टिकरोऽन्तकारी।

क्रोधाच्च रूद्रः स्थितिहेतुभूतो यस्माच्च मध्ये पुरूषः परस्मात्।।85।।

**अनुवाद :- जिस अच्युतकी कृपासे मैं प्रजाका उत्पत्तिकर्ता हूँ, जिसके क्रोध से उत्पन्न हुआ रूद्र सृष्टि का अन्तकर्त्ता है तथा जिस परमात्मासे मध्यमें जगत्स्थितिकारी विष्णुरूप पुरूषका प्रादुर्भाव हुआ है**।।85।।

**(उल्लेख संख्या - 51)** अध्याय 1 श्लोक 86 (चतुर्थ अंश)

मद्रूपमास्थाय सृजत्यजो यः स्थितौ च योऽसौ पुरूषस्वरूपी।

रूद्रस्वरूपेण च योऽत्ति विश्वं धत्तें तथानन्तवपुस्समस्तम्।।86।।

**अनुवाद :- जो मेरा रूप धारणकर संसारकी रचना करता है, स्थितिके समय जो पुरूषरूप (विष्णु) है तथा जो रूद्ररूप से सम्पूर्ण विश्वका ग्रास कर जाता है** एवं अनन्तरूपसे सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।।86।।

**(उल्लेख संख्या - 52)** अध्याय 1 श्लोक 35 (पंचम अंश)

द्वे विद्ये त्वमनामनाय परा चैवापरा तथा। त एव भवतो रूपे मूर्तामूर्तात्मिके प्रभो।।35।।

**अनुवाद** :– ब्रह्माजी बोले–हे वेदवाणीके अगोचर प्रभो! परा और अपरा–ये दोनों विद्याएँ आप ही हैं। हे नाथ! वे दोनों आपहीके मूर्त और अमूर्त रूप हैं।।35।।

**(उल्लेख संख्या - 53** अध्याय 1 श्लोक 36 (पंचम अंश)

द्वे ब्रह्मणी त्वणीयोऽतिस्थूलात्मन्सर्व सर्ववित्। शब्दब्रह्म परं चैव ब्रह्म ब्रह्ममयस्य यत्।।36।।

**अनुवाद :- हे अत्यन्त सुक्ष्म! हे विराट्स्वरूप! हे सर्व! हे सर्वज्ञ! शब्दब्रह्म और परब्रह्म-ये दोनों आप ब्रह्ममय के ही रूप हैं।** ।36।।

**(उल्लेख संख्या - 54)** अध्याय 7 श्लोक 1 (द्वितीय अंश)

श्रीमैत्रय उवाच

कथितं भूतलं ब्रह्मन्ममैतदखिलं त्वया।
भुवर्लोकादिकाँल्लोकाञ्छ्रोतुमिच्छाम्यहं मुने।।1।।

**अनुवाद** :– श्री मैत्रेयजी बोले–ब्रह्मन्! आपने मुझसे समस्त भूमण्डलका वर्णन किया। हे मुने! अब मैं भुवर्लोक आदि समस्त लोकोंके विषयमें सुनना चाहता हूँ।।1।।

**(उल्लेख संख्या - 55)** अध्याय 7 श्लोक 2 (द्वितीय अंश)

तथैव ग्रहसंस्थानं प्रमाणानि यथा तथा। समाचक्ष्व महाभाग तन्मह्यं परिपृच्छते।।2।।

**अनुवाद** :– हे महाभाग! मुझ जिज्ञासु से आप ग्रहगणकी स्थिति तथा उनके परिणाम आदि का यथावत् वर्णन कीजिये।।2।।

**(उल्लेख संख्या - 56)** अध्याय 7 श्लोक 3 (द्वितीय अंश)

श्रीपराशर उवाच

रविचन्द्रमसोर्यावन्मयूखैरवभास्यते। ससमुद्रसरिच्छैला तावती पृथिवी स्मृता।।3।।

**अनुवाद** :– श्री पराशरजी बोले–जितनी दूरतक सूर्य और चन्द्रमा की किरणों का प्रकाश जाता है; समुद्र, नदी और पर्वतादिसे युक्त उतना प्रदेश पृथ्वी कहलाता है।।3।।

**(उल्लेख संख्या - 57)** अध्याय 7 श्लोक 4 (द्वितीय अंश)

यावत्प्रमाणा पृथिवी विस्तारपरिमण्डलात्। नभस्तावत्प्रमाणं वै व्यासमण्डलतो द्विज।।4।।

**अनुवाद** :– हे द्विज! जितना पृथ्वीका विस्तार और परिमण्डल (घेरा) है उतना ही विस्तार और परिमण्डल भुवर्लोकका भी है।।4।।

**(उल्लेख संख्या - 58)** अध्याय 7 श्लोक 5 (द्वितीय अंश)

भूमेर्योजनलक्षे तु सौरं मैत्रेय मण्डलम्। लक्षाद्दिवाकरस्यापि मण्डलं शशिनः स्थितम्।।5।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! **पृथ्वी से एक लाख योजन दूर सूर्यमण्डल है और सूर्यमण्डल से भी एक लक्ष योजनके अन्तरपर चन्द्रमण्डल है।।5।।**

**(उल्लेख संख्या - 59)** अध्याय 7 श्लोक 6 (द्वितीय अंश)

पूर्णे शतसहस्रे तु योजनानां निशाकरात्। नक्षत्रमण्डलं कृत्स्नमुपरिष्टात्प्रकाशते।।6।।

**अनुवाद :- चन्द्रमा से पूरे सौ हजार (एक लाख) योजन ऊपर सम्पूर्ण नक्षत्रमण्डल प्रकाशित हो रहा है।।6।।**

**(उल्लेख संख्या - 60)** अध्याय 7 श्लोक 7 (द्वितीय अंश)

द्वे लक्षे चोत्तरे ब्रह्मन् बुधो नक्षत्रमण्डलात्। तावत्प्रमाणभागे तु बुधस्याप्युशनाः स्थितः।।7।।

**अनुवाद** :– हे ब्रह्मन्! नक्षत्रमण्डल से दो लाख योजन ऊपर बुध और बुध से भी दो लक्ष योजन ऊपर शुक्र स्थित है।।7।।

**(उल्लेख संख्या - 61)** अध्याय 7 श्लोक 8 (द्वितीय अंश)

अङ्गारकोऽपि शुक्रस्य तत्प्रमाणे व्यवस्थितः। लक्षद्वये तु भौमस्य स्थितो देवपुरोहितः।।8।।

**अनुवाद** :– शुक्र से इतनी ही दूरी पर मंगल है और मंगल से भी दो लाख योजन ऊपर बृहस्पतिजी हैं।।8।।

**(उल्लेख संख्या - 62)** अध्याय 7 श्लोक 9 (द्वितीय अंश)

शौरिर्बृहस्पतेश्चोर्ध्वं द्विलक्षे समवस्थितः। सप्तर्षिमण्डलं तस्माल्लक्षमेकं द्विजोत्तम।।9।।

**अनुवाद** :– हे द्विजोत्तम! बृहस्पतिजी से दो लाख योजन ऊपर शनि हैं और शनि से एक लक्ष योजनके अन्तर पर सप्तर्षिमण्डल है।।9।।

**(उल्लेख संख्या - 63)** अध्याय 7 श्लोक 10 (द्वितीय अंश)

ऋषिभ्यस्तु सहस्राणां शतादूर्ध्वं व्यवस्थितः।मेढीभूतः समस्तस्य ज्योतिश्चक्रस्य वै ध्रुवः।।10।।

**अनुवाद** :– तथा सप्तर्षियों से भी सौ हजार योजन ऊपर समस्त ज्योतिश्चक्रकी नाभिरूप ध्रुवमण्डल स्थित है।।10।।

**(उल्लेख संख्या - 64)** अध्याय 7 श्लोक 11 (द्वितीय अंश)

त्रैलोक्यमेतत्कथितमुत्सेधेन महामुने। इज्याफलस्य भूरेषा इज्या चात्र प्रतिष्ठिता।।11।।

**अनुवाद :- हे महामुने! मैंने तुमसे यह त्रिलोकी की उच्चता के विषय में वर्णन किया। यह त्रिलोकी यज्ञफलकी भोग-भूमि है और यज्ञानुष्ठानकी स्थिति इस भारतवर्षमें ही है।**।11।।

**(उल्लेख संख्या - 65)** अध्याय 7 श्लोक 12 (द्वितीय अंश)

ध्रुवादूर्ध्वं महर्लोको यत्र ते कल्पवासिनः। एकयोजनकोटिस्तु यत्र ते कल्पवासिनः।।12।।

**अनुवाद :- ध्रुव से एक करोड़ योजन ऊपर महर्लोक है, जहाँ कल्पान्त-पर्यन्त रहने वाले भृगु आदि सिद्धगण रहते हैं।**।12।।

**(उल्लेख संख्या - 66)** अध्याय 7 श्लोक 13 (द्वितीय अंश)

द्वे कोटी तु जनो लोको यत्र ते ब्रह्मणः सुताः। सनन्दनाद्याः प्रथिता मैत्रेयामलचेतसः।।13।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! उससे भी दो करोड़ योजन ऊपर जनलोक है जिसमें ब्रह्माजी के प्रख्यात पुत्र निर्मलचित्त सनकादि रहते हैं।।13।।

**(उल्लेख संख्या - 67)** अध्याय 7 श्लोक 14 (द्वितीय अंश)

चतुर्गुणोत्तरे चोर्ध्वं जनलोकात्तपः स्थितम्। वैराजा यत्र ते देवाः स्थिता दाहविवर्जिताः।।24।।

**अनुवाद** :– जनलोकसे चौगुना अर्थात् आठ करोड़ योजन ऊपर तपलोक है; वहाँ वैराज नामक देवगणों का निवास है जिनका कभी दाह नहीं होता।।14।।

**(उल्लेख संख्या - 68)** अध्याय 7 श्लोक 15 (द्वितीय अंश)

षड्गुणेन तपोलोकात्सत्यलोको विराजते। अपुनर्मारका यत्र ब्रह्मलोको हि स स्मृतः।।15।।

**अनुवाद :- तपलोकसे छः गुना अर्थात् बारह करोड़ योजनके अन्तरपर सत्यलोक सुशोभित है जो ब्रह्मलोक भी कहलाता है** और जिसमें फिर न मरनेवाले अमरगण निवास करते हैं।।15।।

**(उल्लेख संख्या - 69)** अध्याय 7 श्लोक 16 (द्वितीय अंश)

पादगम्यन्तु यत्किञ्चिद्वस्त्वस्ति पृथिवीमयम्। स भूर्लोकः समाख्यातो विस्तरोऽस्य मयोदितः।।16।।

**अनुवाद** :– जो भी पार्थिव वस्तु चरणसञ्चार के योग्य है वह भुर्लोक

ही है। उसका विस्तार मैं कह चुका।।16।।

**(उल्लेख संख्या - 70)** अध्याय 7 श्लोक 17 (द्वितीय अंश)

भूमिसूर्यान्तरं यच्च सिद्धादिमुनिसेवितम्। भुवर्लोकस्तु सोऽप्युक्तो द्वितीयो मुनिसत्तम।।17।।

**अनुवाद** :– हे मुनिश्रेष्ठ! पृथिवी और सूर्य के मध्यमें जो सिद्धगण और मुनिगण–सेवित स्थान है, वही दूसरा भुवर्लोक है।।17।।

**(उल्लेख संख्या - 71)** अध्याय 7 श्लोक 18 (द्वितीय अंश)

ध्रुवसूर्यान्तरं यच्च नियुतानि चतुर्दश। स्वर्लोकः सोऽपि गदितो लोकसंस्थानचिन्तकैः।।18।।

**अनुवाद :- सूर्य और ध्रुव के बीच में जो चौदह लक्ष योजनका अन्तर है, उसीको लोकस्थितिका विचार करने वालोंने स्वर्लोक कहा है**।।18।।

**(उल्लेख संख्या - 72)** अध्याय 7 श्लोक 19 (द्वितीय अंश)

त्रैलोक्यमेतत्कृतकं मैत्रेय परिपठ्यते। जनस्तपस्तथा सत्यमिति चाकृतकं त्रयम्।।19।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! ये (भूः, भुवः, स्वः) 'कृतक' त्रैलोक्य कहलाते हैं और जन, तप तथा सत्य–ये तीनों 'अकृतक' लोक हैं।।19।।

**(उल्लेख संख्या - 73)** अध्याय 7 श्लोक 20 (द्वितीय अंश)

कृतकाकृतयोर्मध्ये महर्लोक इति स्मृतः। शून्यो भवति कल्पान्ते योऽत्यन्तं न विनश्यति।।20।।

**अनुवाद** :– इन कृतक और अकृतक त्रिलोकियों के मध्यमें **महर्लोक कहा जाता है, जो कल्पान्त में केवल जनशून्य हो जाता है,** अत्यन्त नष्ट नहीं होता [इसलिए यह 'कृतकाकृत' कहलाता है]।।20।।

**(उल्लेख संख्या - 74)** अध्याय 7 श्लोक 21 (द्वितीय अंश)

एते सप्त मया लोका मैत्रेय कथितास्तव। पातालानि च सप्तैव ब्रह्माण्डस्यैष विस्तरः।।21।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! इस प्रकार मैंने तुमसे **ये सात लोक और सात ही पाताल कहे। इस ब्रह्माण्ड का बस इतना ही विस्तार है**।।21।।

**(उल्लेख संख्या - 75)** अध्याय 7 श्लोक 22 (द्वितीय अंश)

एतदण्डकटाहेन तिर्यक् चोर्ध्वमधस्तथा। कपित्थस्य यथा बीजं सर्वतो वै समावृतम्।।22।।

**अनुवाद** :– यह ब्रह्माण्ड कपित्थ (कैथे) के बीजके समान ऊपर–नीचे

सब ओर अण्डकटाहसे घिरा हुआ है।।22।।

**(उल्लेख संख्या - 76)** अध्याय 7 श्लोक 23 (द्वितीय अंश)

दशोत्तरेण पयसा मैत्रेयाण्डं च तद्वृतम्। सर्वोऽम्बुपरिधानोऽसौ वह्निना वेष्टितो बहिः।।23।।

**अनुवाद** :– हे मैत्रेय! यह अण्ड अपने से दसगुने जल से आवृत है और वह जलका सम्पूर्ण आवरण अग्नि से घिरा हुआ है।।23।।

**(उल्लेख संख्या - 77)** अध्याय 7 श्लोक 24 (द्वितीय अंश)

वह्निश्च वायुना वायुमैत्रेय नभसा वृतः। भूतादिना नभः सोऽपि महता परिवेष्टितः। दशोत्तराण्यशेषाणि मैत्रेयैतानि सप्त वै।।24।।

**अनुवाद** :– अग्नि वायु से और वायु आकाश से परिवेष्टित है तथा आकाश भूतों के कारण तामस अहंकार और अहंकार महत्तत्वसे घिरा हुआ है। हे मैत्रेय! ये सातों उत्तरोत्तर एक–दूसरे से दसगुने हैं।।24।।

**(उल्लेख संख्या - 78)** अध्याय 7 श्लोक 25–26 (द्वितीय अंश)

महान्तं च समावृत्य प्रधानं समवस्थितम्। अनन्तस्य न तस्यान्तः संख्यानं चापि विद्यते।।25।।

तदनन्तमसंख्यातप्रमाणं चापि वै यतः। हेतुभूतमशेषस्य प्रकृतिः सा परा मुने।।26।।

**अनुवाद** :– महत्तत्वको भी प्रधानने आवृत कर रखा है। वह अनन्त है; तथा उसका न कभी अन्त (नाश) होता है और न कोई संख्या ही है; क्योंकि हे मुने! वह अनन्त, असंख्येय, अपरिमेय और सम्पूर्ण जगत्का कारण है और वही परा प्रकृति है।।25–26।।

**(उल्लेख संख्या - 79)** अध्याय 7 श्लोक 27 (द्वितीय अंश)

अण्डानां तु सहस्राणां सहस्राण्ययुतानि च। ईदृशानां तथा तत्र कोटिकोटिशतानि च।।27।।

**अनुवाद :- उसमें ऐसे-ऐसे हजारों, लाखों तथा सैकड़ों करोड़ ब्रह्माण्ड हैं।**।27।।

## ''श्री विष्णु पुराण के उपरोक्त उल्लेखों का सारांश''

**उपरोक्त श्री विष्णु पुराण के लेख से निम्न तथ्य स्पष्ट हुए :- 1. श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पारासर जी हैं जो श्री कृष्णद्वैपायन अर्थात् वेदव्यास जी के पूज्य पिता जी हैं। श्री वेद व्यास जी अठारह पुराणों के लेखक हैं। सर्व पुराणों तथा चारों वेदों, श्री मद्भगवत् गीता तथा श्री**

मद्भागवत सुधासागर के लेखक भी श्री वेद व्यास जी हैं। सर्व पुराणों का ज्ञान दाता श्री ब्रह्मा जी (पुत्र श्री काल रूपी ब्रह्म) हैं। अठारह पुराणों का ज्ञान एक बोध है अर्थात् एक ही ज्ञान है। जो ब्रह्मा जी द्वारा कहा गया है। उसी ज्ञान को अन्य ऋषियों ने श्री ब्रह्मा जी से सुना फिर उन्होंने अन्य को बताया फिर आगे से आगे वक्ता इस ज्ञान का प्रचार करने लगे तथा कुछ अपना अनुभव भी मिलाने लगे। श्री विष्णु पुराण में पुराण वक्ता श्री पारासर जी ने कहा है कि यह ज्ञान दक्षादि ऋषियों ने राजा पुरूकुत्स को सुनाया, पुरूकुत्स ने सारस्वत को सुनाया तथा सारस्वत ने मुझे (पारासर जी को) सुनाया जो श्री विष्णु पुराण नाम से श्री व्यास जी ने लीपिबद्ध किया। श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 56 में लिखा है कि ''जिस अभूतपूर्व देव की ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप शक्तियाँ हैं वही भगवान विष्णु का परमपद है'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 58 में लिखा है कि ''ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव, ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ हैं'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 1 श्लोक 36 में लिखा है कि ''शब्द ब्रह्म तथा परब्रह्म आप ब्रह्ममय अर्थात् ब्रह्म के ही रूप हैं'' फिर (द्वितीय अंश) अध्याय 7 श्लोक 41 में लिखा है कि वह ब्रह्म (तत् ब्रह्म) ही उन (विष्णु) का परम धाम है। वह पद सत् (अक्षर पुरूष) तथा असत् (क्षर पुरूष) से विलक्षण है तथा उस से भिन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उसी से उत्पन्न हुआ है।'' फिर (चतुर्थ अंश) अध्याय 1 श्लोक 85 में लिखा है कि ''श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पारासर जी ने कहा है कि श्री ब्रह्मा जी ने कहा ''मैं जो प्रजा की उत्पत्ति करता हूँ तथा रूद्र जो संहार करता है तथा जो विष्णु स्थिति करता है, हम उसी परमात्मा ब्रह्म से उत्पन्न हुए हैं'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 54 में लिखा है कि योगीजन ओंकार अर्थात् ओ३म् नाम द्वारा जिस का साक्षात्कार करते हैं वह श्री विष्णु का परमपद है।'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 55 में लिखा है कि ''जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं (ब्रह्मा) कोई भी नहीं जानते वह श्री विष्णु का परमपद है।''

श्री विष्णु पुराण के लेख से निष्कर्ष निकला कि :-

1. श्री ब्रह्मा जी (जिसने सर्व पुराणों का ज्ञान कहा है उसी को अन्य ने आगे से आगे बताया है) अल्पज्ञ हैं। क्योंकि वे कह रहे हैं (क) कि श्री विष्णु के परमपद के विषय मैं क्या शंकर व देवता व मुनिगण कोई नहीं

जानते। यह भी सिद्ध हुआ कि श्री शंकर जी व अन्य देवगण तथा मुनिजन भी अल्पज्ञ हैं अर्थात् पूर्ण ज्ञानी नहीं हैं।

(ख) उल्लेख संख्या (58-59) में श्री विष्णु पुराण के वक्ता अर्थात् श्री पारासर जी ने कहा है कि पृथ्वी से एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख किलोमीटर दूर सूर्य है सूर्य से एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख किलो मीटर दूर चन्द्रमा है। इस प्रकार चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी 24 लाख कि. मी. बनती है। जो श्री पारासर की प्रत्यक्ष अज्ञानता का प्रमाण। जिसमें सूर्य को पृथ्वी के अति निकटवर्ति कहा तथा चन्द्रमा को सूर्य से भी 12 लाख कि.मी. दूर कहा है। जबकि वर्तमान में खगोलविद्धों ने सिद्ध किया है कि चाँद, पृथ्वी के अति निकट है तथा पृथ्वी का उपग्रह है जो धरती के चारों और चक्र लगाता रहा है।

प्रमाण :- उपरोक्त श्री विष्णु पुराण उल्लेख संख्या 46, 48, 58, 59 में

2. श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव का उत्पत्ति करता ब्रह्म है जिस ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ ब्रह्मा-विष्णु-शिव हैं। भावार्थ है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से अन्य तथा शक्तिशाली है तथा ब्रह्मा,विष्णु व महेश का उत्पत्ति कर्ता अर्थात् पिता है।

प्रमाण :- उपरोक्त श्री विष्णु पुराण उल्लेख संख्या 26, 40, 42, 47, 50 में है।

3. अक्षर पुरूष को परब्रह्म कहते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 38 में

4. ब्रह्म लोक को सत्यलोक (सतलोक) कहते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 68 में

5. काल भगवान ही अपने अन्य ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के रूप धारण करके धोखा देता है।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या :- 51,1 में

6. क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म काल (जिसे असत् भी कहते हैं) तथा अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म (जिसे सत् भी कहते हैं) से अन्य परम अक्षर ब्रह्म है जो इन दोनों से विलक्षण अर्थात् निराला व समर्थ है। उसी परम अक्षर ब्रह्म से सर्व चराचर जगत् भिन्न हुआ है। श्री विष्णु पुराण का वक्ता श्री पारासर ऋषि तत्वज्ञानहीन है जिस कारण से ब्रह्म, को ही परब्रह्म तथा विष्णु तथा परम अक्षर ब्रह्म को भी ब्रह्म काल ही कह रहा है परन्तु

तथ्य स्पष्ट करते हैं कि पूर्ण परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म सर्व शक्तिमान सर्व का उत्पत्ति करता तथा सर्व को व्यवस्थित करने वाला है वही सर्व का पालन करता है तथा ब्रह्म काल (क्षर पुरूष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरूष) से अन्य (भिन्न) है। उसी परमदिव्य पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म (सत्यपुरूष) से सर्व चराचर जगत् उत्पन्न हुआ तथा भिन्न हुआ है। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ द्वारा बताई सृष्टि रचना का पूर्ण समर्थन श्री विष्णु पुराण में वर्णित है। इससे सिद्ध हुआ कि बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी द्वारा दिया गया सृष्टि रचना का ज्ञान सत्य है। जिसे वर्तमान तक कोई भी ऋषि, देव तथा गुरु, पण्डित कोई भी नहीं बता सका। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि सर्व ऋषि व गुरु जन तत्वज्ञानहीन थे तथा मानव समाज को दिशा भ्रष्ट करते रहे। जिस कारण से मानवता का ह्रास हुआ है।

{विशेष :- (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 55 का अनुवाद उचित नहीं किया गया है कृप्या अनुवाद पढ़ें जो उचित है

अनुवाद :- जिस तत् ब्रह्म अर्थात् परमअक्षर ब्रह्म के विषय में श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9 तथा 10 अध्याय 15 श्लोक 1,4,16 तथा 17 में वर्णन है। उसी के विषय में श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 54-55 में भी किया है श्लोक 54 में कहा है कि (तत् परमम् ब्रह्म) उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की साधना करने वाले योगी अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पुरूषोत्तम के विषय में श्लोक 55 में कहा है कि ''उस परम अक्षर ब्रह्म के दो रूप है मूर्त अर्थात् साकार तथा अमूर्त अर्थात् अव्यक्त क्योंकि पूर्ण ब्रह्म दूर देश में तेजोमय शरीर युक्त है। जब वह परम अक्षर ब्रह्म इस लोक में आता है तो अन्य हल्के तेज युक्त शरीर धारण करके आता है। इसलिए मूर्त तथा अमूर्त'' कहा है और वही परम अक्षर ब्रह्म ही क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) रूपी प्रभुओं तथा सर्व प्राणियों को व्यवस्थित किए हुए है। जैसे श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में कहा है क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दो परमात्मा इस लोक में जाने जाते हैं। इसी प्रकार दो स्थिति इस लोक में प्राणियों की है। कि स्थूल शरीर

सबका नाशवान है आत्मा सब की अविनाशी है। (उत्तम पुरूषः तू अन्यः) परन्तु वास्तव में श्रेष्ट परमात्मा तो इन दोनों से अन्य (भिन्न) है वही वास्तव में अविनाशी है तथा सर्व का पालन कर्ता है}

7. अनेक ब्रह्मण्डों का प्रमाण :- उल्लेख संख्या 79 में

8. ब्राह्मण मोक्ष प्राप्त नहीं करते अपितु पितृ बनकर पितृलोक में निवास करते हैं :-

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 29 में

9. गृहस्थों का स्थान भी पितृ लोक है जो पितृ पूजते हैं क्योंकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 प्रमाण है कि जो पितृ पूजते हैं वे पितरों को प्राप्त होते हैं अर्थात् पितृ लोक में चले जाते हैं। मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 32 में

10. अठासी हजार ऋषियों का स्थान अठासी हजार खेड़े हैं वही स्थान गुरुकुल वासियों का है अर्थात् ये सर्व मोक्ष से वंचित रह जाते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 31,32 में

11. वानप्रस्थों का स्थान सप्तऋषि लोक है तथा सन्यासियों का स्थान ब्रह्मलोक है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक प्रयन्त सर्व लोक पुनरावृत्ति में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए साधक भी जन्म-मरण के चक्र में ही रहते हैं मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 32 में

12. जल में एक अण्डा उत्पन्न हुआ उस अण्ड में ब्रह्म काल विराजमान था। उसी ब्रह्म काल अर्थात् महाविष्णु ने ब्रह्मा रूपधारण किया। प्रमाण :- उल्लेख 19,20,21 में

## ''पवित्र श्रीमद्भगवत गीता में सृष्टि रचना का प्रमाण''

### (दुर्गा तथा ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकृति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म(काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकृति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

**यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।**

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।१।

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ।।1 ।।

**अनुवाद :** (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्त्तारित, पीपल का वृक्ष रूप संसार है (यस्य) जिसके (छन्दांसि) छोटे–छोटे हिस्से या टहनियाँ (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसार रूप वृक्षको (यः) जो (वेद) सर्वांगों सहित जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

**केवल हिन्दी अनुवाद : ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला नीचे को शाखा वाला अविनाशी विस्त्तारित, पीपल का वृक्ष रूप संसार है जिसके छोटे-छोटे हिस्से या टहनियाँ पत्ते कहे हैं उस संसार रूप वृक्षको जो सर्वांगों सहित जानता है वह पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)**

**भावार्थ : गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में जिस तत्वदर्शी संत के विषय में कहा है उसकी पहचान अध्याय 15 श्लोक 1 में बताया है कि वह तत्वदर्शी संत कैसा होगा जो संसार रूपी वृक्ष का पूर्ण विवरण बता देगा कि मूल तो पूर्ण परमात्मा है, तना अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म है, डार ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष है तथा शाखा तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी)है तथा पात रूप संसार अर्थात् सर्व ब्रह्मण्ड़ों का विवरण बताएगा वह तत्वदर्शी संत है।**

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ।२।

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः, विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ।।2 ।।

**अनुवाद :** (तस्य) उस वृक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर

(गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार– काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मोमें बाँधने की (अपि) भी (मूलानि) जड़ें मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक अर्थात् पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख योनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं ।(2)

**केवल हिन्दी अनुवाद : उस वृक्षकी नीचे और ऊपर तीनों गुणों ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण रूपी फैली हुई डाली जीवको कर्मोमें बाँधने की भी मुख्य कारण हैं तथा मनुष्यलोक अर्थात् पृथ्वी लोक में नीचे-नरक, चौरासी लाख योनियों में ऊपर स्वर्ग लोक आदि में व्यवस्थित किए हुए हैं।(2)**

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा। ३।

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च, सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असंगशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा।।3।।

**अनुवाद :** (अस्य) इस रचना का (न) न (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) न (अन्तः) अन्त है (न) न (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति है का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूप वाले (असंङ्गशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा (दृढेन्) दृढ़ता से सूक्षम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के द्वारा जानकर अर्थात् तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए ।(3)

**केवल हिन्दी अनुवाद : इस रचना का नहीं शुरूवात तथा नहीं अन्त है नहीं वैसा स्वरूप पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी नहीं है क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति है का मुझे भी ज्ञान नहीं है इसे तत्वज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा काटकर अर्थात् सूक्ष्म वेद (तत्वज्ञान के) द्वारा जानकर उसे तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से काटकर।(3)**

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं-
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।४।

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृतिः, प्रसृता, पुराणी।।4।।

**अनुवाद :** जब तत्वदर्शी संत मिल जाए (ततः) इसके पश्चात् तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझकर (तत्) उस परमात्माके (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भलीभाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गये हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसारमें नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा–परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृतिः) रचना–सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा की मैं भी पूजा करता हूँ।(4)

**केवल हिन्दी अनुवाद : (जब तत्वदर्शी संत मिल जाए तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझ कर इसके पश्चात् उस परमात्माके परमपद अर्थात् सतलोक को भलीभाँति खोजना चाहिए जिसमें गये हुए साधक फिर लौटकर संसारमें नहीं आते और जिस परमात्मा-परम अक्षर ब्रह्म से आदि रचना-सृष्टि उत्पन्न हुई है अज्ञात आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन पूर्ण परमात्मा की ही मैं शरण में हूँ अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा की मैं भी पूजा करता हूँ।(4)**

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते। १६।

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते ।।16 ।।

**अनुवाद :** (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियोंके शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।(16)

**केवल हिन्दी अनुवाद : इस संसार में क्षर पुरूष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) दो प्रकार के भगवान हैं इसी प्रकार इन दोनों प्रभुओं के लोकों में सम्पूर्ण प्राणियोंके शरीर तो नाशवान् और जीवात्मा अविनाशी कहा जाता है।(16)**

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः। १७।

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ।।17 ।।

**अनुवाद :** (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) ईश्+वर =प्रभु श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु है।(17)

**केवल हिन्दी अनुवाद : उत्तम प्रभु तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं से भी अन्य ही है यह वास्तव में परमात्मा कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है एवं अविनाशी (ईश्+वर) = प्रभु श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु है।(17)**

## ''सर्व प्रभुओं की आयु''

अध्याय 8 का श्लोक 17

सहस्त्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्त्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः। १७।

सहस्त्रयुगपर्यन्तम्, अहः,यत्,ब्रह्मणः, विदुः,रात्रिम्,
युगसहस्त्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः ।।17 ।।

अनुवाद : (ब्रह्मणः) परब्रह्म का (यत्) जो (अहः) एक दिन है उसको (सहस्त्रयुगपर्यन्तम्) एक हजार युग की अवधिवाला और (रात्रिम्) रात्रिको भी (युगसहस्त्रान्ताम्) एक हजार युगतककी अवधिवाली (विदुः) तत्वसे जानते हैं (ते) वे (जनाः) तत्वदर्शी संत (अहोरात्रविदः) दिन–रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

**केवल हिन्दी अनुवाद : परब्रह्म का जो एक दिन है उसको एक हजार युग की अवधिवाला और रात्रिको भी एक हजार युगतककी अवधिवाली तत्वसे जानते हैं वे तत्वदर्शी संत परब्रह्म के दिन-रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)**

**विशेषः- सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म-काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। (प्रमाण :- कबीर सागर अध्याय ज्ञान सागर पृष्ठ 43) ऐसे 70000 (सत्तर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग अर्थात् एक हजार ब्रह्मलोकिय शिव (ब्रह्मलोक में स्वयं काल ही महाशिव रूप में रहता है) की मृत्यु के बाद काल के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है। इसलिए यहाँ पर परब्रह्म के एक दिन जो एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री होती है। लिखा है।**

**(1) रजगुण ब्रह्मा की आयुः-ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का है तथा इतनी ही रात्री है। (एक चतुर्युग में 43,20,000 मनुष्यों वाले वर्ष होते हैं) एक महिना तीस दिन रात का है, एक वर्ष बारह महिनों का है तथा सौ वर्ष की ब्रह्मा जी की आयु है। जो सात करोड़ बीस लाख चतुर्युग की है।**

**(2) सतगुण विष्णु की आयुः-श्री ब्रह्मा जी की आयु से सात गुणा अधिक श्री विष्णु जी की आयु है अर्थात् पचास करोड़ चालीस लाख चतुर्युग की श्री विष्णु जी की आयु है।**

**(3) तमगुण शिव की आयुः-श्री विष्णु जी की आयु से श्री शिव जी की आयु सात गुणा अधिक है अर्थात् तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख चतुर्युग की श्री शिव की आयु है।**

**(4) काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की आयुः-सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है**

तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म/काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग का परब्रह्म का एक दिन होता है। परब्रह्म के एक दिन के समापन के पश्चात् काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है तथा काल व प्रकृति देवी(दुर्गा) की मृत्यु होती है। परब्रह्म की रात्री (जो एक हजार युग की होती है) के समाप्त होने पर दिन के प्रारम्भ में काल व दुर्गा का पुनर् जन्म होता है फिर ये एक ब्रह्मण्ड में पहले की भांति सृष्टि प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष का एक दिन एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री है।

अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की आयु :- परब्रह्म का एक युग ब्रह्मलोकीय शिव अर्थात् महाशिव (काल ब्रह्म) की आयु के समान होता है। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का तथा इतनी ही रात्री होती है। इस प्रकार परब्रह्म का एक दिन-रात दो हजार युग का हुआ। एक महिना 30 दिन का एक वर्ष 12 महिनों का तथा परब्रह्म की आयु सौ वर्ष की है। इस से सिद्ध है कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष भी नाशवान है। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में किसी अन्य पूर्ण परमात्मा के विषय में कहा है जो वास्तव में अविनाशी है।

नोट :- गीता जी के अन्य अनुवाद कर्ताओं ने ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का लिखा है जो उचित नहीं है। क्योंकि मूल संस्कृत में सहंसर युग लिखा है न की चतुर्युग। तथा ब्रह्मणः लिखा है न कि ब्रह्मा। तत्वज्ञान के अभाव से अर्थों का अनर्थ किया है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयां आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीनों गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको मैं (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण जानकारी नहीं दे सकता

क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्वदर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमेश्वर के परम पद की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष(अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं भी उसी की शरण में हूँ। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरूष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरूष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है। उस संसार रूपी वृक्ष का चित्र कृप्या देखें पृष्ठ संख्या 139 पर तथा संक्षिप्त विवरण निम्न पढ़ें :-

उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उलटे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वृक्ष का पालन होता है तथा वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी के बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाऐं निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पत्ते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष(परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

उपरोक्त तीनों परमात्माओं की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए

उदाहरण :- (1)जैसे एक चाय पीने का प्याला होता है जो सफेद मिट्टी का बना होता है। जो हाथ से छुटते ही जमीन पर गिरते ही टुकड़े-2 हो जाता है। यह क्षर प्याला जानो। ऐसी स्थिति ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की जाने। (2) एक प्याला इस्पात (स्टील) का बना होता है। जो मिट्टी के प्याले से अधिक स्थाई है। परन्तु विनाश इस्पात का भी होता है। भले ही समय अधिक लगता है। इसी प्रकार परब्रह्म को अक्षर पुरूष अर्थात् अविनाशी प्रभु कहा है क्योंकि परब्रह्म की मृत्यु उस समय होती है जिस समय तक क्षर पुरूष अर्थात् काल की मृत्यु 36000 (छःत्तीस हजार) बार हो चुकी होती है। परन्तु फिर भी अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं है।

इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से दूसरा ही है वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है वही वास्तव में परमात्मा कहा जाता है।

यह प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 20,21,22 में भी है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अध्याय 8 श्लोक 18 में जिस अव्यक्त के विषय में कहा है उससे दूसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य पुरूष सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। (श्लोक 20) वही अव्यक्त अक्षर इस नाम से कहा गया है उसी पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति को परम गति है। जिस सनातन अव्यक्त परमात्मा को प्राप्त होकर साधक वापस नहीं आते वह मेरा भी परम धाम है अर्थात् मेरा भी उपेक्षित धाम है। (श्लोक 21) हे पार्थ जिस परमात्मा के अन्तर्गत सर्व प्राणी आते हैं जिस परम पुरूष से यह समस्त जगत परिपूर्ण है वह सनातन अव्यक्त अर्थात् परम पुरूष तो अनन्य भक्ति से ही प्राप्त होने योग्य है। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी है कहा है कि सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते है अन्न की उत्पत्ति वर्षा से होती है। वर्षा यज्ञ से होती है। यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान शास्त्रविधि अनुसार कर्मों से होती है। कर्म ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष से उत्पन्न हुए क्योंकि हम ब्रह्म काल के लोक में आए तो कर्म करने पड़े क्योंकि यहां कर्म फल ही मिलता है। सतलोक में बिना कर्म ही सर्व फल प्रभु कृपा से प्राप्त होता है। ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की प्राप्ति अविनाशी परमात्मा से हुई। इससे स्पष्ट है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठीत है परम अक्षर परमात्मा के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 1,8,9,10 में वर्णन हैं

**उपरोक्त गीता अध्याय 3 श्लोक 14 से 15 में भी स्पष्ट है कि ब्रह्म काल की उत्पत्ति परम अक्षर पुरूष से हुई वही परम अक्षर ब्रह्म ही यज्ञों में पूज्य है।**

## "पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण"

**इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में भी है।**

**कुर्आन शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टि रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है?**

**पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)**

छटवां दिन :— प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाऐं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टि की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (मांस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :— विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टि की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

**पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप (आकार) जैसा बनाया। इसलिए सिद्ध हुआ कि परमात्मा नराकार अर्थात् मानव सदृश शरीर युक्त है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टि की रचना की तथा फिर विश्राम किया।**

**पवित्र कुर्आन शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)**

आयत 52 :— फला तुतिअल् — काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्) ।52।

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य

देवी–देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुर्आन के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना(लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :– व तवक्कल् अलल् – हय्यिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा(कबीरा) ।58।

**भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी(पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।**

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रह्मानु फस्अल् बिही खबीरन् (कबीरन्) ।59।।

**भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुर्आन शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टि की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया। उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से प्राप्त करो। इस से यह भी सिद्ध हुआ कि कुरान ज्ञान दाता बाखबर अर्थात् पूर्ण ज्ञानी नहीं है।**

**उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी? तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं (कुरान ज्ञान दाता) नहीं जानता।**

**उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मों (ईसाई तथा मुस्लमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टि रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू अर्थात् अल्लाहु अक्बर भी कहते हैं।**

**आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान आज तक यह तत्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने**

भी नहीं बताया। इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुर्आन शरीफ आदि) झूठे हैं। पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने कहा :-

कबीर, बेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेदों (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेबों (कुर्आन शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) का ज्ञान गलत नहीं हैं। परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं।

## "पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना"

विशेष :- निम्न अमृतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुस्लमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है तथा ये तीनों प्रभु अविनाशी है। इनका जन्म मृत्यु कभी नहीं होता न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुर्आन शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है। कहते थे कि सर्वशास्त्रों में परमात्मा तो निराकार लिखा है। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर) गुरुओं पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। कि परमात्मा साकार है। वही पूर्ण परमात्मा ही जब चाहे प्रकट हो जाता है। वही परमात्मा काशी में कबीर नाम से प्रकट हुआ था। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सृष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदृश शरीर हल्के तेज का बना

**कर रहे तथा अपने द्वारा रची सृष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए। कृपा प्रेमी पाठक पढ़े निम्न अमृतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारितः-**

धर्मदास यह जग बौराना। कोइ न जाने पद निरवाना।।
यहि कारन मैं कथा पसारा। जगसे कहियो एक राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवोंका भरम नशाओ।।
अब मैं तुमसे कहों चिताई। त्रयदेवनकी उत्पत्ति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।
भरम गये जग बेद पुराना। आदि राम का भेद न जाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोइ बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
मां अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछेसे माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरतही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। हे साहेब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भगकर लीन्हा।।
धर्मराय किन्हाँ भोग बिलासा। मायाको रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उसको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।

अकाल पुरुष काहू नहिं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्मको ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुणका यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

**उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी ने सद्ग्रन्थों के वास्तविक ज्ञान को पांच वर्ष की आयु में सन् 1403 में कविर्गिर्भी अर्थात् कबीर वाणी द्वारा बोलना प्रारम्भ कर दिया था। फिर मथुरा में भक्त धर्मदास जी से मिलने के उपरान्त अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कहा है कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई ? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म/काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्मण्ड समेत सतलोक से 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (रजगुण श्री ब्रह्मा जी,सत्गुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?**

**तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) भी इस ब्रह्म अर्थात् काल प्रभु की साधना करते हैं। यह ब्रह्म इनको भी नहीं मिला है**

क्योंकि इसने सौंगन्ध खाई है कि मैं किसी भी वेद वर्णीत विधि से या अन्य किसी जप, तप साधना क्रिया से किसी को दर्शन नहीं दूंगा। प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में है। परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि सब व्यक्ति ब्रह्म की महिमा से परिचित है परन्तु आदि ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को कोई नहीं जानता। तीनों देवताओं तथा ब्रह्म (काल) को सब पूज रहे हैं। जिसके कारण से काल जाल में ही रह जाते हैं। यह ब्रह्म काल अपने पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) को भी खाता है। फिर नए ब्रह्मा, विष्णु, शिव उत्पन्न कर लेता है। इस प्रकार अपने ब्रह्मण्डों में सर्व को धोखे में रखता है। स्वयं ऊपर शून्य स्थान पर भिन्न रहता है। यह कबीर परमेश्वर जी ने सर्व काल का जाल बताया है।

विशेषः- प्रिय पाठक विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिति अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दू समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाशवान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दू समाज के कलयुगी गुरुओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नही) है, विद्यार्थीयों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरुओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरु, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविद्यि त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमृतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरुओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो अब स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कर्विदेव (कबीर प्रभु) तत्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

## "आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण"

**सन्त गरीबदास जी की आत्मा को परमेश्वर कबीर जी सत्यलोक लेकर गए तथा सर्व ब्रह्मण्डों के दर्शन कराए। तत्वज्ञान से परिचित कराए फिर उनकी आत्मा को शरीर में पुनर् से प्रवेश किया उस के पश्चात् सन्त गरीबदास जी ने आँखों देखा तथा कबीर परमेश्वर से सुने यथार्थ ज्ञान को अपनी वाणी में वर्णन किया।**

**आदि रमैणी (सद् ग्रन्थ पृष्ठ नं. 690 से 692 तक)**

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सत्त पुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा ।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पृथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्मण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।
माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगर द्वीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस द्वीप रहंता। कारण कौंन कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पृथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।
चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर द्वीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर द्वीप चलि गये प्रानी।।23।।

कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।
सहज विमांन चले अधिकाई। छिन में अगर द्वीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरै कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर रु माया। धर्मराय का राज पठाया।।31।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।32।।
यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कृतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उपजें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति याह प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय मांही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।
आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्मण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्मण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। सत्य लोक है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।
पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहां अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौंरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

भावार्थ :- **उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त ज्ञान के आधार पर आदरणीय गरीबदास साहेब जी ने कहा है कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ ख्वास अर्थात्**

चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्मण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकृति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकृति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मृत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। बन्दी छोड़ कबीर जी ने कहा है कि हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।

**।।सन्त गरीबदास जी महाराज की वाणी।।**

**(सत ग्रन्थ साहिब पृष्ठ नं. 690 से सहाभार)**

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाऐ आपै खाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला।।
सिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई।।
लाख ग्रास नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती।।
सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उत्पत्ति परलय डांडे।
ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।
खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपन बहिस्त वैकुंठ बनाये।
यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंधा है सब कोई।।
कीड़ी कुजंर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।
अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई।।
शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं।
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा।।
कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा।
चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं।।
यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ :- **ज्योति निरंजन (कालबलि) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी पत्नी दुर्गा अर्थात् माया के संयोग से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करता है और फिर मार देता है। जिस प्रकार नागिनी अपनी कुण्डली बनाती है तथा उसमें अण्डे देती है और फिर उन अण्डों पर अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है और उसमें से बच्चा निकल जाता है। उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूट जाते हैं क्योंकि नागिनी के काफी अण्डे होते हैं। जो अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है।**

माया काली नागिनी, अपने जाये खात।
कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

**इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्मण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मृत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रूव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा। वह भी पार नहीं हुए। काल लोक में ही रहे तथा 'ॐ नमः भगवते वासुदेवायः' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कृष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती है।**

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द।
कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

भावार्थ :– **सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है।**

**जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म के भक्ति धन को स्वर्ग**

**रूपी होटलों में समाप्त कर के वापिस कर्माधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाने वाले कर्म आधार से काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोद्ध लिया। श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :**

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जौरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
एक न कर्ता दो न कर्ता दश ठहराए भाई।
दशवां भी धूंध्र में मिलसी सत कबीर दुहाई।।
संहस अठासी द्वीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।
नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।

द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहां ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं जाहीं।
जहां कर्त्ता नहीं अन्य भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जौरा काल उस द्वीप नहीं जाँहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।
बन्दी छोड़ कबीर गुसांइ। झिलमलै नूर द्रव झांइ।।

**भावार्थ :- सन्त गरीब दास जी ने परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी से तत्वज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् बताया कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री शिव तथा माया अर्थात् दुर्गा देवी व ज्योति निरंजन अर्थात् काल, इन पांचों ने मिल कर सर्व प्राणियों को जाल में फंसाए रखने का षड़यंत्र रचा है। हम जो वचन कह रहे हैं इनको ध्यान पूर्वक सुनों तथा गहराई से विचार करो। परमेश्वर बन्दी छोड़ जी हैं। उनका सत्यलोक स्थान शाशवत अर्थात् अविनाशी है। सुर नर अर्थात् देव लोग व मुनि -ज्ञानी अर्थात् परमात्मा प्राप्ति में लगे मनशील ज्ञानीजन इन सर्व को पूर्ण मोक्ष मार्ग प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए सर्व ऋषिजन व देवता काल जाल में ही फंसे हैं। गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि यह ज्ञानी आत्माएं जो परमात्मा प्राप्ति के लिए प्रयत्न शील हैं ये हैं तो नेक परन्तु तत्वदर्शी सन्त के अभाव से मेरी अनुत्तम (अश्रेष्ठ) साधना में लीन हैं। यही प्रमाण कबीर जी ने दिया है :-**

कबीर, सुर नर मुनि जन तेतीस करोड़ी, बन्धे सबै निरंजन डोरी।

**भावार्थ है कि सर्व मुनि, ऋषि तथा तेतीस करोड़ देवता काल साधना करके काल की डोरी से ही बन्धे हैं अर्थात् ब्रह्म काल के नियमानुसार जन्म मृत्यु तथा कर्मदण्ड भोगते रहते हैं। पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं होता। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है कि जो निर्धारित समय अनुसार छोटी आयु में मृत्यु को प्राप्त होते या निर्धारित समय से पहले अर्थात् अकाल मृत्यु को प्राप्त होते, उन दोनों प्रकार की मृत्यु को टाल कर पूरा जीवन अपनी कृपा से प्रदान कर देता है तथा इस काल मृत्यु तथा अकाल मृत्यु का मुख्य कारण महाकाल अर्थात् ज्योति निरंजन जो इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में वास्तविक काल रूप में**

**विराजमान है उस चोर को ढूढ़ लिया है उस का प्रभाव भी अपने साधक से समाप्त कर दूगाँ। काल ने अपनी पत्नी दुर्गा द्वारा जाल फैलवाया है। जिस कारण से प्राणी पूर्ण परमात्मा तक नहीं जा पाते इस दुर्गा को भी दण्ड देता हूँ। तब अपना नाम व सारनाम दे कर पार करता हूँ।**

**कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा जताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। (बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला,) काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देता है। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, न विष्णु, न शिव जी कर सकते। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।**

**इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) हैं। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी आयु है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :**

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां।
चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धारिया।
जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

**चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त अवश्य होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमांयदे पूर्ण संत (सतगुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ3म तथा तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख हैं।**

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय।
लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

**कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम) में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्मण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड व अन्य सर्व ब्रह्मण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान है। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान है। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।**

## “आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टि रचना का संकेत”

**श्री नानक साहेब जी की अमृतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (गु.ग्र. पृ. 839)**

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोडि विछोड़।।
धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ–भाउ।।
जिन कीए करि वेखणहारा। (3)
त्रितीआ ब्रह्मा–बिसनु–महेसा। देवी देव उपाए वेसा।। (4)
पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।
तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।। (10)

**उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व सृष्टि की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची सृष्टि का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले**

निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिन जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

**राग मारु (अंश) अमृतवाणी महला 1 (गु.ग्र.पृ. 1037)**

सुनहु ब्रह्मा, बिसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए।।
इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा।। (3)
साम वेदु, रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमें मुख माइआ है त्रैगुण।।
ता की कीमत कहि न सकै। को तिउ बोले जिउ बुलाईदा।। (9)

**उपरोक्त अमृतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण सृष्टि रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न में अर्थात् गुप्त स्थान पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सर्व शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी है।**

**श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 929 अमृत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार**

ओअंकारि ब्रह्मा उत्पत्ति। ओअंकारू कीआ जिनि चित। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे। ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

**उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मस्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओ३म् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओ३म् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर मन्त्र**

**जाप करने से उद्धार होता है।**

**विशेष :– श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओ३म् + तत् + सत्) का स्थान - स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है।**

(पृ. 1038) उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले।
रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा।। (15)

सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा। नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)।।5।।17।।

**उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।**

**उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।**

**आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गु. ग्र. पृ. 359-360)**

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं। (1)
सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं। (2)
हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीत (3)
सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं।
कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं। (4)

**उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।**

**हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व के पार अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।**

**हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा जो साधना आप करते हैं पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।**

**अमृत वाणी राग आसा महला 1 (श्री गु. ग्र. पृ. 420)**

।।आसा महला 1।। जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई। मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई।।1।। साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई। किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।।3।। गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए। नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए।।8।।18।।

**उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मृत्यु के उपरांत नरक जाएगा।**

**(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 843-844)**

।।बिलावलु महला 1।। मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभु अबिनासी राम।। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ।।4।।2।।

**उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि**

**अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा ! सर्व प्राणी का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभक्ति का निर्णायक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया।**

**(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)**

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार।
नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक।

**उपरोक्त अमृतवाणी में श्री सन्त नानक जी ने स्पष्ट कर दिया कि हे (हक्का कबीर) सत्कबीर आप (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सृष्टि के रचन हार हो, आप ही (बेएब) निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।**

**(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)**

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।
नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।

**उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सृजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत् कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।**

**विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सृष्टि रचना कैसे हुई? अब पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए।**

## ''राधा स्वामी व धन-धन सतगुरु सच्चा सौदा पन्थों के सन्तों तथा अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा''

**अन्य संतों द्वारा जो सृष्टि रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कृप्या निम्न पढ़ें :-**

**पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज''**

**पृष्ठ नं. 102-103 से ''सृष्टि की रचना'' (सावन कृपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)**

''पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल (सतलोक – अलखलोक – अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।''

**पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाश राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, ''सृष्टि की रचना'' पृष्ठ 81,**

''प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।''

**यह ज्ञान तो ऐसा है। एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त सृष्टि रचना का ज्ञान तो ऐसा है। यथार्थ जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें पूर्वोक्त सृष्टि रचना।**

**सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (औंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष।**

**संतमत प्रकाश भाग 3 पृष्ठ 76 पर लिखा है कि ''सच्चखण्ड या सतनाम चौथा लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस सन्तमत प्रकाश पुस्तक के पृष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि ''एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।'' फिर पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पृष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि ''वह सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।'' पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पृष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि ''अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है यही नाम सच्चे साहिब, सच्चे खुदा का है इस मुकाम से दो स्थान नीचे सतनाम का मुकाम है, जिसको संतों ने**

सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।'' पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पृष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पुस्तक 'सच्चखण्ड की सड़क' पृष्ठ नं. 226 ''संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।''

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सड़क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् तथा तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। ये सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के मन्त्र हैं। सतलोक वह स्थान है जहां सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माओं से प्रार्थना है कि सत्य का ग्रहण करें असत्य का परित्याग करें।

# ''प्रमाण के लिए कबीर सागर से कुछ फोटोकापियाँ''

( ९८ ) 962 कबीरबानी

चारि अंस भये चारि प्रकारा । चौविध दीप चौविधहि पसारा ॥
प्रथम अंश पर माया भयऊ । सोपृथ्वितत्वको वीज निर्मयऊ॥
दुसरे कर्म भये अवतारा । पालंग अठानवे कीन्ह विस्तारा॥
तिसरे अदली अंश निरमावा । शेष नाग सो नाम धरावा ॥
चौथे अंश भये धर्म राई । जिन्ह पाप पुण्यको लेखा पाई॥
चारी अंश अक्षर ते भयऊ । चार अंश चार मत ठयऊ ॥
तब समर्थ अविगति एक कीन्हा । पूरी नींद अक्षरकूं दीन्हा ॥
चौसठ युगलौं सोए सिराई । तोलों कैल सुरती ठहराई ॥
समर्थ सुरति जल तत्व समानी । कैल अंड की कीन्ह उपानी ॥
तेहि पीछे अक्षर पुनि जागा । मोह तत्त्व भये अनुरागा ॥
चकित होय अक्षर बिलखाना । सोइ मोह सब सृष्टि समाना ॥
अंड दृष्टिमें देखो भाई । व्याकुल भए यह किन निरमाई॥
समर्थ छाप अंडसिर दीन्हा । अक्षर छाप देखि सौ लीन्हा ॥
सोई अंड जलमें बिराना । जिनको वेद नारायण माना ॥
तहवां ज्योति निरञ्जन भयऊ । तिनको सब जग कर्ता कहेऊ॥
अक्षर सुरति समर्थकी बानी । तेहि गुण खेल भए उतपानी ॥
निरंजन नाम अक्षर ठहराई । अचिंत भेद नहिं पावै भाई ॥
कैलहिं देखा सकल पसारा । तब अक्षर सो वचन उचारा ॥
देउ पिता मोहि आज्ञा सोई । जो कुछ इच्छा उपज्यो मोई ॥
सेवा करत सत्तर जुग बीता । तब मुख बोलै पुरुष अतीता ॥
जीव पुत्र जहां पृथ्वीको मूला । तहां कर्म बैठे अस्थूला ॥
सृष्टि भंडार कूर्मको भाई । सोलह माथ हाथ चौसठ पाई ॥
चले निरञ्जन कूर्मलगि आये । पुरुष ध्यानते कर्म जगाये ॥
उत्पति हमकूं मांगे देहू । ना देहो तौ तौ मारिकै लेहू ॥
तबहि कूर्म अपने मन मानी । एतो कैल भए अभिमानी ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''कबीर बानी'' के पृष्ठ 98 (962) की है। भावार्थ :- इस पृष्ठ के ऊपर से सातवीं पंक्ति से ''ज्योति निरंजन'' की अण्डे से उत्पत्ति होने का प्रमाण है। फिर कूर्म के पास सृष्टि रचना की सामग्री लेने का प्रकरण है। इस पृष्ठ पर स्पष्ट है कि समर्थ परमात्मा ने एक अद्भुत कार्य किया कि अक्षर पुरूष गहरी नींद में मानसरोवर के अंदर गहरे जल में सोया था। समर्थ परमेश्वर ने उसी सरोवर के जल से एक अण्डा उत्पन्न करके उसमें एक आत्मा प्रवेश की। जिससे कैल (ज्योति

निरंजन का दूसरा नाम) की उत्पत्ति हुई। उस अण्डे को उस सरोवर के जल में डाला। जिस कारण से अक्षर पुरूष जागा। आगे बहुत कुछ गलत है। वास्तविक ज्ञान सृष्टि रचना के भाग-2 में पढ़ें।



हम मांगे कछु देब न भाई। जाऊ पुरुष लगि वेगि सिधाई॥
कल कूर्मते युद्ध निर्मयऊ। छीन माथा तीन पुनि लयऊ॥
लेकर माथे सुन्यमें आवा। कैल सुरति घट मोह समावा॥
तीनों माथे भक्ति तब लीन्हा। तबसे अक्षर पुरुष डर कीन्हा॥
मनमें तब अभिमान समाई। तब कर जोरिके सेवा लाई॥
सोला चौकड़ा तब चलिआई। तब लगि निरंजन सेवा लाई॥
अक्षरपुरुष जो कीन्ह विचारा। तिन्हको समरथ वचन उचारा॥
विदेह बानि तब अक्षर पाई। सो बानीते कन्या भइ भाई॥
ताको बहुत सिखावन दीन्हा। अष्टांगी तिन कन्या कीन्हा॥
पुत्रि निरंजन लागि सिधाई। तुमको समरथ सदा सहाई॥
तब कन्या निरंजन लगि आई। एक पाँव पर सेवा लाई॥

साखी—कहै कबीर

देखे पलक उघारिके, कन्या आगे ठाढ़ि।
उपज्यो मोहऽरूप्रेम, तब विप्रीत मनमें बाढ़ि॥

चौपाई

पलक उघारि कैल तब देखा। अपने मनमें कीन्ह विवेका॥
कहै कबीर सुनो तुम बानी। मोहिकारनपुरुषतोहिउतपानी॥
हम तुम कीजे सृष्टि पसारा। तीनहि लोक सकल महि भारा॥
तब अष्टांगी कैलसों कहाई। मोहि तोहि नाहीं होय सगाई॥
मैं तोरि बहिनी तू मोरा भाई। सो अनरीती सब दीन चलाई॥
कहैं कैल सुनो आदि भवानी। हमरे वचन तुम काहे न मानी॥
जो तुम कहा हमारा मानौ। तौ तुम उत्पति निर्णय ठानौ॥
तब अष्टांगी कहै बुझाई। बिन आज्ञा तोहि पुरुष रिसाई॥
बिन आज्ञा कूरम सिर छीना। ताते पुरुष अन्त करि दीना॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''कबीर बानी'' के पृष्ठ 99 (963) की है। इसमें कुछ ठीक वर्णन है, कुछ गलत है जो काल के दूत नकली कबीर पंथियों ने कांट-छांट कर रखी है। वास्तविक ज्ञान इसी पुस्तक ''सृष्टि रचना भाग-2'' से ग्रहण करें।

(१००) 964 कबीरबानी

साखी–कहै कबीर

देखि स्वरूप कन्यहिको, मनमें रोष समाय।
मनमें रोष भयो अति, कन्या लीन्हीं खाय॥

लीलत कन्या कीन्ह पुकारा। पुरुष वचन ले हृदय सम्हारा॥
तब सुरति बानते कैलहि मारा। कन्या तब उगलै बहि पारा॥
एहि प्रपंच अक्षर तब कीन्हा। ताते कैल मती हरि लीन्हा॥
कन्या सुरति तब गई भुलाई। जबते पेट कैलके आई॥
पिता पिता कैलसो कहेऊ। मदन प्रचंड कल छन भयेऊ॥
अष्टांगी कैल एकमत कीन्हा। ताते सृष्टि रचवे मन दीन्हा॥
किया संयोग भयो त्रीवारा। जेठो ब्रह्मा लघु विष्णु कुमारा॥
तीजे शंभु विष्णु ते छोटा। येकही निरंजनहि के ढोटा॥

साखी–कहै कबीर

जैसे रूप निरञ्जनहिं, तैसे तीनों भाय।
जे उत्पत्ति कैलकी, आगे सृष्टि उपाय॥

चौपाई

करि प्रपंच शून्य इंडमें गयऊ। मनमें बहुत आनंदित भयऊ॥
एहि आनन्दमें गए भुलाई। ताते श्वासा सुरति उठाई॥
तेहि श्वासाते वेद कढि आई। रूपनिधान चारों बने भाई॥
हाथन पोथी सुसरस बानी। ताते कैल भयो अभिमानी॥
चारि वेद सब मरम बतावा। तब चलि अक्षर शून्यमें आवा॥
कैल प्रचण्ड भयो बरियारा। तब अक्षरते बुद्धि विचारा॥
येतो कैल औ जीव विचारा। समरथ छाप लियो टकसारा॥
अक्षर चलै अचिंत लगि गयऊ। महाशून्य छोड़ी तब दयऊ॥
तब अचिन्त्य अक्षर समुझावा। यह अविगति गति काहु न पावा॥

**★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''कबीर बानी'' के पृष्ठ 100 (964) की है। इसमें से भी बहुत वाणी निकाल रखी हैं। विस्तृत ज्ञान इसी पुस्तक ''सृष्टि रचना भाग-2'' से जानें। इस पृष्ठ 100 (964) में मूल वाणी इस प्रकार थी :-**

देखि स्वरूप कन्या का, काल मन में काम समाया

युवति का सुन्दर रूप निराला। देखि काल भया मलवाला।
अंग–अंग को निरखन लागा, काम देव बदन में जागा।
जानि गई अष्टंगी बद नीयती, तब काल से कीन्ही बिनती।
नजर नेक करो भ्राता, भाई–बहनि का पवित्र नाता।
काम वश काल एक न मानि, अलिंगन कन्या को करन की ठानि।
खोल मुह चुमन के तांहीं, अष्टंगी काल के उदर समाई।
पेट से देवी करी पुकारा, हे साहेब मेरा करो उभारा।
टेर सुनि तब हम वहां आए, अष्टंगी को बन्द छुड़वाए।
अष्टंगी काल अब दोई, मन्द कर्म से गए बीगोई।
धर्मराय (काल) कीन्हें भोग विलासा, माया (दुर्गा) को रही तब आसा।
तीन पुत्र अष्टंगी जाए, ब्रह्मा, विष्णु, शिव नाम धराए।

**दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए काल के पेट में मुंह के द्वारा प्रवेश कर गई। फिर अपनी रक्षा के लिए परमात्मा को पुकारा। तब परमात्मा अपने पुत्र सहज दास का रूप धारण करके वहां गए तथा काल के उदर से अष्टंगी को निकाला। उस के पश्चात् दोनों (काल-दुर्गा) ने भोग-विलास करके तीन पुत्रों की उत्पत्ति की। जिनके नाम ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रखे।**

**इसके पश्चात् काल ऊपर आकाश में चला गया। वहां ध्यान करने लगा। उस के श्वांसों से वेद निकले। चारों वेदों को लेकर काल (क्षर पुरूष) अक्षर पुरूष के पास जाकर वेद ज्ञान सुनाने लगा। अक्षर ने सोचा यह तो बालक है। इस को ज्ञान कहाँ से हो सकता है। इसलिए अचिन्त के पास अक्षर ने ज्ञान जानना चाहा। तब अक्षर ने कहा उस समर्थ की गति का उसके सिवा किसी को ज्ञान नहीं है।**

स्वसमबेदबोध 1453 (९१)

जाते ओहं पुरुष भे अंशा । ओहं सोहं भे द्वै अंशा ॥
ताको आज्ञा उत्पति कीना । शब्द संधि उनहूको दीना ॥
मूल सुरति अरु पुरुष पुराना । रचना बाहर कीनो थाना ॥
ओहं सोहं अंडन रहेऊ । सकल सृष्टि के करता भयऊ ॥
प्रथम अँकु दुज इच्छा संगा । तीसर मूल चौथ सोहंगा ॥
ओहं सोहं कीन प्रमानी । आठ अंश भे तिनते उतपानी ॥
आठ अंश भे एक निधाना । करता सृष्टि भये परमाना ॥
सात अंशके नाम बखानो । जिनते सकल सृष्टि बंधानो ॥
प्रथम मूल अंकूर गनीजै । इच्छा सहज साहंग भनीजै ॥
पुनि अचिंत फिर अक्षर भैऊ । बृद्धि हेत करता निरमैऊ ॥
सातो अंश जीव हितकारी । जिव कल्यान काज तन धारी ॥
यहिविधि रचना करि करतारा । पुनि अपने मनमाहिं विचारा ॥
बिना काल नहिं जीव डेराई । कोइ न भक्ति भजन मन लाई ॥
तिहि औसर प्रभु काल उपाया । जाकी डर सब जीव डेराया ॥
जप तपादि संयम जो करनी । काले के डरतें सो सब बरनी ॥
सात अंश जिव दाया करता । अष्टम काल भयो संहरता ॥
सोरठा–वृद्धि हेत भे सात, अष्टम नास्तिकि हेत है ।
स्वसमवेद विख्यात, तिनते सब रचना भई ॥

चौपाई

द्वीपन द्वीप अंश बैठारा । सातो जहँ तहँ कीन पसारा ॥
अक्षर कीन जहाँ निज थाना । तहँ समूहजल तत्त्व बखाना ॥
अक्षर सुरति पुरुषकी बानी । त्रिगुण तत्त्व घटमाहिं समानी ॥
तब अक्षर को निद्रा आई । सोरह चौकरी सोय सिराई ॥
अक्षर सुरति मोहमें आई । ताते दूसरे अंश उपाई ॥
अंडस्वरूपी जलमहँ दीना । यह अविगति समरथने कीना ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 91 (1453) की है। इसमें दो अक्षर के मन्त्र सत्यनाम (ओहं = ओम् तथा सोहं) का वर्णन है। ओहं (ॐ) यह क्षर पुरूष काल ब्रह्म का मूल मन्त्र है तथा सोहं यह अक्षर पुरूष का मूल मन्त्र है। इनको भिन्न-भिन्न जाप करने से मोक्ष लाभ नहीं होता। इस पृष्ठ पर शेष विवरण अक्षर के कार्य कर्म का है। जिस से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। इस के पश्चात् ''क्षर'' पुरूष (काल) की उत्पत्ति अण्डे से हुई, उसका वर्णन है।

(९२) 1454 बोधसागर

अक्षर जागा निद्रा जाई। देखि अंड व्याकुलता आई ॥
चकृत भा यह किन निरमाई। अंडदृष्टिने देखो भाई ॥
चहुँदिशि तहाँ रहे जल छाये। अंडा तापर तरे भाये ॥
अक्षर ढिग अंडा लगि आवा। तामें लिखी हकीकत पावा ॥
ऐसी तामें लिखी निशानी। परमपुरुषकी सो सहिदानी ॥
तुम लगि हम यक अंश पठाई। रचना करो सृष्टिकी भाई ॥
तुमते सो करिहै बरिआई। आवन देहु जहाँ लगि आई ॥
सत्रहसौ युग ऊपर तीसा। तासु महातम कर जगदीशा ॥
बहुरि महातम होय तुमारा। कालजालते जीव उबारा ॥
काल पुरुष तब पुरुष समाई। तासु महातम तब उठि जाई ॥
तब सब जीव मुक्ति पद पैहैं। फेरि न चौरासीमें ऐहैं ॥
ऐसो अंडप लिखा निहारी। अक्षर पढि मनमाहिं विचारी ॥
अक्षर दृष्टि अंड बिहराना। ताते काल बली प्रकटाना ॥
सोइ ज्योति निरंजन भयऊ। जाको सब जग करता कहेऊ ॥
अक्षर सुरति पुरुषकी बानी। ताते काल भयो अभिमानी ॥
निरंजननाम अक्षरने भाषा। समरथ शब्द हृदयमें राखा ॥
प्रभु निज तेजते काल उपाया। ताते सकल सृष्टि दुख पाया ॥
यकपग काल रह्यो पुनि ठाढो। युग सत्तर कीनो तप गाढो ॥
तपमें येते काह बिताई। मांगु मांगु वर कह तब साँई ॥
कहै काल प्रभु यह वर दीजे। तिहूँ लोकको राज करीजे ॥
भवसागरमें राज हमारा। सुनि समर्थ अस वचन उचारा॥
पुत्र जाहु पृथ्वीके मूला। जहाँ कूर्म बैठे अस्थूला ॥
सृष्टि भंडार कूर्मको भाई। सोलह माथ चौंसठहाथ पाई ॥
ताते लेहु सृष्टिकी रचना। शीश नाय बोलेहु मृदुवचना ॥
तीन लोकको पायो राजू। धर्मराय तब निज उर गाजू ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 92 (1454) की है। इसमें ज्योति निरंजन (काल) की उत्पत्ति अण्डे से हुई थी का प्रमाण है। शेष विवरण अधूरा है, वह आप जी इसी पुस्तक ''सृष्टि रचना भाग-2'' में पढ़ें। इस से सिद्ध हुआ कि ''अनुराग सागर'' पृष्ठ 14 (138) पर पंक्ति 14-15-16 वाली वाणी गलत है। जिन में तेज से काल (ज्योति निरंजन) की उत्पत्ति बताई है।

नोटः- ऊपर से 10 वीं पंक्ति में लिखा है कि ''काल पुरूष तब पुरूष समाई'' यह गलत है। ठीक इस प्रकार है ''काल लोक जब पुरूष समाई''। ऊपर से 17 वीं पंक्ति गलत है, लिखा है ''प्रभु निज तेज से काल उपाया'', ठीक इस प्रकार है ''अक्षर कोप अण्ड में समाया''।

( ९६ ) 1458 बोधसागर

कहै निरञ्जन कामिनि पाही । पूरुष ढिग अब हम नहिं जाई॥
पूरुष लोक इहाँ रचि लीजे । यकछत राज हमहि तुम कीजे॥
अब तौ पुरुष आस नहिं मोही । गहिके बाह राखि हो तोही ॥

छन्द—भग ना हतो तिहि नारिके नख फारि कीन निरञ्जना ।
यमसाट जिव जेहि बाट विचरे घाट उत्पतिको बना ॥
भग भोग प्रथम सँयोग सोई कैल आद्या सो ठना ।
भे प्रकट ब्रह्मा विष्णु शंकर त्रिगुन भव निधि रंजना॥

अथ त्रिदेवको जन्मकथा वर्णन-चौपाई

काल कछुक जब गयौ सिराई । रूपरंग कन्या तन छाई ॥
जब भलि भांति रंग तन भीना । कन्या कैल ब्याह सँग कीना ॥
कूर्मको तीन शीस जो रहेऊ । कैल काटिके भक्षन कियऊ ॥
ताते तीन अंश प्रकटाने । ब्रह्मा विष्णु महेश बखाने ॥
देव निरंजन आदि कुमारी । केते काल कीनो सुख भारी ॥
कैल अरु कामिनि भोग बिलासा । स्वसमबेद भलिभांति प्रकाशा॥
तीनो सुत जिहिं काल उपाई । धर्मराय तब गयौ लुपाई ॥
राजपाट आद्याको दीना । सुन्नमाहँ निज बासा कीना ॥
कह्यो निरंजन आद्या पासा । मेरो भेद न करहु प्रकाशा ॥
पुत्रनसे जनि बात जनावो । मेरो भेद न तिनहि सुनावो ॥
यतन अनेक ध्यान जौं लैहैं । तो मम दर्श पुत्र नहिं पैहैं ॥
यह कहि शून्यमें गयो समाई । योगसमाधि निरञ्जन लाई ॥
मातासे सुत पूछै बाता । पिता हमार कहाँ है माता ॥
पुत्रनते कह आदि भवानी । पिता तुमार हमहुँ नहिं जानी॥
रचना सकल हमहिते होई । हम तुम तुम हम और न कोई॥
तुमहो पुरुष हमहि तोर जोई । हम तुम दूसर और न कोई ॥
हम हैं पिता हम ही हैं माता । हम ही तीन लोकके दाता ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 96 (1458) की है। इसमें प्रमाण है कि दुर्गा देवी (अद्या) के भग (योनि) नहीं था। काल ब्रह्म ने अपने नख (नाखूनों) से चीर-फाड़ कर बनाया। इसमें यह भी

वर्णन है कि जब प्रथम बार तीनों पुत्रों ने माता दुर्गा से पूछा कि हमारा पिता कहाँ। तब दुर्गा ने झूठ बोला कि मैं ही तुम्हारी माता हूँ, मैं ही तुम्हारा पिता हूँ। यह भी वर्णन है कि काल ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मेरा भेद किसी को न देना। मैं किसी भी प्रयत्न यानि साधना से मेरे भेद पुत्र नहीं जान सकेंगे। चाहे कितने समय तक ध्यान (समाधि) लगाते रहेंगे। मैं किसी को दर्शन नहीं दूँगा।

स्वसमवेदबोध 1459 (९७)

जब जननी अस बचन उचारा। सुनि संसै कर तिहूँ कुमारा॥
माता कपट कीन हमपाहीं। पिताको भेद बतावत नाहीं॥
तीनो बालक ताते रूठै। जननी बचन कहैं सब झूठै॥
तब माता बोली रिसिआई। पिताको दरश करहु तुम जाई॥
माता कह तुम पुष्प चढ़ाओ। पिताको शीस परसिके आवो॥
चले जो पुत्र पिताकी आसा। पिता रहै पुत्रनके पासा॥
खोजत खोजत कतहुँ न पाई। रहे निरंजन सुन्न समाई॥
लगी समाधि निरंजन तारी। निकसे वेद श्वास सँग चारी॥
ऋग अरु यजुर अथरबन सामा। धरि तन रटहि निरंजननामा॥
निरंकारकी अस्तुति करही। देव निरंजन गुन उच्चरही॥
देव निरंजन दृष्टि न आवै। ज्योतिज्योति कहि श्रुतिगुणगावै
तिहिमें वेद निरखै निज नैना। अनुमानहिते भाखे बैना॥
वेदन प्रति नभ बचन सुनाई। बासा करहु सिंधुमें जाई॥
आज्ञा दियौ निरंजन राई। बसो वेद सागरमें आई॥
बहुरि निरंजन सैन लखाई। आद्यासे अस कहौ बुझाई॥
निज पुत्रनको आज्ञा दीजै। सिंधु मथनको उद्यम कीजै॥
तब आद्या अस युक्ति बनाई। तीन सुता निज अंग उपाई॥
पुत्रिन कह अस आज्ञा दीनों। बसहु जाय सागरमें तीनों॥
माताको अस आयसु पाई। तीनों सिंधुमें गईं समाई॥
यह चरित्र जननी जो ठाना। ब्रह्मा विष्णु शंभु नहिं जाना॥
राखा गुप्त न मर्म बताया। आद्या सुतनसे वचन सुनाया॥
सागर मथन जाहु मम वारा। पैहो वस्तु महा सुखसारा॥
माताकी जब आज्ञा पाई। चले तिहू तिहि शीस नवाई॥
मथ्यौ जाय सागरको सोई। कन्या तीन प्रकट तब होई॥
तीनो कन्या जबही पाये। हर्षसमेत मातु ढिग आये॥

बो० सा०

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 97 (1459) की है। इसमें नकली कबीर पंथियों ने गड़बड़ की है, कांट-छांट करके प्रकरण आगे-पीछे किया है। इसमें वर्णन है कि ब्रह्मा-विष्णु-शिव को शंका हुई

कि माता जी हम से पिता का भेद न बता कर कपट कर रही है। यह तो चारों वेद प्राप्त होने के पश्चात् ब्रह्मा को शंका हुई थी कि माता जी कह रही हैं कि तुम्हारा कोई पिता नहीं, कोई मेरे अतिरिक्त जगत का कर्ता नहीं। वेद में वर्णन है कि जगत का कर्ता और है। वह साकार नराकार है। गुप्त (परोक्ष) है। तब दुर्गा ने कहा था कि वह तुम्हें किसी भी साधना से दर्शन नहीं देगा। उस समय ब्रह्मा जी को माता की बात पर अविश्वास हुआ था। कारण यह है कि परमेश्वर कबीर जी ने अपने परम भक्त धर्मदास जी को बहुत बार सर्व जानकारी रह-रह कर दी थी, कभी विस्तार से कभी संक्षेप में। धर्मदास जी बाद में लिखते थे जिस कारण से आगे-पीछे हो गया है। इस पृष्ठ पर यह भी वर्णन है कि काल ब्रह्म ने अपने श्वासों से चारों वेद उत्पन्न किए। वेदों को भी उस के दर्शन नहीं हुए। तब चारों वेदों को आकाशवाणी से आदेश दिया कि सागर में छिप जाओ। चारों वेद सागर में छुप गए। फिर दुर्गा जी से काल ने कहा कि तीनों पुत्रों को सागर मन्थन के लिए भेज दो। (नोट :- यहाँ पर गलत लिखा है कि एक ही बार में वेद तथा तीन कन्याएं निकली थी। कारण है कि नकली कबीर पंथी अपनी बुद्धि अनुसार फेर-बदल करते रहे हैं। (वास्तविकता आप जी इसी पुस्तक के ‘‘सृष्टि रचना भाग-2‘‘ में पढ़ें, वह ठीक है।)

( ९८ ) 1460 बोधसागर

तब माता पुत्रन कहि टेरा । यह तो काज भयौ सुत तेरा ॥
सावित्री ब्रह्माको दीना । विष्णू लक्ष्मीको बरि लीना ॥
पारवती शंकरको ब्याहा । नारि पाय अतिमनहि उछाहा ॥
काम विबशभे तीनों भाई । देव दनुज सब ही प्रकटाई ॥
जननी पुनि पुत्रन समुझावो । सागर मथन फेरि तुम जावो ॥
जो जिहि मिले लेहु तुम सोई । तीनों पुत्र चलत तब होई ॥

सोरठा–रञ्च न लायौ बार, चले तिहूँ सुत सिंधुतट ।
मथ्यौ ताहि चित धार, निकसे चौदह रतन तब ॥

चौपाई

चौदह रत्न निकस जिहि बारी । लै जननीके सम्मुख धारी ॥
माताके जब आगे कीना । ताने बांटि तिहूँको दीना ॥
पायौ वेद सो ब्रह्मा लीनो । पढ़ि गुनिके विचार सो कीनो ॥
ब्रह्मा वेद पढ़न जब लागा । पढ़त वेद तब भौ अनुरागा ॥
कहै वेद पूरुष यक आही । निराकार जिहि रूप न छाही ॥
सत्य माहँ सो रूप देखावत । चितवत दृष्टि नजर नहिं आवत ॥
स्वर्ग सीस पग आहि पताला । यह सब देखो ताको ख्याला ॥
ब्रह्मा विष्णुसे कह समुझाई । तुमहू शंभु सुनो चितलाई ॥
आदि पुरुष यक वेद बतावा । वेद कहै हम भेद न पावा ॥
तब ब्रह्मा माता ढिग आये । करि प्रनाम तेहि शीस नवाये ॥
हे माता मोहि वेद बतावा । सिरजनहार और बतलावा ॥

दोहा–ब्रह्मासे माता कहे, सुन सुत मेरी बात ।
सप्त स्वर्ग है शीस जिहि, चरण पताल है तात ॥
जौं इच्छा तोहि दरशकी, पुष्प लेहु तुम हाथ ।
बेगि सिधारो ताहि ढिग, जाय नवावो माथ ॥

चौपाई

ब्रह्मा मातहि शीस नवाई । उत्तर दिशा बेगि चलि जाई ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 98 (1460) की है। इसमें वर्णन है कि माता ने तीनों पुत्रों से कहा कि सागर मन्थन करो। सागर मन्थन में सावित्री, लक्ष्मी तथा पार्वती निकली, सावित्री का ब्रह्मा से, लक्ष्मी का विष्णु से तथा शिव का पार्वती से विवाह कर दिया। फिर दूसरी बार सागर मन्थन में चार वेद निकले तथा चौदह रत्न निकले, ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा। वेद में कोई अन्य परमात्मा लिखा है। माता ने कहा जाओ, खोजो अपने पिता को वह तो निराकार है। सर्व रचना उसी का रूप है, सात स्वर्ग उसका सिर है, चरण पाताल है। नोट :- पृष्ठ 98 (1460) पृष्ठ 99 (1461) पर पूरा गलत वर्णन है। वास्तव में जो सत्य कथा है वह पढ़ें इसी पुस्तक के सृष्टि रचना पृष्ठ 45 पर।

स्वसमवेदबोध 1461 (९९)

तिहि अस्थान पहूँचे जाई । नहिं तिहँ रवि शशि सुन्न रहाई॥
बहुबिधि अस्तुति करे बनाई । ज्योति प्रभाव ध्यान तहँ लाई॥
करते ध्यान गये युग चारी । माता शोच पुत्रकर भारी ॥
ब्रह्मा तात दरश नहिं पावा । शून्य ध्यान युग चारि गँवावा ॥
किहि विधि रचना रची बनाई । ब्रह्मा आवै कौन उपाई ॥
उपटि शरीर मैल गहि काढ़ी । पुत्रीरूप कीन रचि ठाढ़ी ॥
शक्ति अंशनिज ताहि मिलावा । नाम गायत्री तासु धरावा ॥
गायत्री मातहि शिर नावा । चरन टेकि रज शीस चढ़ावा ॥
गायत्री बिनवे कर जोरी । सुन जननी बिनती यक मोरी ॥
कौन काज मोंकह निरमाई । कहो वचन लेवँ शीस चढ़ाई ॥
कह अद्या पुत्री सुन बाता । ब्रह्मा आहि जेठ तव भ्राता ॥
पिता दरश कहँ गये अकाशा । आनहु ताहि वचन प्रकाशा ॥
दरश तातको वह नहिं पावै । खोजत खोजत जन्म सिरावै ॥
जौनी विधि वह ईहां आई । करहु जाय तुम तौन उपाई ॥
चलि गायत्री मारग जाई । जननी बचन प्रीति चित लाई ॥
गायत्री पहुँची तहँ जाई । ब्रह्मा जहाँ समाधि लगाई ॥
लगी समाधि ब्रह्मकी गाढी । गायत्री शोचे तहँ ठाढी ॥
केते द्यौस रही सो ताहीं । ब्रह्मा पलक उघारे नाहीं ॥
गायत्री तब शोचन लागी । कौन भाँति ब्रह्मा अब जागी ॥
निजु मनमें बहुतै अनुमानी । आद्या ताके ध्यान समानी ॥
आद्या ध्यानमें ताहि सिवाई । परसो निजकर ब्रह्मा पाई ॥
गायत्री पुनि कीनेहु तैसो । जननी युक्ति बतायो जैसो ॥
तिहि औसरसो मन चितलाई । परस्यौ ब्रह्म चरन तब जाई ॥
ब्रह्मा योग ध्यान चित डोला । व्याकुल भयो ब्रह्म अस बोला॥
कौन आहि पापिन अपराधी । काहेको मोर छोडाय समाधी ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 99 (1461) की है। इस में प्रकरण आगे-पीछे है तथा गलत है, घटना ठीक है। उदाहरण :- इसमें लिखा है कि वेद पढ़ कर ब्रह्मा को ज्ञान हुआ कि परमात्मा कोई और है, वह उत्तर दिशा में चला गया। फिर देवी (अष्टंगी) ने गायत्री उत्पन्न की। उस को ब्रह्मा के पास भेजा। यह गलत है क्योंकि ब्रह्मा जी का विवाह हो चुका होता तो, उस समय तो सावित्री को ही भेज देती।

वास्तविकता आप पढ़ें अध्याय ''अनुराग सागर'' पृष्ठ 26 (150), 27 (151), 28 (152) में इसी पुस्तक के पृष्ठ 79-83 पर। प्रिय पाठको! इसी समस्या के समाधान के लिए इस पुस्तक की रचना अनिवार्य थी क्योंकि कबीर सागर में नकली कबीर पंथियों ने कांट-छांट तथा मिलावट कर रखी है।

**इसी कारण से सर्व पाठक भ्रमित होकर भिन्न-भिन्न व्याख्या सुनाते फिरते हैं। इस पृष्ठ 99 (1461) का सर्व वर्णन आगे-पीछे होने से भ्रम पैदा करता है इसलिए इस पुस्तक में लिखी सृष्टि रचना यथार्थ है क्योंकि यह उस मूल वाणी ज्ञान के आधार से लिखी है जो परमेश्वर कबीर जी ने छुपा रखा था :-** तेतीस अरब ज्ञान हम भाखा, मूल ज्ञान गुप्त ही राखा।
मूल ज्ञान तब तक छिपाई, जब तक द्वादश पंथ मिटाई।।

स्वसमबेदबोध 1467 (१०५)

मातु जो दया विष्णुपर कीने । पिता देखाय निकटही दीने ॥
माता पिता एक मिलि गैऊ । विष्णु देखिके हर्षित भैऊ ॥
माता पिता सुत एकै ठैऊ ।विष्णुसमाधिज्योति मिलिगैऊ॥
तीनो मिलि जब एकै भयऊ । तिहि पीछै जग सिरजै लियऊ॥
तब माता अस बचन उचारा । रचो सृष्टि तुम तीनो बारा ॥
अंडज उत्पति कीनी साता । पिंडजको ब्रह्मा उतपाता ॥
उखमज खानि विष्णु ब्यौहारा । शिव थाबरको कीन पसारा ॥
चौरासी लख जूनी कीना । आधा जल आधा थलदीना॥
नौलख जलके जीव बखाना । चौदह लख पंछी परमाना ॥
कृमी कीट सत्ताइस लाखा । तीस लक्ष अस्थावर भाषा ॥
चतुर लक्ष मानुष परमाना । मनुषदेह लह पद निर्वाना ॥
और योनि परचै नहिं पावै । तत्त्वहीन भव भटका खावै ॥
एक तत्त्व अस्थावर जाना । उखमज दोय तत्त्व परमाना ॥
अंडज तीन तत्त्वगुन जाना । पिंडज चार तत्त्व परमाना ॥
ताते होय ज्ञान अधिकारा । मानुष देह भक्ति अनुसारा ॥
अंडज खानि तीन ततब्यापा । वायू तेज तीसरो आपा ॥
थावर एक तत्त्व है पानी । उखमज वायु तेजते सानी ॥
पिंडज चार तत्त्वसे बरनी । पौनो पावक जल अरु धरनी ॥
पिंडज नरकी देह देह सँवारा । ताते पंच तत्त्व परमाना ॥
नर नारीमें तत्त्व समाना । ज्ञान बिभेद ताहुमें जाना ॥
चारो खानि जीव भरमावा । तब मानुषकी देही पावा ॥
पांच तत्त्व मानुष विस्तारा । तीनो गुण तेहिमाहँ सँवारा ॥
देह धरे छोडे जस खानी । तैसो ज्ञान लहै सो प्रानी ॥
प्रथम कहो अंडजकी खानी । दारिद्री निद्रा अलसानी ॥
चोरी चुगली निंदा माया । घर बन झाड़ी आगिलगाया॥

**★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 105 (1467) की है। इस में बताया है कि दुर्गा माता ने अपने पुत्रों से कहा कि अब उत्पत्ति करो। चार प्रकार से प्राणियों की उत्पत्ति की। (1.) जलचर :- ये 9**

लाख प्रकार के हैं। (2.)पक्षी :- ये 14 लाख प्रकार के हैं। (3.) कृमि (कीड़े) :- ये 27 लाख प्रकार के हैं। (4.) पेड़-पौधे, वृक्ष :- ये 30 लाख प्रकार के हैं। (5.) मनुष्य (पित्तर-प्रेत, गण, गन्धर्व, आदि) 4 लाख प्रकार के हैं। कुल 84 लाख प्रकार के जीव उत्पन्न किए। ये चार प्रकार से उत्पन्न होते हैं :- 1. अण्डज 2. स्थावर (जो जेर से उत्पन्न होते हैं) 3. स्वेतज (पसीने से उत्पन्न) 4. पीण्डज। इन को चार खानी कहा जाता है।

(१०८) 1470 बोधसागर

चौरासी लख योनी कीन्हा। चार खानि जिव एकै चीन्हा ॥
चौरासी लख बचन बखाना। चारखान जिव एक समाना ॥
रचना रचे सृष्टि बहु रंगा। कामदेवकी कला अनंगा ॥
सुर नर मुनि गण काम तरंगा। पशु पक्षी सबहीके संगा ॥
कर्म काल सबही भरमावा। शिवशक्ती सँग कला नचावा॥
कनक कामिनी फंद बनाया। तिहि फन्दे सबही अरुझाया ॥
जाति पांति कुल मान बड़ाई। ब्रह्मा यह यम फंद बनाई ॥
शिव शक्ती द्वै रूप बनाया। नारि पुरुष सो नाम धराया ॥
भगद्वारे ह्वै सब जग आया। भग भोगनको पुरुष कहाया ॥
नखशिख रची काल फुलवारी। फूल कुबास सुबास सँवारी ॥
कनक कामिनी काल बनाई। चार खानिमें रही समाई ॥
कामिनि काम सँवारा ज्ञानी। चारो खानि रहा विष सानी ॥
काल कर्मकी खानि बनाई। सब संगतमें रहा समाई ॥
सुर नर मुनि सबहीको डहके। चारखानि सबही घटमहके ॥
तीनों देव निरंजन रूपा। येई भवसागरके भूपा ॥
चारो मिलि सब सृष्टि सँवारी। पञ्चम कहिये आदि कुमारी ॥
जहाँ तहाँ तीरथ ब्रत दाना। देवल देव पूजा पाषाना ॥
मथुरा तीनि देव औतारा। ब्रह्मा पुनि काशी पग धारा ॥
यहिविधि आद्या साज्यौसाजू। तिहुँ पुत्रनकहँ दीनो राजू ॥
मथुराते चलि आदि भवानी। कोटकांगड़े पहुची आनी ॥
कोटकांगड़े करि निज थाना। हींगलाज पुनि कीन पयाना ॥
आदि भवानी रही तहांई। तिहूँ पुत्र जग राज कराई ॥
नाना भांति कर्म बिस्तारा। वेद कितेब प्रपंच अपारा ॥
भर्मजाल जगमें फैलाई। नर नारी तामें अरुझाई ॥
जहतहँ तीन देवकी सेवा। कोइ न जान पुरातन देवा ॥

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 108 (1470) की है। इस प्रकरण का भावार्थ है कि जितने भी प्राणी हैं, सर्व ब्रह्मा जी के रजगुण से प्रभावित होकर सन्तानोत्पत्ति करते हैं। काम-वासना

सर्व देव, ऋषि तथा तीनों देवताओं को भी प्रभावित करती है। इक्कीस ब्रह्मण्ड में कोई नहीं बचा है। काल ने कनक (सोना-चांदी व अन्य धन) तथा कामिनी (स्त्री) रूपी दो दृढ़ फंद बना रखे हैं और तीर्थ, व्रत आदि मनमुखी साधना पर सर्व श्रद्धालुओं को दृढ़ कर रखा है। तीन देवताओं (ब्रह्मा रजगुण, विष्णु सतगुण तथा शिव तमगुण) की भक्ति जहां-तहां देखने को मिलती है। कोई आदि (सनातन) परमात्मा को नहीं जानता।

## ''दस मुकामी रेखता में सत्यलोक में स्त्री-पुरूष हैं का प्रमाण''

( २० ) 756 मुहम्मदबोध

होता है। और तमोगुण की शुद्धता से उत्पन्न हुए शौर्य्य (धीरता) रूप बुराकपर सवार होकर गुरुकी शिक्षा द्वारा यह ज्ञान की भूमिकाओंको पूर्ण करता हुआ यथार्थ पद को प्राप्त होता है। और यथार्थ पदको प्राप्त होकर जीवन मुक्त अवस्था से अन्य जीवों को उपदेश देकर काल जालसे छुडाता है।

इस मुहम्मद बोध ग्रन्थ के यथार्थ आशय को पारखी आत्मविद् गुरु अधिकार प्रति अनेक रूपकों में समझाते हैं और इसको आध्यात्मिकही अर्थ से ग्रहण करने के लिये दश मुकामी रेखताका भी प्रमाण है। सो यहां दशमुकामी रेखता लिख देता हूँ।

दशमुकामी रेखता

चला जब लोकको शाक सब त्यागिया हंसको रूप सतगुरु बनायी। भृग ज्यों कीटको पलटि भृङ्ग किया आप समरङ्ग दै ले उड़ायी। छोडि नासूत मलकूतको पहुंचिया विष्णुकी ठाकुरी दीख जायी। इंद्र कुबेर जहाँ रंभको नृत्य है देव तेतीस कोटि रहायी ॥ १ ॥ छोडि वैकुंठको हंस आगे चला शुन्यमें ज्योति जगमग गायी। ज्योति परकाशमें निरखि निस्तत्त्वको आप निर्भय हुआ भय मिटायी। अलख निर्गुण जेहि वेद स्तुति करैं तिनहूं देव को हैं पिताई। भगवान तिनके परे श्वेत मूरति धरे भागको आन तिनको रहायी ॥ २ ॥ चार मुक्काम पर खंड सोरह कहै अंडको छोर ह्यां ते रहायी। अंडके परे स्थान अचिंत को निरखिया हंस जब उहां जायी। सहस औ द्वादशै रूह है सङ्गमें करत कल्लोल अनहद बजायी तासुके बदनकी कौन महिमा कहौं भासती देह अति नूर छायी ॥ ३ ॥ महल कंचन बने मणिक तामें जडे बैठ तहँ कलश अखंड छाजै। अचिंतके

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''मुहम्मद बोध'' के पृष्ठ 20

(756) की है। यह शब्द बाद में संशोधन कर्ता ने लिखा है, यह परमेश्वर कबीर जी की ही अमर वाणी है। इस में दस स्थानों का वर्णन है। जिनको मुकाम (स्थान अर्थात् लोक) कहा जाता है।

परमात्मा हजरत मोहम्मद जी को मिले थे। उनको भी दस मुकामों का ज्ञान कराया था। परन्तु हजरत मुहम्मद जी ने जो जबरिल फरिस्ते ने 7 मुकाम (स्वर्ग) दिखाए थे, उन्हीं को सत्य मानकर आगे कुछ नहीं सुना। मुहम्मद जी ने लाहूत मुकाम (स्वर्ग स्थान) को उत्तम मान रखा था। परमेश्वर कबीर जी ने बताया कि (1.) दाऊद जी को जब्बूर किताब प्राप्त हुई थी। उन्होंने ''नासूत मुकाम'' (स्वर्ग स्थान) को उत्तम माना, उसी में वे विराजमान हुए। (2.) मूसा जी को ''तौरत'' किताब प्राप्त हुई थी, उन्होंने ''मलकूत'' मुकाम (स्वर्ग स्थान) को उत्तम माना इसलिए उसी ''मलकूत'' मुकाम में निवास पाया। (3.) ईसा जी को ''इंजिल'' किताब प्राप्त हुई, उन्होंने ''जबरूत'' मुकाम को उत्तम मान उसी में निवास पाया। (4.) आप नबी मुहम्मद जी को ''फूरकान = कुर्रान'' किताब प्राप्त हुई है। आप जी ने ''लाहूत'' मुकाम को उत्तम मान रखा है। आप जी ''लाहूत'' मुकाम (स्वर्ग) में स्थान प्राप्त करोगे। कुर्रान में सीमित ज्ञान है। कुर्रान में पूर्ण ज्ञान नहीं है। आप जी को केवल सात मुकाम का ही ज्ञान है जिसको सात स्वर्ग कहते हैं। उस से ऊपर अन्य कई मुकाम (लोक = स्थान) हैं, उनका आप को ज्ञान नहीं। (यही प्रमाण संत गरीब दास जी की वाणी में है क्योंकि परमेश्वर कबीर जी ने उनको सर्व लोकों को दिखा कर वापिस छोड़ा था।

यहाँ इस पृष्ठ 20 (756) पर तथा 21 (757) पर कहा है कि ये चार मुकाम (स्थान-लोक) अण्ड अर्थात् एक ब्रह्मण्ड में हैं। यह काल का लोक है। कुल मुकाम 10 हैं। 1. नासूत 2. मलकूत 3. जबरूत 4. लाहूत 5. हाहूत 6. बाहूत 7. साहूत 8. राहूत 9. आहूत 10. जाहूत।

परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि जब धर्मदास जी को साथ लेकर सतलोक को चले तो रास्ते के सर्व मुकाम (स्थानों) का वर्णन किया है।

काल के सर्व मुकामों (स्थानों) को त्याग कर आगे गए। काल के लोक से परे परमात्मा सफेद शरीर में विराजमान है। यह काल ज्योति स्वरूप तो तीनों देवताओं (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) का पिता है। अण्ड (काल लोक) से आगे अचिन्त का लोक है। इससे आगे अक्षर पुरूष का लोक है। इस से आगे सतलोक प्रारम्भ हो जाता है। शेष पृष्ठ 21 (757) के नीचे पढ़ें।

बोधसागर 757 ( २१ )

परे स्थान सोहंका हंस छत्तीस तहँवा बिराजै । नूरका महल और नूरकी भूमि है तहां आनन्द सो द्वन्द्व भाजै। करत कल्लोल बहु भांतिसे संग यक हंस सोहंगके समाजै ॥ ४ ॥ हंस जब जात षट चक्रको वेधिके सातमुक्काममें नजर फेरा । सोहंगके परे सुरति इच्छा कही सहसवामन जहँ हंस हेरा। रूपकी राशिते रूप उनको बना नहीं उपमा इन्दु जौनिवेरा। सुरतिसे भेटिकै शब्दको टेकि चढ़ि देखि मुक्काम अंकूर केरा ॥ ५ ॥ शून्यके बीचमें बिमल बैकुण्ठ जहाँ सहज अस्थान है गैब केरा। नवो मुक्काम यह हंस जब पहुंचिया पलक बिलंब ह्वाँ कियो डेरा। तहाँसे डोरि मकरतार ज्यों लागिया ताहि चढि हंस गो दै दरेरा ॥ भये आनन्दसे फंद सब छोडिया पहुंचिया जहाँ सत्य-लोक मेरा ॥ ६ ॥ हंसिनी हंस सब गाय बजायकै साजिकै कलश वहि लेन आये । युगन युग बीछुरे मिले तुम आइकै प्रेम करि अङ्गसो अँग लाये। पुरुषने दर्श जब दीन्हिया हंसको तपनी बहु जनमकी तब नशाये । पलटिकै रूप जब एकसे कीन्हिया मनहुं तब भानु षोडश उगाये ॥ ७॥ पुहुपके द्वीप पीयूष भोजन करै शब्दकी देह जब हंस पायी पुहुपके सेहरा हंस औ हंसिनी सच्चिदानन्द शिर छत्रछायी । दिपैं बहु दामिनी दमक बहु भांति की जहाँ घन शब्दको घमंड लायी। लगे जहाँ वरषने गरज घन घोरिकै उठत तहँ शब्द धुनि अति सोहायी ॥ ८ ॥ सुन सोह हंस तहँ यूत्थके यूत्थ है एकही नूर यक रङ्ग रागै। करत बिहार मन भामिनी मुक्तिमें कर्म औ भर्म सब दूरि भागै । रङ्क और भूप कोइ परखि आवै नहीं करत कल्लोल बहु भाँति पागे। काम औ क्रोध मद लोभ अभिमान सब छाँड़ि पाखण्ड सत शब्द लागे ॥ ९ ॥ पुरुषके बदनकी कौन महिमा कहौं

★ यह फोटोकापी ''कबीर सागर'' के अध्याय ''मुहम्मद बोध'' के पृष्ठ 21 (757) की है। इसमें वर्णन है कि परमात्मा सर्व मुकामों (लोकों) का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि :- अचिन्त के लोक से आगे अक्षर पुरूष अर्थात् सोहं का लोक है। अक्षर पुरूष (सोहं मन्त्र की सीमा से परे) से आगे सत्यलोक प्रारम्भ हो जाता है। वहाँ पहुँचने से पहले छः चक्रों (मूल चक्र, स्वाद चक्र, नाभि चक्र, हृदय चक्र, कण्ठ चक्र, त्रिकुटी चक्र) को पार करके तथा सातवां

चक्र संहस्रार चक्र को पार करना पड़ता है। मुसलमान भाई इन्हीं 7 मुकामों तक सीमित हैं। सातवां चक्र जो संहस्रार चक्र है यहाँ ज्योति निरंजन का वास है। 7 मुकाम (लोक) काल की सीमा के अन्तर्गत आते हैं। सत्यलोक में प्रवेश करते ही प्रथम सुरति का मुकाम (द्वीप) है। सत्य पुरूष ने प्रथम बार 16 पुत्रों की उत्पत्ति की थी। उनमें ''सुरति'' का आठवां स्थान है। यह अलग द्वीप में रहता है। सतलोक में ही यह द्वीप है। इस के पश्चात् सर्व विवरण सत्यलोक के मुकामों (स्थानों) का है। अंकुर (आनन्द) का द्वीप, फिर सहज दास का द्वीप है। यहाँ से मकरतार की डोरी का कार्य प्रारम्भ होता है। फिर सत्यलोक के उस स्थान पर चले जाते हैं, जहाँ पर बहुत सँख्या में हंसात्माऐं (निर्विकार आत्मा को हंस आत्मा कहते हैं) जो पूर्ण मोक्ष प्राप्त है। वहाँ जो पहुँच जाता है उसके सर्व बन्धन छूट जाते हैं। केवल आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता है। वहां जाने के पश्चात् परमात्मा के दर्शन होते हैं। तब जीवात्मा की असंख्य युगों की प्यास भगवन दर्श की शान्त होती है।

वहाँ पर सत्यलोक के निवासी हंस-हंसनी (स्त्री-पुरूष) सिर पर कलश (घड़े) रखकर नाचते-गाते हुए मुझे लेने के लिए (धर्मदास जी बता रहे हैं) स्वागत के लिए आए। युगों-युगों के बिछड़े हंस आपस में प्रेम से अंग (शरीर) से अंग मिला कर (एक-दूसरो को सीने से लगाकर) मिले। जब पुरूष (परमेश्वर) ने मुझे दर्शन दिए तो असंख्यों युगों की तप्त (आग) शान्त हुई। वहां जाने के पश्चात् एक हंस के शरीर का 16 सूर्यों जितना प्रकाश हो जाता है तथा वहां पर अमृत भोज आत्माऐं करती हैं। उनका शरीर शब्द (अमर) होता है। फूलों का सेहरा अर्थात् मुकुट सब जीवात्माऐं पहनती हैं और परमात्मा के सिर पर छत्र लगा है। वहाँ पर वास्तविक शब्द की धुन बज रही है। वहाँ सत्यलोक में धनी और निर्धन का भेद नहीं है। वहाँ कोई विकार नहीं है। परमात्मा के शरीर की शोभा की तुलना यहाँ के लोक में किससे करूँ, उस के एक नाखून के प्रकाश के सामने करोड़ सूर्यों की रोशनी भी कम है। वहाँ पर वही जा सकता है जो वचन वंश (नाद = शिष्य) से दीक्षा प्राप्त है। कबीर जी ने बताया है कि यह सत्य भक्ति की राह (पंथ) आप जी को बता दी है।

जगत्में ऊपमांय कछु नाहिं पायी। चन्द्र औ सूर गण ज्योति लागै नहीं एकही नक्ख परकाश भाई। पान परवान जिन बंशका पाइया पहुंचिया पुरुषके लोक जायी। कहैं कब्बीर यहि भांति सो पाइहौ सत्य की राह सो प्रकट गायी॥ १०॥

देह नासूत स्वरे मलकूत और जीव जवरूतको रूह बखानै॥
अरबी में लाहूत कहै जेहि निराकार मानिके मंजिल्ल ठानै॥
आगे हाहूत लाहूत है बाहूत खुद खाविन्द जाहूत जानै॥
सोई श्री राम पन्नाइ सबै जग नाहि पन्नाह यह अता गानै॥

इस प्रकारसे सत्यके खोजियोंको तो ऐसे ग्रन्थोंका आध्यात्मिक अर्थही ग्रहण करने योग्य है। और स्थूल अर्थ तो स्थूल बुद्धिवाले पक्षपातियोंके लिये ही छोड देना उचित है।

इति